THE BOOK WAS DRENCHED

हेमचन्द्र-मोदी-पुस्तकमाला चतुर्थ पुष्प

स्वतन्त्र चिन्तन

[कर्नल इंगरसोलके व्याख्यान और निबन्ध]

अनुवादक

भदन्त आनन्द कौसल्यायन

सोल एजेण्ट

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय, बम्बई, ४

पुस्तकके विषयमें

छोटी हो या बड़ी, हर पुस्तककी अपनी एक जीवनी रहती है। इस पुस्तककी भी छोटी-सी जीवनी है।

सन् १९२७ में जब मैं प्रथम बार लंका गया तो वहाँके एक वृद्ध सज्जनने मुझे एक पुस्तक पढ़नेको दी—कर्नल इङ्गरसोलके व्याख्यान और निबंध। वह वर्ष मेरे मानसिक-संघर्षका वर्ष था। पूरा एक महीना मैंने, भिक्षुकी दीक्षा लेनी चाहिए अथवा नहीं, इस बारेमें विचार करनेमें बिता दिया। इस समय तो स्वयं आश्चर्य होता है; किन्तु यह बात सत्य ही है कि मेरे जीवनका वह पूरा एक महीना ईश्वरके ही खाते लिखा गया।

राहुलजी उस समय लंकामें थे। उन्हींकी प्रेरणा और सहायतासे मैं लंका पहुँचा था। शामको हम सैर करने जाते तो रोज़ ईश्वरके संबंधमें जितने तर्क सोचकर तैयार करता, राहुलजी शामको अपनी बुद्धिरूपी छैनीसे सभीको छिन्न-भिन्न कर देते। तब भी मेरा 'ईश्वर' मरता नहीं था। वह 'सहस्रशीर्षा' था।

एक दिन इसी पुस्तकका एक परिच्छेद पढ़ते पढ़ते मेरे 'ईश्वर'की हत्या हो गई। तर्ककी भित्तिपर खड़े 'ईश्वर' की हत्या करनेका श्रेय राहुलजीको है और भावनाकी भित्तिपर खड़े 'ईश्वर' की हत्या करनेका श्रेय इस ग्रंथको। उस दिन मैंने अपनी डायरीमें लिखा कि आज 'एक चींटीने एक हाथीको मार डाला।'

सन् १९२८ में मेरे मानसिक संसारका वह 'हाथी' मरा सो मरा। उसने फिर कभी सिर नहीं उठाया।

मैं समझता हूँ कि राहुलजीके किए जो कार्य उस समय नहीं हो सक रहा था, वह इस पुस्तकके कारण संभव हुआ। न होता तो पता नहीं कि आज मैं भिक्षु आनन्द कौसल्यायन न होकर क्या होता?

यह इस छोटी-सी पुस्तकका मेरे अपने जीवनसे संबंध है। जिन दो-चार पुस्तकोंकी मेरे जीवनपर अमिट छाप पड़ी, उनमेंसे यह एक है।

उसके लेखकके बारेमें जिज्ञासा स्वाभाविक है। उसका उत्तर श्री चार्ल्स टी. गोरहम इस प्रकार देते हैं—

"राबर्ट ग्रीन इङ्गरसोल न्यूयार्कके राज्यमें, ड्रेसडनमें ११ अगस्त १८३३ को पैदा हुआ। उसने १३ फरवरी १८६२ में ईवा पारकरसे विवाह किया। उसका शरीरांत २१ जुलाई १८९९ में हुआ।

"लड़कपनमें वह खुली हवामें खुले जीवनका आनन्द लेता रहा। उसके बारेमें जो किस्से सुननेको मिले हैं उनसे उसकी गिनती शरारती लड़कोंमें ही होगी। ऐसा लगता है कि वह इस बातमें भाग्यशाली था कि न तो उसे माता-पिताकी ही बहुत डाँट-डपट सुननेको मिली और न कालिजकी शिक्षा ही। उसने आगे चलकर स्वयं कहा कि कालेजकी शिक्षा पत्थरोंपर तो पालिश करती है किन्तु हीरोंकी रोशनीको मद्धम बनाती हैं। यह एक हीरेका ही कथन था।

"१८ वर्षकी आयुमें उसने क़ानून पढ़ना आरम्भ किया। कुछ दिनों तक एक स्कूलमें पढ़ाता रहा। फिर एक वकीलके यहाँ क्लर्क हुआ। २१ वर्षसे थोड़ी अधिक आयु होने पर स्वयं एक वकील बना।

"यद्यपि उस समयका पाठ्य-क्रम आजकी तरह कठोर नहीं था, तो भी इंगरसोल बड़ा परिश्रम करता था। कभी कभी पढ़ते पढ़ते ही वह सूर्योदय कर देता।

"उसकी असाधारण योग्यता स्वयं प्रकट होने लगी। मुवक्किलोंकी संख्या बढ़ी। बड़ी बड़ी फीसें उसकी खोज करने लगीं। दस वर्षसे भी कम समयमें वह इलिनायस राज्यका सरकारी वकील बन गया और अमरीकाके महान् वकीलोंमें एक गिना जाने लगा।

"जो पढ़ता वह उसे कभी नहीं भूलता था। मानव-स्वभावका उसे अद्भुत ज्ञान था। उपाय-कुशल, तीक्ष्ण-बुद्धि, सहज-बुद्धि। न्यायाधीशपर उसका ऐसा प्रभाव रहता, बुद्धि उसकी ऐसी पैनी रहती, भाषणशक्ति ऐसी प्रभावोत्पादक होती कि उस समयके योग्यतम वकीलोंको भी राबर्ट इंगरसोलके विरुद्ध खड़े होते हिचकिचाहट होती।

"१८६८ में वह एक रियासतकी गवर्नरीके लिये चुनाव लड़ा। उसके विरोधीने पहले तो कहा था कि वह चुनावमें खड़ा नहीं होगा; किन्तु पीछे कहा

कि एक ' नास्तिक ' का विरोध करनेके लिये ही वह खड़ा हो रहा है। यद्यपि इंगरसोल उस पदको बहुत चाहता था, लेकिन तो भी उसने अपने विचारोंको छिपाये रखकर उस ' पद ' को प्राप्त करनेका प्रयत्न नहीं किया। क्योंकि धर्मके विषयमें सन्देहवादी होना जनताकी रुचिका विषय नहीं था, इसलिये उसे वही दण्ड भुगतना पड़ा जो ईमानदार तथा स्वतन्त्र प्रकृतिको प्रायः भुगतना पड़ता है।

" थोड़े समय तक इङ्गरसोलने सैनिक-जीवन भी व्यतीत किया है। १८६१ के अन्तमें उसकी नियुक्ति कर्नलके पदपर हुई और उसी आगामी फरवरीमें उसने अपनी सेनाका नायक बनकर युद्धभूमिके लिये प्रस्थान किया। १८ दिसम्बर १८६२ को दुर्भाग्यसे उसकी छोटी-सी टुकड़ी दस गुणा अधिक सेनासे घिर गई। बहादुराना प्रयत्नोंके बावजूद इङ्गरसलको पीछे पैर हटाना पड़ा।

" सन् १८७५ और ७८ में अपनी यूरोपयात्राके परिणामस्वरूप इंगरसोल डिकन्ज और बर्नका भक्त बन गया। उससे भी अधिक शैक्सपीयरका, जिसके बारेमें उसका निबन्ध बहुत प्रसिद्ध हो गया है। वह नैपोलियनकी क़ब्रके पास खड़ा हुआ और आश्चर्यके साथ उसकी ओर देखता रहा। किन्तु वह नैपोलियन नामके इस राजकीय शक्ति और हत्याके अवतारकी जगह फ्रांसका एक सामान्य किसान होना अधिक पसन्द करता—उसकी तरह लकड़ीकी खडाऊँ पहनना, अँगूरकी बेलोंवाली झोपड़ीमें रहना, अपने बच्चों और अपनी स्त्रीके साथ। यह इङ्गरसोलके घेरलू जीवनके सौन्दर्य्यको व्यक्त करनेवाली ज़रा-सी बात है। उसका घर एक आदर्श घर था—कोमलता, उदारता और प्रकाशसे परिपूर्ण। उस आतिथ्य-पूर्ण छतके नीचे चार परिवार रहते थे और उसका द्वार किसी भी आगन्तुक मित्रके लिये सदा खुला था। उसकी आत्म-त्यागपूर्ण उदारताकी अनेक कथायें प्रचलित हैं।

" इङ्गरसोलके विचारोंके बारेमें किसीकी कुछ भी सम्मति हो, किन्तु यह स्वीकार करना पड़ेगा कि एक मनुष्यके नाते वह सच्ची प्रशंसाका अधिकारी था। उसके लेखोंसे सत्य और न्यायके प्रति उसकी भक्ति, स्वतन्त्रताके लिये उसके अनुराग तथा संसारकी सामाजिक दशा सुधारनेके लिये उसकी तड़पके पर्य्याप्त प्रमाण मिलते हैं।

"एक व्याख्याताके रूपमें निस्सन्देह इङ्गरसोलका बहुत ही ऊँचा दर्जा था। किसी समय और किसी भी ऋतुमें उसके श्रोताओंसे बड़ेसे बड़ा हाल भर जाता था। उसके व्याख्यानोंसे उसे जो आय होती थी वह संयुक्त राज्य अमरीकाके राष्ट्रपतिकी आयसे दुगनी रहती थी। यह भी अनुमान लगाया गया है कि अपने जीवनके पिछले पचास वर्षोंमें उसकी आय उसी समयके देशके श्रेष्ठतम बीस व्याख्याताओंकी आयसे भी अधिक थी। लेकिन इङ्गरसोलने कभी धन बटोरनेकी चिन्ता नहीं की। जिस समय उसका शरीरान्त हुआ उसने अपने पीछे बहुत थोड़ी-सी जायदाद छोड़ी। उसे अपने जीवन-कालमें दूसरोंको सुखी बनाना अच्छा लगता था। अनेक हृदयोंमें उसकी कृतज्ञतापूर्ण स्मृति ताजा है।"

\+ + + +

इस संग्रहमें इङ्गरसोलके अनेक उपलब्ध लेखों तथा व्याख्यानोंमेंसे केवल नौ दिये जा सके हैं। अनुवादकको स्वीकार करना चाहिये कि इनका अनुवाद उसके लिये सरल कार्य नहीं रहा है। भाषाकी कठिनाई विशेष नहीं थी। कठिनाई अपने पाठकोंकी दृष्टिसे थी। इंगरसोलने अमरीकामें जिन श्रोता-ओंके सम्मुख व्याख्यान दिये वे अधिकांशमें ईसाई थे। इस हिन्दी पुस्तकके पाठक अधिकांशमें गैर-ईसाई ही होंगे। ईसाई तथ्योंकी आलोचनाका गैर-ईसाइयोंके लिये क्या प्रयोजन ? पूर्वपक्षकी जानकारीके अभावमें उसका पूर्ण रूपसे हृदयङ्गम होना भी तो सहज नहीं। इस लिये अनुवाद-कार्यके साथ साथ अनुवादकको बीच बीचमेंसे ऐसे अंशोंकी जो 'सामान्य' नहीं लगे—कहीं कुछ पंक्तियाँ और कहीं कहीं अनुच्छेदके अनुच्छेद छोड़कर अनुवाद करना पड़ा है। फिर इस बातका भी ध्यान अनिवार्य था कि विषयकी संगतिमें कहीं कुछ अन्तर न पड़ जाय।

जिन्हें इस प्रकारके कार्यका कुछ अनुभव है वे ही जान सकेंगे कि अनु-वादक किस प्रकारकी मानसिक काट-छाँटकी ओर इशारा कर रहा है।

इङ्गरसोल धार्मिकोंके विरुद्ध कितना खड्गहस्त है, यह आगेके पृष्ठोंसे स्पष्ट होगा ही। अपने एक दूसरे भाषण अथवा निबन्धमें उसका कथन है—

"कुछ लोग पूछ सकते हैं कि क्या तुम हमारा धर्म छीन लेना चाहते हो ?

"मेरा उत्तर है, नहीं। मिथ्या-विश्वास धर्म नहीं है। बिना प्रमाणके किसी बातको मान लेना धर्म नहीं है। निराधार श्रद्धा धर्म नहीं है।

"किन्तु ईर्षालु पुरोहितका कहना है, तुम लोगोंका भावी-जीवन नष्ट करते हो।

"मैं लोगोंका भावी-जीवन नष्ट नहीं करता किन्तु मैं इसी दिशामें प्रयत्नशील हूँ कि ये 'धार्मिक' लोग लोगोंका यह वर्तमान-जीवन नष्ट न कर पायें।"

आशा है श्री इङ्गरसोलके ये भाषण तथा निबन्ध उनके उक्त कथनके प्रकाशमें ही पढ़े जायँगे।

श्री प्रेमीजी अपने संस्कारी हृदयके अनुरूप अपने प्रिय पुत्र स्वर्गीय हेमचन्द्रकी स्मृतिमें कुछ ऐसे साहित्यका प्रकाशन कर रहे हैं जैसा उसे विशेष रूपसे अच्छा लगता था अथवा लगता, यदि हेमचन्द्र अल्पजीवी न हुआ होता। इङ्गरसोलके व्याख्यान तथा निबन्ध मेरी समझमें वैसा ही साहित्य हैं। प्रेमीजीके पूछने पर जब मैंने इङ्गरसोलकी बात सुझाई तो प्रेमीजीने इङ्गरसोलकी एक प्रति बम्बईसे खरीद कर मेरे पास भेज दी। उनका प्रेम-पूर्ण अनुरोध था कि मैं ही इसका अनुवाद भी कर डालूँ।

मुझे प्रेमीजीने इस पुण्य-कार्यमें अपना सहयोगी बनाया, इसके लिये मैं प्रेमीजीका आभारी हूँ।

आज-कल करते करते, थोड़ा थोड़ा करते करते, अनुवाद-कार्य्यमें काफी समय लग गया। इसकी मुझे चिन्ता नहीं। साहित्यिक-कार्यमें जल्द-बाज़ी ही चिन्ताका विषय होना चाहिये।

पुस्तकमें अनेक जगह मुझे कुछ पाद-टिप्पणियाँ देनेकी आवश्यकता अनुभव हुई। अपनी इस इच्छाकी पूर्तिके लिए किसी अगले संस्करणकी प्रतीक्षा करनी होगी।

मेरे कुछ छुट-भइयोंने भी बीच बीचमें पुस्तकके अनुवादको लिखा है। उन सबको हार्दिक धन्यवाद।

अनुवाद बुरा नहीं बन पड़ा है, ऐसी अनुवादककी अपनी धारणा है। पाठकोंको यदि अच्छा लगा तो इसका श्रेय उनकी सहृदयताको ही देना होगा।

रोहितकुटीर,
हिन्दी-नगर, वर्धा,
२४-३-५०

आनन्द कौसल्यायन

हेमचन्द्र-मोदी-पुस्तकमाला

(पूर्व प्रकाशित ग्रन्थ)

१ **भारतीय संस्कृति और अहिंसा**—इसकी समालोचनामें 'ज्ञानोदय' ने लिखा है—" इसके लेखक आचार्य धर्मानन्द कोसम्बी ज्ञानार्जनके हेतु घर-बार छोड़कर कई बार दर दर भटके थे। बौद्धिक ईमानदारी उन्हें राष्ट्रीय आन्दोलनकी परिधिमें खींच ले आई। पांडित्यने सोवियत रूस और अमेरिकाके विश्वविद्याकेन्द्रोंतक पहुँचाया। उनका पुरुषार्थ अनथक था और कल्पना अद्भुत। अनुशीलन उनका विशाल था। सचाई प्रकट करनेमें वह अत्यन्त ही निर्भीक थे। वे कहते हैं—

" हमारे देशमें पार्श्वनाथ और बुद्धदेवने अहिंसाके प्रवाहको बहुजन-हितकी ओर मोड़ा, पर राजनीतिक्षेत्रमें उसका प्रवेश न होनेके कारण वह साम्प्रदायिकताके गर्तमें जाकर रुक गया और उसके चारों ओर पुराणोंका जंगल बढ़ गया। उस प्रवाहको पुनः गति देकर उसे राजनीतिक क्षेत्रकी ओर मोड़नेका महात्मा गाँधीका प्रयत्न सचमुच अभिनन्दनीय हैं। पर दिशाभ्रम होनेके कारण वह बीचमें ही रुक गया। वह एक प्रकारसे अच्छा ही हुआ। कारण वह उसी प्रकार बढ़ता जाता तो राष्ट्रीयताके गर्तमें गिरकर हानिकारक हुआ होता। जब अहिंसाको समाजवादियोंका सहयोग प्राप्त होगा तभी उसका यह प्रवाह उचित दिशामें बढ़ेगा और मानव-जातिके कल्याणके लिए वह कारणीभूत होगा। "

शुरूके परिच्छदोमें वैदिक संस्कृति और पौराणिक संस्कृतिकी निर्भीक आलो-चना एवं समीक्षा की गई है। दृष्टान्तों और उद्धरणोंसे एक एक विषयको भली भाँति समझाया गया है। प्राग्वैदिक संस्कृतियोंका हमारी संस्कृतिपर क्या प्रभाव पड़ा, इसपर भी कोसम्बीजीने गहराईसे सोचा है। पाश्चात्योंकी संस्कृतिका उदय किस प्रकार हुआ, उसने हिन्दुस्तानमें किस प्रकार प्रवेश किया और हिन्दू समाजपर उसका क्या प्रभाव पड़ा, इन सभी बातोंका विचार किया गया है। सामन्तवाद, साम्राज्यवाद, धनतंत्रवाद, पूँजीवाद, अधिनायकशाही, साम्य-वाद आदि सभीपर प्रकाश डाला गया है। **पृष्ठ संख्या २८८, मूल्य २ रु.**

२ हिन्दू-धर्मकी समीक्षा—वैज्ञानिक दृष्टिसे अभी तक हिन्दू धर्मकी समीक्षा नहीं हुई है। आज जिसे अधिकांश हिन्दू 'धर्म' कहकर मानते हैं, वह कोई 'क्रीड़' न होकर अनेक अंध-परंपराओं, रूढ़ियों और अंधे विश्वासोंका एक बेमेल घोटाला-सा है। विद्वान् लेखकने नई और स्वतंत्र चिन्तनकी दृष्टिसे तथा ऐतिहासिक समाजशास्त्रकी दृष्टिसे इस गहन विषयपर विचार किया है। प्राचीन भारतीय तत्त्ववेत्ताओंकी धर्मव्याख्याओं और समीक्षाओंकी लेखकने आधुनिक ढंगकी मीमांसा की है। पूर्वपरंपराओंके समर्थनकी थोथी पांडित्य-प्रकाशिनी प्रवृत्तिको छोड़कर लेखकने प्राचीन मूल्योंकी शास्त्रीय ढंगसे, किन्तु तर्क और बुद्धिकी कसौटीपर छान-बीन की है। लेखकके शब्दोंमें 'जो पुराना जगत गलेका ठेंगुर बनकर मनुष्यकी प्रगतिमें रुकावट डाल रहा है, अनेक पुरोगामी तत्त्वचिन्तक और कर्त्तृत्वशाली लोग उसका विनाश करनेवाले शस्त्र-रूप विचारशास्त्र निर्माण करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। उन शस्त्रोंसे ही पुराने जगत्के साथ लड़ते-लड़ते ऐसे एक नये जगतको गढ़ना है जिनमें प्राचीन और वर्तमान समाजकी मानसिक और भौतिक गुलामीका कहीं पता भी न चले, सारे समाज-घटकोंको एक-सा स्वातंत्र्य प्राप्त हो और उनके कर्त्तृत्वको पूर्ण विकासका अवसर मिले।' निश्चय ही इस दिशामें यह पुस्तक एक सबल और प्रेरक विचार-शास्त्र साबित होगी। **पृष्ठ संख्या १८८** **मूल्य १। रुपया**

३ जडवाद और अनीश्वरवाद—धर्म और ईश्वरके नामसे खड़ा किया गया गोरख-धंधा कुछ ऐसा विचित्र है कि उसमें प्रत्येक मानव जन्मके साथ ही उलझ जाता है और मृत्यु आने तक उससे छुटकारा नहीं पाता। धर्मके मामलेमें तर्क करना, सन्देह करना पाप समझा जाता है। बुद्धि, विवेक और तर्कके साथ उसका कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। इस गोरख-धंधेसे मुक्ति दिलानेके कार्यमें जडवादसे बड़ी सहायता मिलेगी। इसके कुछ अध्याय ये हैं—जडवाद और विज्ञानका सम्बन्ध, ज्ञान और ज्ञेयके सम्बन्ध, जगत् सत्य है, ज्ञात सत्य और अज्ञात सत्य, सर्वज्ञता असंभव, प्रत्यक्ष प्रतीति ही सर्वश्रेष्ठ ज्ञान है, ज्ञानका क्रम, देहात्म प्रत्यय और देहात्मवाद, द्रव्यका स्वभाव और उसकी रचना, ईश्वरके अस्तित्वका प्रश्न, उसके तार्किक प्रमाणोंकी मीसांसा, विज्ञान और ईश्वर। आदि

पृष्ठ संख्या १२४ **मूल्य १ रुपया**

विषय-सूची

स्वतंत्र चिन्तन

सत्य

असंख्य वर्षोंमें अपनी इच्छाओंकी पूर्ति तथा अपनी लालसाओंको सन्तुष्ट करनेके अनन्त प्रयत्नोंद्वारा आदमीने शनैः शनैः अपने दिमागको विकसित किया है, अपने अगले दो पाँवोंको हाथोंका रूप दिया है और वह अपने अन्धेरे दिमागमें तर्ककी चन्द किरणोंको स्थान दे पाया है।

उसके मार्गमें अज्ञान बाधक हुआ, भय बाधक हुआ, गलतियाँ बाधक हुई। तो भी वह आगे बढ़ा, किन्तु उसी हद तक जिस हद तक वह यथार्थ 'सत्य' को पा सका। असंख्य वर्षोंतक उसने टटोला है, वह रेंगकर चला है, उसने संघर्ष किया है, वह ऊपर उठा है और उसने प्रकाशकी ओर बढ़नेके लिए ठोकरें खाई हैं। उसका मार्ग अवरुद्ध हुआ है, उसे रुकना पड़ा है, उसने धोखा खाया है, ज्योतिषियोंसे, अवतारोंसे, पोपोंसे, पुरोहितोंसे। उसके साथ सन्तोंने विश्वासघात किया है, उसे अवतारोंने पथ-भ्रष्ट किया है, उसे शैतानों और भूत-प्रेतोंने डराया है, उसे राजाओं और महाराजाओंने गुलाम बनाया है, उसे वेदियों तथा सिंहासनोंने लूटा है।

शिक्षाके नामपर उसका दिमाग गलतियोंसे, चमत्कारोंसे, झूठोंसे, असम्भव घटनाओंसे, बेहूदी और बुरी बातोंसे भर दिया गया है। धर्मके नामपर उसे नम्रताके साथ अभिमान, प्रेमके साथ घृणा तथा क्षमाके साथ साथ बदला लेनेकी शिक्षा दी गई है।

लेकिन संसार बदल रहा है। हम इन असभ्य धर्मग्रन्थों और उनके पाशविक सिद्धान्तोंसे तंग आ गये हैं।

जीवनकी गलतियों और अन्धकारके बीच प्रकाशमान सत्यको देखनेसे बढ़-कर, अधिक महत्त्वपूर्ण कुछ नहीं है।

सत्य संसारका मानसिक धन है।

सत्यकी खोजसे श्रेष्ठतर कोई धंधा नहीं।

उन्नतिके चमकते हुए गुंबदका आधार सत्य है, ढाँचा सत्य है।

सत्य प्रसन्नताकी जननी है। सत्य सभ्य बनाता है, श्रेष्ठ बनाता है, पवित्र बनाता है। सबसे ऊँची महत्त्वाकांक्षा जो किसीकी भी हो सकती है वह सत्य ज्ञानकी है।

सत्य आदमीको परोपकार करनेका अधिकसे अधिक सामर्थ्य देता है। सत्य तलवार भी है, ढाल भी है। यह आत्माका पवित्र प्रकाश है।

जो आदमी किसी सत्यका पता लगाता है वह अन्धकारमें प्रकाश फैलाता है।

सत्य खोज करनेसे मिलता है, तजर्बे करनेसे मिलता है, तर्क करनेसे मिलता है।

हर आदमीको उसकी इच्छाके अनुसार—उसकी योग्यताके अनुसार खोज करनेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिये। संसारका वाङ्मय उसके सामने खुला होना चाहिये—कोई बात निषिद्ध नहीं, मना नहीं, छिपी नहीं। कोई विषय ऐसा नहीं रहना चाहिये, जो इतना अधिक 'पवित्र' माना जाय कि उसे समझानेका प्रयत्न ही न किया जा सके। हर आदमीको अपने स्वतन्त्र परि-णामोंपर पहुँचने और उन्हें ईमानदारीके साथ व्यक्त करनेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिये।

जो किसी भी खोजीको इस लोक या परलोकमें दण्डका भय दिखाता है, वह मानव-जातिका शत्रु है। और जो किसी खोजीको 'सच्चिदानंद' में लीन हो जानेकी रिश्वत देता है, वह अपने मानव-बन्धुओंके साथ विश्वासघात करता है।

बिना सच्ची मुक्तिके सच्ची खोज हो ही नहीं सकती—देवताओं और आदमियोंके भयसे मुक्ति।

इस लिये सारा खोजका कार्य्य—सारे तजर्बे—तर्कके प्रकाशमें होने चाहिये।

हर आदमीको अपने प्रति ईमानदार होना चाहिये—अपने भीतरी प्रकाशके प्रति। हर आदमीको अपने ही मस्तिष्ककी प्रयोगशालामें और केवल अपने

लिये संसार भरके सिद्धान्तों—इन तथाकथित वास्तविकताओंका परीक्षण करना चाहिये। तर्कानुकूल सत्य ही एक मात्र उसका पथप्रदर्शक और स्वामी होना चाहिये।

इस प्रकार जो भी 'सत्य' लगे उसे प्रेम करना मानसिक गुण है—बुद्धिकी पवित्रता है। यही सच्चा मनुष्यत्व है। यही स्वतन्त्रता है।

धार्मिक संस्थाओं, महन्तों, दलों, राजाओं तथा देवताओंकी आज्ञासे अपनी बुद्धिकी अवहेलना करना गुलाम होना है, दास बनना है।

यह केवल ठीक ही नहीं है, किन्तु यह तो हर आदमीका कर्तव्य है कि वह सोचे, अपने लिये स्वयं खोज करे; और यदि कोई आदमी उसे डराकर अथवा बल प्रयोग करके उसके मार्गका बाधक बनता है तो वह आदमी अपने मानव-बन्धुओंको पतनोन्मुख और दास बनानेके लिए सभी कुछ कर रहा है।

आदमीको चाहिये कि वह अपने भीतरकी इस सचाईको सबसे अधिक मूल्यवान् हीरेकी तरह सुरक्षित रखे।

उसके सामने जो भी प्रश्न आयें उसे बिना पक्षपातके उनपर विचार करना चाहिये—राग-द्वेषसे रहित होकर बिना इच्छा या भयके वशीभूत हुए। उसका उद्देश्य—एक मात्र उद्देश्य सत्यकी प्राप्ति होना चाहिये। उसे जानना चाहिए कि यदि वह बुद्धिकी बात सुने तो सत्यसे कभी खतरा नहीं, असत्यसे है। उसे प्रमाणोंको, तर्कोंको ईमानदारीसे बुद्धिकी तुलापर रखकर तोलना चाहिये; ऐसी तुलापर जो रागद्वेषसे प्रभावित न हो। उसे किसी शब्द-प्रमाणकी, किसी बड़े नामकी, परम्पराकी अथवा सिद्धान्तकी परवाह नहीं करनी चाहिये। उसे किसी भी ऐसी चीजकी परवाह नहीं करनी चाहिये जिसे उसकी बुद्धि सत्य न मानती हो।

अपने संसारका उसे ही स्वयं महाराजा होना चाहिये, और उसकी अपनी आत्माके सिरपर ही सुनहरी ताज रहना चाहिये। उसके साम्राज्यमें किसी प्रकारके दबाव, किसी प्रकारके भयके लिए स्थान ही नहीं होना चाहिए।

पक्षपात, अभिमान, घृणा, जुगुप्सा, सत्य और उन्नतिके शत्रु हैं।

सत्यका यथार्थ खोजी 'प्राचीन' को 'प्राचीन' होनेके कारण स्वीकार नहीं करता और 'नवीन' को 'नवीन' होनेके कारण अस्वीकार नहीं करता। वह किसीकी बातको केवल इस लिए स्वीकार नहीं करता कि वह मर गया है,

और किसीके भी कथनका केवल इस लिए खण्डन नहीं करता कि वह जीवित है। उसके लिए किसी भी कथनका मूल्य इसी बातमें है कि वह कितना तर्कानुकूल है। वह यह नहीं देखता कि बात किसने कही है। बात कहनेवाला एक राजा भी हो सकता है, एक गुलाम भी हो सकता है—एक दर्शनिक भी, एक नौकर भी। इससे कथनकी सत्यता अथवा तर्कानुकूलता न बढ़ती है, न घटती है। कथनका मूल्य कहनेवालेके यश अथवा पदसे सर्वथा स्वतन्त्र है।

केवल झूठको ही यश और पदकी तथा वर्दियों और बड़ी पगड़ियोंकी सहायताकी आवश्यकता होती है।

जो बुद्धिमान् हैं, जो वास्तवमें ईमानदार और विचारवान् हैं, वे संख्यासे अथवा बहुमतसे प्रभावित या शासित नहीं होते।

वे उसीको स्वीकार करते हैं जिसे वे वास्तवमें विश्वास करते हैं कि यह सत्य है। उन्हें पूर्वजोंकी सम्मतियोंकी कुछ परवाह नहीं होती, मतोंकी कुछ परवाह नही होती, सिद्धान्तोंकी कुछ परवाह नहीं होती यदि वे उन्हें अपनी बुद्धिके अनुकूल नहीं जँचते।

सभी दिशाओंमें वे सत्यकी खोज करते हैं, और जब वह उन्हें प्राप्त होता है तो आनन्दके साथ स्वीकार करते हैं—अपनी पहलेकी काल्पनिक सम्मतियोंके बावजूद—पक्षपात और घृणाके भावोंके बावजूद।

ईमानदार और बुद्धिमान आदमियोंका एक यही रास्ता है। उनके लिए और दूसरा कोई रास्ता है ही नहीं।

मानव-प्रयत्नोंकी सभी दिशाओंमें आदमी सत्यकी खोजमें लगे हैं— यथार्थ बातोंकी खोजमें। राजनीतिज्ञ संसारके इतिहासको पढ़ता है, सभी जातियोंकी संख्या-गणनाका संग्रह करता है, इसलिए कि उसकी अपनी जाति अतीतकी गलतियोंसे बची रहे। भूगर्भ-वेत्ता यथार्थ बातोंकी जानकारीके लिये चट्टानोंमें पैठता है—पर्वतोंपर चढ़ता है, अविद्यमान ज्वालामुखी-पर्वतोंको देखने जाता है, द्वीपों तथा महाद्वीपोंको लाँघता है—इसलिए कि उसे संसारके इतिहासका कुछ पता लग जाय। वह सत्य चाहता है।

रसायनशास्त्रज्ञ, चीजें गलानेके पात्र और नलीके साथ असंख्य तजर्बे करके पदार्थोंके गुणोंका पता लगानेका प्रयत्न करता है—प्रकृतिने जो कुछ छिपा रखा है उसे प्रकट करनेका।

बड़े बड़े यन्त्र-वेत्ता ठोस-वस्तुओंके संसारमें रहते हैं। वे प्राकृतिक साधनों-द्वारा प्रकृतिपर विजयी होना चाहते हैं और चाहते हैं उसकी शक्तियोंका उपयोग करना। वे सत्य चाहते हैं—यथार्थ बातें।

चिकित्सक और शल्य-कर्मी निरीक्षण, तजर्बे और तर्कका आश्रय लेते हैं। वे मानव-शरीरसे—मांसपेशियों, रक्त और रगोंसे—दिमागकी आश्चर्यकर बातोंसे परिचित हो जाते हैं। वे सत्यके अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहते।

सभी विज्ञानोंके विद्यार्थी यही करते हैं। वे चारों ओर यथार्थ बातोंकी तलाशमें रहते हैं और यह सबसे बड़े महत्त्वकी बात है कि उन्हें इस प्रकार जिन यथार्थ बातोंकी जानकारी प्राप्त होती है वे उन्हें संसारको दे देते हैं।

जितनी उनकी बुद्धि है उतना ही उनका साहस भी होना चाहिये। भले ही जो मर गये हैं, उन्होंने कुछ भी कहा हो; भले ही जो जीते हैं उनका कुछ भी विश्वास हो, उन्हें बताना चाहिये कि वे क्या जानते हैं। उनमें मानसिक साहस होना चाहिये।

यदि आदमीके लिये सत्यकी प्राप्ति अच्छी बात है—यदि उसके लिए यह अच्छा है कि वह ईमानदारीसे विचार करे और उदारताका बर्ताव करे—तो दूसरोंके लिए भी यह अच्छी बात है कि वे उस सत्यको जो इस प्रकार प्राप्त हुआ है, जानें।

हर आदमीमें अपने विचारको ईमानदारीसे प्रकट करनेका साहस होना चाहिये। इससे सत्यको प्राप्त करनेवाला और उसे प्रकट करनेवाला जनताका उपकार करता है।

जो ईमानदाराना विचारोंको प्रकट करनेमें बाधा डालते हैं या डालनेका प्रयत्न करते हैं वे सभ्यताके शत्रु हैं—सत्यके शत्रु हैं। उस आदमीसे बढ़कर स्वार्थी और निर्लज्ज कोई दूसरा हो नहीं सकता जो अपने विचारोंको तो स्वतन्त्रतापूर्वक प्रकट करनेका अधिकार चाहता है किन्तु दूसरोंको वही अधिकार नहीं देना चाहता।

ऐसा कहनेसे काम नहीं चलेगा कि कुछ बातें इतनी 'पवित्र' हैं कि आदमीको उनके बारेमें छान-बीन करने और उनकी परीक्षा करनेका अधिकार ही नहीं।

कौन जानता है कि वे 'पवित्र' हैं? क्या कोई भी चीज 'पवित्र' हो

सकती है जिसके बारेमें हम यह नहीं जानते कि वह सत्य भी है या नहीं ?

शताब्दियों तक स्वतन्त्र-वाणीको परमात्माके लिए अपमान-जनक समझा गया। ईमानदारीसे अपने विचार प्रकट करनेसे बढ़कर कोई बात अधिक 'नास्तिक' नहीं समझी गई। युगों तक बुद्धिमानोंके मुँह सिले रहे। जिन मशालोंको सत्यने जलाया, जिन्हें साहस ऊपर उठाकर ले चलता था, वे रक्तसे बुझा दी गईं।

सत्य सदैव वाणीकी स्वतन्त्रताका पक्षपाती रहा है—उसने सदैव चाहा है कि उसका परीक्षण हो—उसकी सदाकी इच्छा रही है कि लोग उसे जानें और समझें। स्वतन्त्रता, विचार-परिवर्तन, ईमानदारी, परीक्षण, साहस—ये सब सत्यके मित्र और सहायक हैं। सत्यको प्रकाश और खुला क्षेत्र प्रिय है। यह इन्द्रियोंको—निर्णय कर सकना तथा बुद्धिपूर्वक विचार कर सकना आदि जितनी भी मनकी ऊँची और श्रेष्ठतर शक्तियाँ हैं उनको—अपील करता है। यह उत्तेजनाको शान्त करता है, पक्षपातको नष्ट करता है और बुद्धि-रूपी प्रदीपको और भी अधिक प्रज्वलित करता है।

यह आदमीको रेंगनेके लिए नहीं कहता। इसे अज्ञानियोंकी पूजाकी अपेक्षा नहीं। यह भय-त्रस्तोंकी प्रार्थनायें या स्तुतियाँ नहीं सुनना चाहता। यह प्रत्येक मनुष्यसे कहता है—

"अपने लिए स्वयं सोचो। देवताकी तरह स्वतन्त्र रहो और अपने विचारोंको ईमानदारीसे प्रकट कर सकने लायक शील और साहस रखो।"

हमें सत्यका अनुकरण क्यों करना चाहिये ? हमें खोज क्यों करनी चाहिये ? तर्क क्यों करना चाहिये ? हममें मानसिक ईमानदारी और उदारता क्यों होनी चाहिये ? हमें क्यों अपने विचारोंको ईमानदारीसे प्रकट करना चाहिये ? इन सब प्रश्नोंका एक ही उत्तर है—मानवताके कल्याणके लिए।

मस्तिष्कका विकास होना चाहिये। संसारको सोचना सीखना चाहिये। वाणी स्वतन्त्र रहनी चाहिये। संसारको सीखना चाहिये कि अंधी श्रद्धा कोई गुण नहीं है, और जब तक बुद्धि सन्तुष्ट नहीं होती तब तक किसी प्रश्नका निर्णय नहीं होता।

इस प्रकार मनुष्य प्रकृतिकी बहुत-सी बाधाओंको जीत लेगा। वह अनेक रोगोंको अच्छा कर लेगा या उनसे बचा रहेगा। वह दुख-दर्दमें कमी करेगा।

वह आयुष्य बढ़ायेगा, जीवनको श्रेष्ठ और हरा भरा बनायेगा। प्रत्येक दिशामें वह अपनी शक्ति बढ़ायेगा। वह अपनी इच्छाओंकी पूर्ति करेगा, रसोंका स्वाद चखेगा। वह ऐसी व्यवस्था करेगा कि सभीको छाजन और पहननेको वस्त्र मिलें, भोजन और उसे पकानेके लिए जलावन मिले, घर मिलें और उनमें प्रसन्नतापूर्वक रहना मिले।

वह अभाव और अपराधको संसारमें रहने न देगा। वह भयके विषैले सर्पों और मिथ्या-विश्वासके राक्षसोंको मार डालेगा। वह बनेगा बुद्धिमान, स्वतन्त्र, ईमानदार और शान्त।

आकाशका महाराजा उसके सिंहासनसे उतार दिया जायगा—नरककी आग बुझा दी जायगी। 'पवित्र' भिखमंगे ईमानदार और उपयोगी आदमी बन जायेंगे। ढोंगी दूसरोंको डराकर उनसे रकमें न उगाह सकेंगे। असत्य कथनोंको 'पवित्र' न समझा जायगा। किसी दूसरे जीवनके लिये इस जीवनका बलिदान नहीं किया जा सकेगा। देवी-देवताओंसे प्रेम करनेके बजाय मनुष्य परस्पर एक दूसरेसे प्रेम करेंगे। आदमी जो उचित समझेगा वही करेगा, किन्तु किसी पर-लोकमें कुछ प्रातिकी आशासे नहीं, परन्तु इसी लोकमें प्रसन्न रहनेके लिये। आदमी जान जायगा कि एक मात्र प्रकृति ही सच्चा 'इलहाम' है। उसे स्वयं प्रयत्न करके सितारों और बादलोंद्वारा कही गई कहानियोंको पढ़ना सीखना चाहिए। उसे पत्थरों और पृथ्वी, समुद्र और दरिया, वर्षा और अग्नि, पौधों और उनके फूल—जीवनके जितने विविध रूप हैं, तथा संसारकी और भी जितनी वस्तुयें तथा शक्तियाँ हैं—सभीके द्वारा कही गई कहानियोंको पढ़ना सीखना चाहिये।

जब वह इन कथाओंको पढ़ेगा, इन रिकार्डोंको समझेगा—तब उसे पता लगेगा कि आदमीको स्वयं अपने ऊपर भरोसा करना चाहिये क्योंकि प्रकृतिके परे कुछ भी नहीं है और आदमी स्वयं ही अपना 'ईश्वर' है।

विचार-स्वातन्त्र्यके निकट—अपने आत्म-सम्मानको सुरक्षित रखनेके विरुद्ध—अपने भीतरकी सचाईको एकदम स्वच्छ रखनेके विरुद्ध किसी तर्ककी कल्पना नहीं की जा सकती।

२

जो कुछ मैंने कहा है वह सब सच प्रतीत होता है, लगभग स्वयं-सिद्ध। तुम प्रश्न कर सकते हो कि कौन है जो कहता है कि गुलामी स्वतन्त्रतासे अच्छी है ? मैं आपको बताता हूँ:—

जितने बड़े बड़े महन्त और पुरोहित हैं, जितने कट्टरपन्थी धर्म हैं, जितने पुजारी हैं—वे सब कहते हैं कि उनके पास परमात्मासे प्राप्त किया हुआ 'इलहाम' है।

प्रोटैस्टैण्ट मतवाले कहते हैं कि प्रत्येक आदमीका यह कर्तव्य है कि वह बाइबलको पढ़े, समझे और विश्वास करे कि यह 'इलहामी' किताब है। किन्तु यदि वह ईमानदारीसे इस परिणामपर पहुँचता है कि बाइबल 'इलहामी' किताब नहीं है और अपने दिमागमें इसी धारणाको लिये मर जाता है तो वह सदैवके लिए दुःख भोगेगा। वे कहते हैं 'पढ़ो' लेकिन साथ ही कहते हैं—"या तो विश्वास करो, या सदाके लिये विनाशको प्राप्त हो।"

"चाहे बाइबल आपको कितनी ही तर्कविरुद्ध लगे आपको उसे मानना ही होगा। चाहे उसमें वर्णित 'चमत्कार' कितने ही असम्भव लगें, तो भी उन्हें मानना होगा। चाहे उसमेंके नियम कितने ही निर्दय लगें, तुम्हें स्वीकार करना होगा।"

इसे धर्म विचार-स्वातन्त्र्य कहता है।

हम बाइबल पढ़ते हैं, किन्तु हमपर परमात्माका भय और उसकी टेढ़ी नजर रहती है। हमें नरककी आगकी चमकमें बैठकर पढ़ना होता है। एक ओर राक्षस है जिसके हाथमें पीड़ा देनेके अनेक साधन हैं, दूसरी ओर 'परमात्मा' है जो हमें अनन्त कालके लिये विनाशके गढ़ेमें ढकेलनेको तैयार है। और धर्म कहता है: "तुम अपना चुनाव करनेमें स्वतन्त्र हो। परमात्मा नेक है। वह तुम्हें अपना चुनाव करनेकी स्वतन्त्रता देता है।"

बड़े बड़े पोप और पादरी ग़रीब लोगोंसे कहते हैं: "तुम्हें बाइबल पढ़नेकी आवश्यकता नहीं। तुम इसे समझ नहीं सकते। इसी लिये इसे इलहामी किताब कहा गया है। हम इसे तुम्हारे लिये पढ़ देंगे। जो हम कहें उसे तुम्हें मानना चाहिये। हमारे हाथमें नरककी चाबियाँ हैं। यदि हमारा खण्डन

करोगे तो तुम सदाके लिये परमात्माके जेल-खानेके बन्दी हो जाओगे।"

यह कैथोलिक धर्मकी 'स्वतन्त्रता' है।

और ये जितने पादरी और पुजारी हैं, इन सबका आग्रह है कि बाइबलका दर्जा मानवी तर्कके ऊपर है। और प्रत्येक आदमीका कर्तव्य है कि वह इसे माने—चाहे वह इसे सच्चा समझे चाहे न समझे, बिना इस बातका तनिक भी विचार किये कि यह तर्कानुकूल तथा बुद्धिगम्य है या नहीं।

उसका कर्तव्य है कि वह अपने आत्म-मन्दिरमेंसे बुद्धिकी देवीको निकाल बाहर करे और भयरूपी नागके सामने जो गुंडरी लगाये बैठा है—सिर झुका दे।

इसे धर्म 'सदाचार' कहता है।

ऐसी अवस्थामें विचारका क्या मूल्य हो सकता है? परमात्माके शापरूपी-लूके झोंकेमें दिमाग़ रेगिस्तान बन जाता है।

लेकिन, इतना ही ही नहीं है। आदमीसे तर्कका आधार छुड़ा देनेके लिए 'मज़हब' केवल अनन्त दुख-दर्दका भय ही नहीं दिखाता, किन्तु अनन्त-काल तक आनन्दपूर्वक रहनेका पुरस्कार मिलनेकी भी बात कहता है।

जो विश्वास करते हैं उन्हें यह स्वर्गके अनन्त मज़ोंकी बात कहता है। यदि डरा नहीं सकता तो यह रिश्वत देता है। इसे भय और लालचका भरोसा है।

बुद्धिमान आदमियोंद्वारा आदृत होनेके लिए किसी भी धर्मका आधार सुनिश्चित बातें होनी चाहिए। उसे उत्तेजना अथवा भय या लालचका नहीं, बुद्धिका सहारा लेना चाहिए। उसे कहना चाहिये कि मनकी सारी शक्तियाँ और सारी इन्द्रियाँ एक जगह इकट्ठी विचार करें और जो कुछ भी धर्मका कथन है उसपर बिना पक्षपातके, बिना भयके सम्पूर्ण सचाईके साथ विचार करें।

लेकिन ईसाई-मज़हब कहता है—"भगवान् ईसा मसीहपर विश्वास लाओ और तुम मुक्त हो जाओगे।"[1] बिना इस विश्वासके मोक्ष नहीं। मोक्ष विश्वासका पुरस्कार है।

विश्वासका आधार होता है, और सदैव होना चाहिये प्रमाण। पुरस्कार

---

१. सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥—गीता

मिलनेकी आशा 'प्रमाण' नहीं है। इससे कोई नया प्रकाश नहीं मिलेगा। इससे कोई बात सिद्ध नहीं होती। किसी शङ्काका समाधान नहीं होता। किसी सन्देहकी निवृत्ति नहीं होती।

क्या यह ईमानदारीकी बात है कि किसीको किसी बातका विश्वासी बनानेके लिए पुरस्कार मिलनेकी आशा दिलाई जाये ?

यदि कोई आदमी किसी न्यायाध्यक्षको कोई फैसला करनेके लिए अथवा कोई निर्णय देनेके लिये कुछ देता है तो वह अपराधी गिना जाता है। क्यों ? क्योंकि वह न्यायाध्यक्षको इस बातकी प्रेरणा देता है कि वह कानूनके अनुसार, वास्तविकताके अनुसार, उचित निर्णय न देकर रिश्वतके अनुसार निर्णय दे।

रिश्वत कोई 'प्रमाण' नहीं है।

इसी प्रकार ईसा-मसीहके बारेमें यह कहना कि वह विश्वासियोंको पुरस्कृत करेंगे, रिश्वत देना है। जो कहता है कि वह विश्वास करता है और कहता इसलिये है कि उसे पुरस्कृत होनेकी आशा है, वह अपने आत्माको मलिन करता है।

उदाहरणके लिये यदि मैं कहूँ कि पृथ्वीके मध्यमें एक हीरा है, जो सौ मील लम्बा-चौड़ा है और कि मैं अपनी इस बातमें विश्वास करनेवालेको दस हजार डालर दूँगा, तो क्या मेरा ऐसा वादा 'प्रमाण' समझा जायेगा ?

बुद्धिमान आदमी पुरस्कार नहीं, तर्क चाहेंगे। केवल ढोंगी आदमी धनकी ओर देखेंगे।

इतना होने पर भी 'नवीन टैस्टेमेंट' के अनुसार ईसाने विश्वासियोंको पुरस्कृत करनेकी बात कही। यह पुरस्कार ही 'प्रमाण' का स्थान लेनेवाला था। जिस समय ईसाने यह पुरस्कृत करनेका वचन दिया उस समय उसने एक वीर, स्वतन्त्र, सच्ची आत्माको भुला दिया, उसकी अवहेलना की, उसे घृणाकी दृष्टिसे देखा।

यह घोषणा कि मुक्ति 'विश्वासी' बननेसे मिलती है मानसिक स्वातन्त्र्यके साथ मेल नहीं खाती। कोई भी आदमी जो 'विश्वास' और 'प्रमाण' के सम्बन्धपर थोड़ा भी विचार करता, ऐसी घोषणा नहीं कर सकता।

वे तमाम 'प्रवचन' जिनमें यह कहा गया है कि आदमी 'विश्वास' द्वारा अपना उद्धार कर सकता है, हानिकर सिद्ध हुए हैं। ऐसे 'प्रवचनों' से

'नैतिकता' का ह्रास होता है और सदाचार तथा कर्तव्यकी सच्ची कल्पना उलट-पलट जाती है।

सच्चे आदमीसे जब 'विश्वास' करनेके लिए कहा जाता है तो वह 'प्रमाण' माँगता है। सच्चा आदमी जब किसी दूसरेको 'विश्वास' करनेके लिये कहता है तो वह 'प्रमाण' देता है।

लेकिन यह इतना ही नहीं है।

अनन्त-कालीन पीड़ाके डर और सदाकालिक आनंदके वादोंके बावजूद जब 'अविश्वासियों' की संख्या बढ़ी, तब ईसाई मज़हबने दूसरा उपाय किया।

ईसाई मज़हबके पादरियोंने अविश्वासियोंसे, नास्तिकोंसे कहा—यद्यपि ईश्वर तुम्हें परलोकमें अनन्त सजा देगा—जेलमें डालकर रखेगा, उस जेलमें जिसके दरवाज़े केवल लोगोंको अंदर लेनेके लिए खुलते हैं, तो भी जब तक तुम 'विश्वासी' नहीं बनते तब तक हम तुम्हें यहाँ कष्ट देंगे।

तब उन सब सम्प्रदायके लोगोंने, जिनके नेता महंत, पुरोहित और पुजारी थे अपने 'अविश्वासी' पड़ौसियोंको ढूँढ़ निकाला, उन्हें जेलखानोंमें बेड़ियाँ पहना कर डाल दिया, शिकंजोंपर कसा, हड्डियाँ तोड़ डालीं, जिह्वायें खेंच लीं, आँखें निकाल डालीं, चमड़ी उधेड़ डाली और आगमें जला दिया।

यह सब केवल इसलिए किया गया क्योंकि ये जंगली ईसाई 'अनंत-पीडन' के सिद्धान्तमें विश्वास करते थे और क्योंकि वे यह विश्वास करते थे कि स्वर्ग 'विश्वास' का पुरस्कार है। इस प्रकारका विश्वास करनेके कारण, वे विचार और वाणीकी स्वतन्त्रताके शत्रु बनें। उन्हें अन्तरात्माकी आवाजकी किञ्चित् परवाह न थी। उन्हें आत्माकी सचाईकी किञ्चित् परवाह न थी। उन्हें मनुष्यकी मनुष्यताकी परवाह न थी।

सभी युगोंमें अधिकांश पुरोहित निर्दय हुए हैं और (दूसरोंके दुख-सुखकी ओरसे) लापरवाह। उन्होंने आदमियोंपर झूठे दोषारोपण करके उन्हें पीड़ा पहुँचाई है। जब वे हार गये हैं तब रेंगने लगे हैं और गिड़गिड़ाने लगे हैं, जब जीते हैं तब उन्होंने दूसरोंको जानसे मारा है। उनके दिल और दिमागमें दयाका फूल कभी खिला ही नहीं। न्याय कभी उगा ही नहीं। अब वे इतने निर्दय नहीं हैं। अब उनके हाथसे शक्ति जाती रही है, लेकिन अभी जो असम्भव है उसे संभव बनानेका प्रयत्न करते हैं। वे 'मूर्खोंके धन' से

अपनी जेबें भर लेते हैं। वे गलत बातोंसे अपना दिमाग भर लेते है और समझते हैं कि वे बुद्धिमान् हैं। वे पौराणिक कथाओंसे तथा गपोड़ोंसे अपनी आत्म-तुष्टि कर लेते हैं, वे भूत-प्रेतोंमें विश्वास करते हैं और जो है नहीं, उससे सहायताकी आशा लगाये बैठे रहते हैं।

वे एक राक्षस—एक स्वामी—को आकाशमें बिठाते हैं और अपने मानव-बन्धुओंको उसकी दासता सिखाते हैं। वे आदमियोंको गुलामोंकी तरह रेंगना सिखाते हैं। उन्हें मानवके साहससे डर लगता है। वे विचारकको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं। वे बदला लेनेकी इच्छा लिये रहते हैं।

वे काल्पनिक नरककी गर्मीसे अपने हाथोंको उष्ण रखना चाहते हैं।

मैं उन्हें बताता हूँ कि कहीं कोई नरक नहीं है। वे मुझे गालियाँ देते हैं कि मैंने उनका सन्तोष हर लिया।

कथा है, कि होरेस ग्रीले एक दिन जब सर्दी पड़ रही थी गाँवके एक भाण्डार-गृहमें गया और अपने कोटके बटन खोल कर तापने बैठ गया।

थोड़ी देरमें एक लड़केने चूल्हेकी आगको कुरेदकर कहा—"मिस्टर ग्रीले, चूल्हेमें आग तो है ही नहीं।"

ग्रीले बोला—"शैतान कहींका। यह तूने मुझे क्यों बताया? मुझे तो अच्छी खासी गर्मी लग रही थी।"

३

'देव-वाद' को छोड़कर शेष जितने वाद हैं वे सब सत्य-घटनाओंको जाननेके लिये उन्मुक रहते हैं। जो कोई किसी नई बातका पता लगाता है उसकी स्तुति होती है।

लेकिन किसी धर्मकी पाठशालामें यदि किसी अध्यापकको किसी ऐसी बातका पता लगे जिसका सिद्धान्तसे मेल न हो, तो उसे या तो छिपाकर रखना चाहिये, या उसे अस्वीकार करना चाहिये, नहीं तो उसे अपने पदसे हाथ धोना पड़ेगा। मानसिक सत्य-प्रियता एक अपराध है, कायरता और ढोंग महान् गुण हैं।

जिस बातका सिद्धान्तसे मेल नहीं बैठता उसे यथार्थ होने पर भी 'असत्य' कहकर दुत्कारा जाता है, और जो कोई उस बातको कहता है उसे 'नास्तिक'

कहा जाता है। हर अध्यापकको 'मिथ्यात्व' की वायुमें साँस लेना पड़ता है। 'देव-शास्त्र' ही एकमात्र बे-ईमान शास्त्र है—ऐसा शास्त्र जो 'विश्वास' पर निर्भर करता है, अन्ध-श्रद्धापर निर्भर करता है। यही एक ऐसा 'शास्त्र' है जो विचारसे घृणा करता है और जो तर्ककी निन्दा करता है।

कैथालिक धर्मके सब बड़े बड़े 'शास्त्रियों' ने तर्ककी निन्दा की है। उन्होंने उसे मानवताके शत्रु द्वारा फैलाया गया 'प्रकाश' कहा है। उन्होंने कहा है कि यह वह सड़क है जो विनाशकी ओर जाती है। प्रोटैस्टैण्ट धर्मके सब शास्त्री—लूथरसे लेकर अपने इस युगके कट्टरवादियों तक—तर्कके शत्रु हुए हैं। सभी समयोंके सभी कट्टर-पंथियोंकी विज्ञानसे शत्रुता रही है। उन्होंने गणित-ज्योतिषके जानकारोंकी ऐसी निन्दा की है, मानों वे कोई अपराधी हों और भूगर्भ-वेत्ता हत्यारे हों। उन्होंने चिकित्सकोंको 'परमात्मा' का शत्रु समझा है, क्योंकि वे विधाताके लिखेको बदलनेका प्रयत्न करते हैं। जीव-शास्त्रज्ञ, नृशास्त्रज्ञ, पुरातत्त्व-वेत्ता, पुराने अभिलेखोंके पाठक, विध्वस्त नगरोंके खोजी —सभीको इन धर्म-खोजियोंने घृणाकी दृष्टिसे देखा है। उन्हें डर था कि ये किसी ऐसी बातका पता न लगा लें जिसका बाइबलसे मेल न खाता हो।

इन 'देव-शास्त्रियों' ने दूसरे धर्मोंका अध्ययन करनेवालोंकी निन्दा की है। उनका आग्रह रहा है कि ईसाइयत पनपी नहीं है, उसमें विकास नहीं हुआ है—वह तो 'इलहाम' है। उन्होंने किसी भी दूसरे प्राकृतिक धर्मसे इसका सम्बन्ध स्वीकार करनेसे इनकार किया है।

अब जो बातें पता लगी हैं उनसे असन्दिग्ध रूपसे यह सिद्ध हो जाता है कि सभी धर्म एक प्रकारसे एक ही स्रोतसे उत्पन्न हुए हैं। लेकिन, एक भी कट्टरपन्थी ईसाई 'देव-शास्त्री' ऐसा नहीं होगा जो इस बातको स्वीकार करे। उसे तो अपने सिद्धान्त, अपने इलहामकी रक्षा करनी है। वह 'ईमानदार हो ही नहीं सकता। उसे 'ईमानदारी' के स्कूलमें शिक्षा ही नहीं मिली।' उसे 'ईमानदार' होना सिखाया ही नहीं गया। उसे विश्वास करनेकी शिक्षा मिली है और शिक्षा मिली है, विश्वासका पक्ष लेकर लड़नेकी; तर्कोंके ही विरुद्ध नहीं, यथार्थ बातोंके विरुद्ध भी।

सारे संसारमें एक भी 'देव-शास्त्री' ऐसा नहीं होगा जो इस बातका

जरा-सा भी, रत्ती-भर भी प्रमाण पेश कर सके कि बाइबल 'ईश्वर' का 'इलहाम' है।

'देव-शास्त्री' लोग केवल कथन-मात्र पर निर्भर करते हैं। उनके पास कोई प्रमाण नहीं। उनका दावा है कि उनकी इलहामी किताब 'तर्क' से ऊपर है और उसे किसी प्रमाणकी आवश्यकता नहीं।

ईसा मर कर फिर जी उठा, इसे वे किस तरह प्रमाणित करते हैं? एक पुस्तकमें लिखा है। पुस्तक किसने लिखी है? उन्हें पता नहीं। यह क्या प्रमाण है? जब तक हम यह सिद्ध न करें कि पुस्तकोंमें लिखी हुई सभी बातें सत्य ही होती हैं तब तक यह कोई प्रमाण नहीं।

एक 'चमत्कार' की स्थापनाके लिये एक दूसरा 'चमत्कार' चाहिये, और उसकी स्थापनाके लिये फिर एक और 'चमत्कार,' और उसके लिए फिर एक और 'चमत्कार'—इस प्रकार यह सिलसिला अनन्त है। किसी भी 'चमत्कार' को सिद्ध करनेके लिये मानवी प्रमाण पर्य्याप्त नहीं! किसी भी 'चमत्कार' में विश्वास करनेके लिये यह आवश्यक है कि हर आदमी स्वयं उसका साक्षी हो सके।

उनका कहना है कि दो हजार वर्ष पहले जो 'चमत्कार' दिखाये गये, उनसे ईसाइयतकी सत्यता सिद्ध हो गई। मूर्खता-पूर्ण कथन मात्रसे ही छोटी आयुमें ही तरुणोंके मस्तिष्क विकृत करके इनमेंसे कोई भी 'चमत्कार' स्थापित हो सकता है। इसमें सफलता प्राप्त करनेके लिए 'देव-शास्त्री' बच्चोंपर उनके झूलोंमें ही, उनके शिशु-गृहोंमें ही आक्रमण करता है। भोले-भाले मस्तिष्कोंमें वे मिथ्या विश्वासके बीजारोपण करते हैं। वे बच्चोंके मस्तिष्क तथा उनकी कल्पना-शक्तिको गंदा करते हैं। जो हँसते-खेलते हैं उन्हें ये 'यातनाओं' से भयत्रस्त करते हैं, और जो बदमाश हैं, उन्हें झूठी सान्त्वना देते हैं।

इस प्रकार उनके दिमाग गन्दे किये जाते हैं, उन्हें पंगु बनाया जाता है। इस 'देव-शास्त्र' के अतिरिक्त अन्य सभी विषयोंके बारेमें स्वतन्त्रता है, अन्य सभी दिशाओंमें बालकको अध्ययन करने और विचार करनेकी प्रेरणा दी जाती हैं। (लेकिन) वह अपनी माताकी गोदसे ही सीधा 'रविवार-पाठशाला' में जाता है। उस

बेचारेके छोटेसे मस्तिष्कको 'चमत्कारों' और आश्चर्यकर बातोंसे भर दिया जाता है। उसे बताया जाता है कि एक 'परमात्मा' है, जिसने यह संसार बनाया और जो लोगोंको पुरस्कार तथा दण्ड देता है। उसे बताया जाता है कि उसी 'परमात्मा' ने 'बाइबल' बनाई और ईसा उसका बेटा था। कोई तर्क नहीं उपस्थित किया जाता, कोई प्रमाण नही दिया जाता। केवल कथन-मात्र ही काफी होता है। यदि वह प्रश्न पूछता है तो उसकी जिज्ञासाको और भी भारी भरकम बातोंद्वारा दबा दिया जाता है। उसे कह दिया जाता है कि वह 'शैतान' से सावधान रहे। प्रत्येक 'रविवार-पाठशाला' एक प्रकारका दण्ड-गृह है, जहाँ बच्चोंके मस्तिष्कोंको यन्त्रणा दी जाती है और उन्हें बिगाड़ा जाता है—उन्हें जोर ज़बर्दस्तीसे 'कैथोलिक' या 'प्रोटेस्टैण्ट ठप्पेका बनाया जाता है। उनकी मौलिकता, उनके व्यक्तित्व, उनकी आत्माकी सत्य-प्रियताके विनाशके लिये सब सम्भव उपाय किये जाते हैं। 'देव-शास्त्रियों' के 'धर्म-स्कूलों' तक पहुँचते पहुँचते वह विनाशकी पूर्णताको प्राप्त हो जाता है।

जब उपदेशक 'धर्म-स्कूल' से बाहर निकलता है तो वह 'सत्य' की खोज नहीं करता। वह तो उसके पास है ही। उसके पास परमात्माके यहाँका 'इलहाम' है और उस 'इलहाम' से मेल खानेवाला एक मज़हब है। उस 'इलहाम' का पक्ष लेकर लड़ना उसका कर्तव्य है। 'इलहाम' तथा उसके सिद्धान्तके विरुद्ध जो तर्क हैं उन्हें न वह पढ़ता है, न सुनता है। उसके अपने मतके विरुद्ध जो भी बातें होंगी वह उन्हें अस्वीकार करेगा। उसके लिये 'सच्चा' बनना असम्भव है। उसके मतमें 'अनन्त-सुख' और 'अनन्त-यातना' की बेहिसाब बातें भरी पड़ी हैं। वे सब झूठमें विश्वास करने और 'सत्यको' अस्वीकार करनेसे ही प्राप्त होती हैं।

छान-बीन करना एक असीम खतरा है, अविश्वास करना एक महान् अपराध है और इसके दोषीको, 'अनन्त-यातना' मिलनी चाहिये तथा मिलेगी। इस महान् सच्ची बातके आगे उसका साहस हार जाता है, उसका मनुष्यत्व जाता रहता है और वह चाहे विश्वास करे चाहे न करे, भयके मारे चिल्ला उठता है कि मैं विश्वास करता हूँ।

वे कहते हैं कि अन्ध-श्रद्धा अच्छी चीज़ है और विचार करना ख़तरनाक

है। तो भी वह शिक्षक बनता है—एक नेता, अपने मानव-बन्धुओंको शिक्षा देनेके लिये परमात्माकी ओरसे भेजा गया विशेष व्यक्ति।

ये कट्टरपन्थी लोग वास्तवमें उन सब महान् पुरुषोंको बदनाम करते रहे हैं जो हमारी इस शताब्दिमें हुए। उन्होंने महान भूगर्भ-वेत्ता लैलको बुरा बताया क्योंकि उसने संसारको सच्ची बातें बताई थीं। उन्होंने हमबोल्टसे घृणा की और उसको छोटा बनाया, जो कि जातिके सबसे बड़े चिन्तकोंमेंसे एक था। उन्होंने डारविनका मज़ाक बनाया और उसे नीचे घसीटा जो सबसे महान् प्रकृतिज्ञ था, बड़ा सूक्ष्मदर्शी, और संसारका सबसे अधिक आश्चर्यजनक सत्य-शोधक।

प्रत्येक कट्टर-पन्थी 'धर्म-वेदी' से एक न एक बड़ेसे बड़े वैज्ञानिकका विरोध हुआ है, ऐसे लोगोंका जिन्होंने संसारको बुद्धिके प्रकाशसे भर दिया।

सम्प्रदायोंने प्रत्येक विज्ञानसे, प्रत्येक विचारकसे शत्रुता मोल ली है, और शताब्दियों तक अपनी शक्तिका प्रयोग केवल बुद्धिवादी 'प्रगति' को रोकनेमें ही किया है।

इन 'पूज्य' लोगोंको स्वतन्त्र होना चाहिये। उन्हें आनेवाले भविष्यके आगे आगे चलना चाहिये। लेकिन ये तो वे चिमगादड़ हैं, वे उल्लू हैं जो खण्डहरोंमें रहते हैं और प्रकाशसे घबराते हैं। जो ईमानदार आदमी अपने विचारोंको व्यक्त करता है, वे 'नास्तिक' कह कर उसकी निन्दा करते हैं। ऐसे आदमियोंका मुँह बंद रखनेके लिए वे जो कुछ भी कर सकते हैं करते हैं। वे अपनी 'बाईबल' को कानूनके बलसे सुरक्षित रखना चाहते हैं। वे लोगोंके उपहाससे बचनेके लिये कानून बनानेवाली सभाकी शरणमें जाते हैं। वे चाहते हैं कि अदालतें उनके विरोधियोंकी दलीलोंके उत्तर दें। यह सब कायरता, ढोंग और ईर्षाके उचित मिश्रणका परिणाम है।

किस कट्टरपन्थी 'धर्म-वेदिका' से कब कौन कामकी बात कही गई है? किस धार्मिक समितिने मानवताके बुद्धि-धनमें वृद्धि की है?

शताब्दियाँ बीतीं। ईसाई महन्तोंने ईसाई संसारके लिये एक कानून-शास्त्र बनाया—मूर्खतापूर्ण, अदार्शनिक और अन्तिम दर्जेका निर्दयतापूर्ण।

ईसाई धर्मका कहना है कि इसने लोगोंको कारुणिक और न्यायी बनाया।

क्या इसने नास्तिकोंको यातनायें देकर ऐसा किया? उनकी आँखोंको नष्ट करके किया? उन्हें जीवित भूत बना कर किया?

वह कौन-सा विज्ञान है जिसे ईसाई महन्तोंसे सहायता मिली हो और जिसे उन्होंने आगे बढ़ाया हो? किस धार्मिक सम्प्रदायने अपने घरमें किसी ऐसे 'सत्य' को आने दिया है, जिसके कहनेवालोंको दुःख सहन करना पड़ा हो?

वे कहते हैं कि धार्मिक-सम्प्रदाय शिक्षाके मित्र रहे हैं और हैं। मैं इसे अस्वीकार करता हूँ। ईसाई पादरियोंने जो कालेज खोले वे लोगोंको 'शिक्षा' देनेके लिये नहीं, किन्तु उन्हें अपने मतमें लानेके लिये; उन्हें अपने धर्मका संरक्षक बनानेके लिये। यह सब तो 'आत्म-रक्षा' मात्रके लिये किया गया है। कोई कट्टरपन्थी धर्म न कभी वास्तविक शिक्षाका समर्थक रहा है, न रहेगा। कैथालिक धर्मका माननेवाला उतनी ही शिक्षा देना चाहता है जो किसीको कैथालिक बना सके, प्रोटैस्टेण्ट धर्मका माननेवाला उतनी ही शिक्षा देना चाहता है जो किसीको प्रोटैस्टेण्ट बना सके, किन्तु दोनों ही उस शिक्षाके विरोधी हैं जो आदमियोंको 'मुक्त' करती है।

वे यह भी कहते हैं कि ईसाई-पादरियोंने अस्पताल बनवाये। यह सत्य नहीं है। आदमियोंने जो अस्पताल बनाये वे इस लिये नहीं बनवाये कि वे ईसाई थे, किन्तु इसलिये कि वे आदमी थे। उन्होंने अस्पताल दया करके नहीं बनाये किन्तु बनवाये केवल आत्म-रक्षाके लिये।

यदि कोई 'चेचक' का रोगी तुम्हारे दरवाजेपर आता है, तो न तो तुम उसे घरमें अन्दर घुसने दोगे और न जानसे मार ही सकोगे। मजबूरीके कारण तुम्हें उसके लिये जगहकी व्यवस्था करनी ही होगी। और यह तुम केवल 'आत्म-रक्षा' के लिये करते हो। तुम्हारी 'ईसाइयत' को इससे कुछ लेना-देना नहीं है।

ये धार्मिक सम्प्रदाय किसीको कुछ नहीं दे सकते, क्योंकि ये कुछ पैदा ही नहीं करते। कहा जाता है कि धार्मिक सम्प्रदायोंने आदमियोंको क्षमा-शील बना दिया है। मैं स्वीकार करता हूँ कि धार्मिक-सम्प्रदायोंने क्षमाके उपदेश दिये हैं—किन्तु उन्होंने कभी, एक भी शत्रुको क्षमा नहीं किया। जो महान् और साहसी विचारक हुए हैं उनके विरुद्ध इन्होंने अनन्त झूठोंका प्रचार

किया है। किसी धार्मिक सम्प्रदायने किसी ईमानदार विरोधीके बारेमें न कभी सत्य बात कही और न कहनेका प्रयत्न ही किया।

ये हमारे पूज्य व्यक्ति जब देखते हैं कि धनी लोग इनका प्रवचन सुनने नहीं आते तब ये धनके विरुद्ध, फैशनके विरुद्ध तथा आराम-पसंदीके विरुद्ध दहाड़ते हैं। वे धनियोंको नरकमें और भिखमंगोंको स्वर्गमें दिखाते हैं, किन्तु जब इनका प्रवचन सुननेवालोंमें धनियोंकी कमी नहीं रहती तब ये अपनी तोपका मुँह दूसरी ओर घुमा देते हैं।

प्रत्येक कट्टरपन्थी धर्म असत्यकी नींवपर खड़ा है। प्रत्येक भला कट्टर-पन्थी पुजारी, जिस बातको वह नहीं जानता उसकी घोषणा करता है और जिसे वह जानता है उसे स्वीकार नहीं करता।

अन्धश्रद्धा भिखमंगोंका काम है, डाकुओंका अत्याचारियोंका।

विज्ञान परोपकार करता है।

मिथ्या विश्वाससे लोगोंका रक्त बहता है।

विज्ञानसे प्रकाश मिलता है।

ईसाईका 'परमात्मा' एक कल्पना है, शायद एक अनुमान। न कोई आदमी और न कोई आदमियोंका समूह ही 'कब और कहाँसे?' का उत्तर दे सकता है। आदमीकी बुद्धि जीवनके रहस्यको नहीं समझ सकती। अपने जन्मसे पहले हम नहीं जा सकते और अपनी मृत्युके आगे भी हम कुछ नहीं देख सकते। तमाम कर्तव्य, तमाम आचार-शास्त्र, तमाम ज्ञान तथा तमाम अनुभव इसी जीवनके लिये हैं और इसी संसारके लिये।

हम जानते हैं कि आदमी हैं, स्त्रियाँ हैं और बच्चे हैं। हम जानते हैं कि प्रसन्नता मुख्यतया आदमीके आचारणपर निर्भर करती है।

हम सन्तुष्ट हैं कि सारे देवता काल्पनिक ढकोसले ही हैं और परमात्मा है ही नहीं।

संसार एक नये युगमें प्रवेश कर रहा है। हम उपयोगी-धर्ममें विश्वास करना सीखने लगे हैं।

हमारे ईसा, हमारे अवतार, हमारे पैगम्बर वे सब आदमी हैं, जिन्होंने जंगलोंको काटा, पृथ्वीको जोता, दरियाओंपर लोहेके पुल बिछाये, रेलें और

नहरें बनाईं, बड़े बड़े जहाज़ों तथा अन्य वाष्प-यानोंका आविष्कार किया; वे सब आदमी हैं जिन्होंने तार और बेतारके तार बनाये तथा अपनी खोज और श्रमसे बिजलीको प्रकाशित कर दिया। वे सब आदमी हैं जिन्होंने करघों और तकुओंका आविष्कार कर संसारको कपड़े पहनाये; वे सब आदमी हैं, जिन्होंने छपाई और बड़े बड़े छापेखानोंका आविष्कार किया, जिससे सारा संसार काव्य, उपन्यास तथा वैज्ञनिक ग्रन्थोंसे भर गया, जिससे उन बच्चों तकके लिये ज्ञान सुरक्षित रहता है, जो अभी पैदा भी नहीं हुए; वे सब आदमी हैं, जिन्होंने उन सब मशीनोंका आविष्कार किया जिनसे हमारे कामकी लकड़ी तथा लोहेकी चीजें बनती हैं, वे आदमी हैं जिन्होंने आकाशको एक सिरेसे दूसरे तक छान डाला और तारा-गणोंके रास्तोंका पता लगाया, जिन्होंने ऊँचे पवर्तों और गहरे समुद्रोंमें संसारकी कथा पढ़ी; वे आदमी हैं जिन्होंने वेदनापर विजय पाई और मनुष्यकी आयुको बढ़ाया; वे महान् दार्शनिक और प्रकृतिज्ञ जिन्होंने संसारको प्रकाशसे भर दिया; वे महान् कवि जिनके काव्योंने हमें मस्त बनाया; वे महान् चित्रकार और मूर्तिकार जिन्होंने चित्र-पटको वाणी दी तथा पत्थरमें प्राण भर दिये; वे महान् व्याख्याता जो संसारको अपने साथ बहा ले गये; वे गीत-कार जिन्होंने अपना जीवन शब्दोंकी ध्वनिको समर्पित कर दिया; वे उद्योग-धन्धोंके सेनानी, वे बड़े बड़े माल पैदा करनेवाले तथा वे सैनिक, जिन्होंने न्यायका पक्ष लेकर युद्ध किया। विज्ञानकी विजय ही हमारे 'चमत्कार' हैं। वे किताबें जिनमें प्रकृतिके सम्बन्धमें यथार्थ बातें लिखी हैं, हमारे धार्मिक ग्रन्थ हैं और वह शक्ति ही परमात्मा है जो हर अणुमें है, जो हर सितारेमें है, जो हर उस चीजमें है जो जीती है, बढ़ती है और विचार करती है, जो आशा करती है और कष्ट पाती है।

ईश्वरको हम जान नहीं सकते, प्रकृतिकी सीमाके परे हम जा नहीं सकते। सभी कर्तव्योंका पालन यहीं इसी संसारमें होना चाहिये। हम मैत्री करें और मेहनत करें। हम सबर करें और काम करें। हम साहसी बनें और प्रसन्न रहें—अपने दिलोंको भलाईके प्रति और दिमागको सचाईके प्रति खुला रखें। हम स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करें। हम आशा करें कि भविष्यमें सारी मानव-सन्तान सुखी हो सकेगी और सबसे ऊपर हम करें अपने भीतरके सत्यकी रक्षा।

देवता-गण

हर जातिने किसी न किसी ' देव ' को जन्म दिया है। वह ' देव ' बहुत कुछ अपने जन्मदाताओंके अनुरूप ही रहा है। जिसे उस जातिके लोग घृणा करते उन्हें वह देव भी घृणा करता और जिसे वे प्रेम करते, उन्हें वह देव भी प्रेम करता। वह सदैव विजयी पक्षकी ओर ही रहा है--स्वजातिके अतिरिक्त शेष सभीसे घृणा करनेवाला।

सभी देवतागण स्तुति, प्रार्थना और पूजाके आग्रही रहे हैं। अधिकांश देवतागण यज्ञोंसे प्रसन्न होते रहे हैं, और निर्दोष रक्तसे तो उन्हें मानों दिव्य सुगन्धि आती रही है। इन तमाम देवताओंका यह आग्रह रहा है कि उनके बहुतसे पुरोहित हों, और पुरोहितोंका आग्रह रहा है कि जनता उनका पालन-पोषण करे और इन पुरोहितोंका सबसे बड़ा काम यही रहा है कि वे अपने अपने देवताकी महिमा गाते रहें और कहते रहें कि उनका देवता दूसरे सब देवताओंको एक साथ हरा सकता है।

इन देवताओंकी रचना बेहिसाब तरहकी हुई है और एकसे एक बढ़कर भद्दी शकलकी। किसीके हजार हाथ हैं, किसीके सौ सिर हैं, किसीके गलेमें जीवित साँपोंकी माला है, किसीके हाथमें मुद्गर है, किसीके हाथमें ढाल-तलवार है, किसीके पर हैं, कोई दिखाई ही नहीं देता, कोई एकदम नग्न, किसीकी केवल पीठ ही पीठ दिखाई देती है। कुछ बड़े ईर्ष्यालु, तो कुछ बड़े ही मूर्ख, कुछ कभी कभी आदमी बन गये हैं, तो कुछ हंस, कुछ बैल और कुछ बत्तखें। कुछ सुन्दर मानवी कन्याओंसे प्रेम भी करते रहे हैं। कुछ विवाहित रहे हैं—सभीका रहना अच्छा था--कुछ अनन्तकालसे अविवाहित ही माने जाते हैं। कुछके बच्चे हुए हैं और वे बच्चे भी अपने माता पिताकी तरह पुजने लग गये हैं।

इन देवताओंमेंसे अधिकांश देवता बड़े ही बदला लेने वाले, जंगली, कामुक तथा अज्ञानी रहे हैं। क्योंकि उन बेचारोंके ज्ञान-प्राप्तिके साधन उनके पुरोहित ही थे, इस लिये हम उनके अज्ञानपर अधिक आश्चर्य्य नहीं कर सकते।

ये देवता-गण यदि सबसे अधिक किसी बातसे प्रसन्न होते हैं तो वह है 'नास्तिकों' की हत्या, और यदि इन्हें सबसे अधिक क्रोध आता है—आज भी—तो उस आदमीपर जो इनके अस्तित्व से ही इनकार करे।

कोई जाति इतनी दरिद्री नहीं रही है कि उसके पास एक ही आध देवता रहा हो। ये देवता इतनी आसानीसे बनाये जा सकते थे और इनके बनानेमें इतना कम खर्चा पड़ता था कि साधारणतया देवता-बाजार ठसाठस भरा रहा है और स्वर्गमें भीड़ लगी रही है।

जब कभी लोग इन देवताओंमेंसे किसी एक देवताकी भी पूजा नहीं कर सके हैं, अथवा उसके पुरोहितोंको भोजन-वस्त्र नहीं दे सके हैं (दोनों पर्य्यायवाची रहे हैं) तो उसने लोगोंको प्रायः महामारी और अकालसे दण्डित किया है। पुरोहित सदैव न केवल इन विपत्तियोंकी पूर्व सूचनायें देकर अपना कर्तव्य निबाहते रहे हैं, किन्तु जब ये विपत्तियाँ आन पड़ी हैं तब ये यह सिद्ध करनेमें प्रयत्नशील रहे हैं कि इनका एकमात्र कारण यही रहा है कि उन्हें पर्य्याप्त नहीं मिला।

जिस प्रकार जातियाँ भिन्न भिन्न हैं, उसी प्रकार ये देवता भी। बड़ी और शक्तिशाली जातियोंके देवता बड़े बड़े और शक्तिशाली तथा छोटी और निर्बल जातियोंके देवता भी छोटे और निर्बल। इनमेंसे प्रत्येक देवता अपने भक्तोंको इस लोक तथा परलोकमें सुखी रखनेकी आशा देता है और जो उसे या तो एकदम न माने अथवा सर्वोपरि न माने तो उसे अनन्त दण्डका भय दिखाता है; किन्तु किसी एक भी देवताको न मानना तो महान् अपराध है।

आप मानवी-रक्तसे अपने हाथ रंग लें, किसी निर्दोष व्यक्तिके नामको कलङ्कित कर दें, किसी हँसते हुए बालकका उसकी माँकी गोदमें ही गला घोंट दें, किसी सुन्दरीको जो तुम्हें प्यार करती है और तुम्हारा विश्वास करती है धोखा दे दें, घर-घाटका न रहने दें, छोड़कर चले जायें, तब भी तुम्हारे लिये आशा है। इस सबके लिये और इन सब अपराधोंके लिये तुम क्षमा किये जा सकते हो, उस दिवालिया न्यायालयसे तुम्हें मुक्ति मिल सकती है। किन्तु यदि इन देवताओंके अस्तित्वसे इनकार करो तो वह मधुर और करुणामय मूर्ति घृणाका अवतार बन जाती है।

हमारे पूर्वजोंके पास न केवल देवता बनानेके कारखाने थे, किन्तु वे दानवों और राक्षसोंका भी निर्माण करते थे। पतित देवता ही प्रायः दानव बनते थे। ये पिशाच मनुष्योंसे सहानुभूति रखते थे। उनके बारेमें एक बड़ी आश्चर्यकर बात यह है कि लगभग सभी साम्प्रदायिक-परम्पराओंमें, सभी देव-परम्पराओंमें, सभी मजहबोंमें ये 'दानव' देवताओंकी अपेक्षा अधिक दयालु और मानवी गुणोंसे विभूषित रहे हैं।

कुछ जातियोंने दूसरी जातियोंके देवताओंको अपना लिया है। हमें स्वीकार करना पड़ता है कि हमारी जाति भी ऐसी ही एक जाति है। यहूदी लोग जब एक 'जाति' न रहे तो उनके लिये उनके 'देवता' का उपयोग नहीं रह गया। हमने उनके देवता और उनके शैतान दोनोंको ही हथिया लिया।

मुझे इन 'देवताओं' और 'शैतानों' की कल्पनाओंके अस्तित्वमें आनेका कारण बहुत अस्पष्ट नहीं प्रतीत होता। वह सम्पूर्ण रूपसे स्वाभाविक प्रक्रिया है। आदमीने ही इन सबको पैदा किया है और समान परिस्थितिमें वह फिर पैदा कर सकता है। न केवल आदमीने इन देवताओंको पैदा ही किया है, किन्तु उसने इन्हें अपने इर्द-गिर्दकी सामग्रीसे ही पैदा किया है। उसने देवताओंको प्रायः अपने ही जैसा बनाया है—उसने उनके हाथ, सिर, पैर, आँखें, कान बनाये हैं और उन्हें वाणी दी है। प्रत्येक जातिने अपने देवताओं और शैतानोंसे अपनी ही भाषा तो बुलवाई ही है, उसने उनके मुँहमें इतिहास, भूगोल, ज्योतिषकी—लगभग उन सब विषयोंकी जिनमें लोग गलतियाँ करते हैं—गलतियाँ भी रख दी हैं। कोई एक भी देवता ऐसा नहीं हुआ जो अपनी निर्माता-जातिका पुरोगामी हुआ हो। निग्रो लोगोंके देवता काली चमड़ी और घुँघराले बालोंवाले थे। मंगोलोंके देवताओंका रंग पीला और आँखें बादामकी-सी शकलकी। यहूदी चित्र नहीं बना सकते थे, यदि सकते तो हम देखते कि उनका 'जेहोवाह' लम्बी दाढ़ी, लम्बूतरे चेहरे और तोतेकी-सी नाकवाला है। 'ज़ेअल' पूर्णरूपसे यूनानी था। 'जोवे' रोमन परिषदके किसी एक सदस्यके समान। मिश्रके देवताओंका चेहरा उन लोगोंके चेहरोंकी तरह ही स्थिर और शान्त था, जिन्होंने उन्हें बनाया था। उत्तरी देशोंके देवता ऊनके गर्म गर्म कपड़ोंसे लदे थे और दूसरे कुछ देशोंके नंगे। भारतके

देवता हाथियोंकी सवारी करते थे और कुछ द्वीपोंके देवता बड़े तैराक थे। उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवके देवता व्हेल मछलीकी चर्बीके बड़े ही शौकीन। लगभग सभी जातियोंने देवताओंकी या तो मूर्तियाँ बनाई हैं या चित्र। नीचेके स्तरके लोगोंने उन्हें सचमुचके देवता मान लिया और इन्हीं देवताओंकी वे प्रार्थनायें करते रहे और इन्हींको बलि चढ़ाते रहे।

कुछ देशोंमें आज भी यदि लम्बी प्रार्थनाओंके बाद भी लोगोंकी इच्छायें पूरी नहीं होतीं, तो वे उन देवताओंको 'नपुंसक' मान लेते हैं, अथवा उनको बहुत भला-बुरा कहते हुए उनका मुक्कों और गालियोंसे स्वागत करते हैं। वे कहते हैं "कबसे हे कुत्तेके पिल्ले, तुझे इस शानदार मन्दिरमें बैठाया है, सोनेसे मढ़ा है, बढिया बढ़िया भोजन खिलाये हैं, धूप-बत्ती जलाई है, इतना सब करने पर भी तू इतना अकृतज्ञ है कि जो हम माँगते हैं, वह नहीं देता।" तब वे उस देवताको नीचे गिरा कर गलियोंकी गंदगीमें घसीटते हैं। इस बीचमें यदि उनकी इच्छा पूरी हो जाय तब वे बड़े क्रिया-कलापके साथ उसे उठाकर ले जाते हैं और धो साफ करके फिर मन्दिरमें प्रतिष्ठित करते हैं। वहाँ पहुँचकर वे उसके सामने लेट लेटकर क्षमा-याचना करते हैं; वे कहते हैं, "सच्ची बात है हम जरा अधिक उतावले हो गये और तुमने भी इच्छाकी पूर्तिमें अधिक देरी कर दी। तुमने यह मार क्यों खाई? लेकिन जो हो गया, सो हो गया। अब हम उसकी बात न सोचें। यदि तुम बीती बातको भूल जाओगे तो हम तुमपर पहलेसे भी अधिक सोनेका पानी चढ़ा देंगे।"

आदमीको कभी देवताओंकी कमी नहीं रही है। उसने लगभर हर चीज़की पूजा की है—गंदेसे गंदे पशुओं तककी। उसने आगकी, पृथ्वीकी, वायुकी, जलकी, प्रकाशकी, तारागणोंकी पूजा की है और शताब्दियों तक बड़े बड़े साँपोंके सामने दण्डवत किये हैं। जंगली लोग, कभी कभी सभ्य लोगोंसे उन्हें जो चीज़ें मिलती रही हैं, उन्हीको देवता बना लेते रहे हैं। टोड लोग गऊके गलेमें बाँधनेकी एक 'घंटी' को पूजते हैं और कोट लोग पूजते हैं दो तशतरियोंको जिनमेंसे वे एकको 'पति' और दूसरीको 'पत्नि' समझते हैं।

शारिरिक बलमें पुरुष क्योंकि स्त्रीकी अपेक्षा बढ़ा चढ़ा रहा है, इसलिए अधिकांश बड़े बड़े देवता 'नर' ही हुए हैं। यदि स्त्री

पुरुषकी अपेक्षा बलवान् होती तो प्रकृतिके अधिष्ठाता देवतागण स्त्रियाँ होते।

कोई बात इससे अधिक स्पष्ट नहीं हो सकती कि हर जातिके लोग अपने देवताओंको अपनी विशेषताओंसे विभूषित कर देते हैं और हर व्यक्ति अपने देवताको अपनी विशेषताओंसे।

अपना आसपास जो सुझा दे उसके अतिरिक्त आदमीके न कोई विचार होते हैं, न हो सकते हैं। जिस बातको उसने देखा नहीं, अनुभव नहीं किया, जो उससे सर्वथा भिन्न है, ऐसी किसी वस्तुकी वह कल्पना नहीं कर सकता। जो कुछ उसने देखा है, अनुभव किया है, सुना है तथा जिसका अन्य इन्द्रियों-द्वारा ज्ञान प्राप्त किया है उसमें वह अतिशयोक्ति कर सकता है, कमी कर सकता है, उन्हें मिला सकता है, पृथक् कर सकता है, बद-शकल बना सकता है, सुन्दरतर बना सकता है, उन्नत बना सकता है, दोके चार कर सकता है, और उनकी परस्पर तुलना कर सकता है, किन्तु वह कुछ भी नया उत्पन्न नही कर सकता। शक्तिके प्रदर्शनको देखकर वह किसीको सर्वशक्तिमान बना सकता है। 'जीवन' को देखकर वह 'अमृतत्व' की बात कर सकता है। 'समय' के बारेमें कुछ जान लेने पर वह 'अनन्त-काल' कह सकता है, 'चेतना' का कुछ ज्ञान होनेपर वह 'परमात्मा' की बात कर सकता है। ईर्षा-द्वेषको देखकर वह 'शैतान' की बात सोच सकता है। उसके अन्धकारपूर्ण जीवनमें थोड़ी-सी भी प्रसन्नताकी किरणें दिखाई दे जायें तो वह 'स्वर्ग' की बात कर सकता है। दुख-दर्दके अनेक रूप देखकर वह 'नरक' की बात कर सकता है।

इतना सब होनेपर भी इन सारे विचारोंका एक ही आधार है; केवल एक आधार। शेष आलीशान इमारत आदमीने जो कुछ अपनी इन्द्रियोंद्वारा अनुभव किया है उसीमें अतिशयोक्ति करके, कमी करके, मिलाकर, पृथक् करके, बदशकल बनाकर, सुन्दरतर बनाकर, बढिया बनाकर और एकके चार करके खड़ी की है। यह ऐसा ही है जैसे हम एक शेरको बाज़के पर लगा दें, घोड़ेकी पूँछ लगा दें और हाथीकी लगा दें सूँड़। हमने अपनी कल्पनासे एक भयानक 'दैत्य' की रचना कर ली, लेकिन तो भी इस

दैत्यके सभी अंग वास्तवमें विद्यमान हैं। मनुष्यनिर्मित सभी देवताओंका यही हाल है।

प्रकृतिसे आगे आदमी—विचारके क्षेत्रमें भी—जा नहीं सकता, उससे ऊपर उठ नहीं सकता, उससे नीचे गिर नहीं सकता।

आदमी अपने अज्ञानमें मान बैठा कि सारी प्रकृति किसी 'चेतन शक्ति' से उत्पन्न है और उससे उसका सीधा सम्बन्ध है। इस 'चेतन शक्ति' से मैत्री बनाये रखना सभी धर्मोंका उद्देश्य रहा है और आज भी है। भयके मारे, अथवा सहायता माँगनेके लिए, अथवा किसी ऐसे उपकारके बदलेमें (जिसे उसने माना कि उसका हुआ है) कृतज्ञता प्रकट करनेके हेतु उसने घुटने टेक कर प्रणाम किये हैं। जिसे वह समझ बैठा कि किसी कारण क्रुद्ध हो गया है, उसने उसे प्रार्थनाओंद्वारा शान्त करनेका प्रयत्न किया है। विद्युतकी चमक और कड़कने उसे डरा दिया है। ज्वालामुखी-पर्वतोंके सामने उसे घुटने टेकने पड़े हैं। भयानक जानवरोंद्वारा भरे हुए जंगलोंने, अथाह गहराइयोंमें रेंगते हुए बड़े बड़े अजगरोंने, अनन्त सागरने, चमकते हुए तारागणोंने, भयानक सूर्य्य-ग्रहणों तथा चन्द्र-ग्रहणोंने और सबसे बढ़कर सदैव सिरपर सवार रहने वाली मृत्युने आदमीको यह विश्वास दिला दिया कि वह तो अदृश्य किन्तु दुष्ट शक्तियोंके हाथका खिलौना भर है। विचित्र और भयानक बीमारियोंने, ज्वरकी सर्दी-गर्मीने, पागलपनके दौरोंने, अचानक अर्धाङ्गके आक्रमणोंने, रात्रिके अन्धकारने, तथा उसके दिमागमें भरे हुए भयानक स्वप्नोंने उसे विश्वास दिला दिया कि उसके पीछे अनन्त भूत-प्रेत लगे रहते हैं। किन्हीं कारणोंसे उसने मान लिया कि ये सब प्रेत समान रूपसे शक्तिशाली नहीं हैं और सभी बुरे भी नहीं हैं; और जो बड़े हैं वे छोटोंपर अधिकार रखते हैं। इस लिए उसने समझा कि उसका अस्तित्व तभी तक सुरक्षित है जब तक वह अधिक शक्तिशाली प्रेतोंका कृपापात्र बना रहे। इसी उद्देश्यकी पूर्तिके लिये उसने प्रार्थनाओं, स्तुतियों, पूजा तथा बलिदानका आश्रय लिया। मनुष्यकी जंगली अवस्थामें प्रायः ये ही विचार सर्वव्यापक रहे हैं।

युगोंतक सभी जातियोंके लोग यही मानते रहे हैं कि रोगी और पागल मनुष्य भूत-प्रेतोंसे अभिभूत होता है। सहस्रों वर्षतक इन भूत-प्रेतोंका डराकर भगा देना ही एक मात्र चिकित्सा रही है। पुरोहित लोग प्रायः बहुत ही बे-मेल

और ज़ोर ज़ोरसे चिल्लाते रहे हैं। वे सींगोंसे नाद करेंगे, ढोल पीटेंगे, झांझ बजायेंगे और अत्यन्त भयानक मंत्रोंको ज़ोर ज़ोरसे चिल्लायेंगे। यदि यह चिल्लाहट-चिकित्सा असफल रही तब वह किसी अधिक शक्तिशाली प्रेतकी मदद माँगेंगे।

इन प्रेतात्माओंको शान्त रखना बड़े ही महत्त्वकी बात समझी जाती रही है। ग़रीब मनुष्यने जब वह बर्बर अवस्थामें था, यह समझकर कि किसी चीजकी भेंट देनेसे आदमियोंके दिल कोमल पड़ जाते हैं, अपनी सबसे प्रिय वस्तुयें इन प्रेतोंको भेंट कीं। उसने अपने प्रिय-पुत्रका रक्त तक इन्हें चढ़ा दिया है, भले ही उसका हृदय फट जाय। वह अपनेसे भिन्न किसी तरहके देवताकी कल्पना ही न कर सकता था, इस लिए उसने स्वाभाविक तौर पर यही समझा कि इतने बड़े दुःख और शोकसे यह आकाशके प्राणी कुछ न कुछ तो अवश्य ही प्रभावित होंगे।

उस समय बर्बर मनुष्यकी वही हालत थी जो अब सभ्य मनुष्यकी है—एक वर्ग दूसरे वर्गके भयोंपर जीता था और उनसे व्यापार चलाता था। कुछ लोगोंने अपने जिम्मे यह काम ले लिया कि वे देवताओंको शान्त रखेंगे और साथ ही मनुष्योंको यह बतावेंगे कि इन अदृश्य शक्तियोंके प्रति उनके क्या कर्तव्य हैं। यही पुरोहित-जातिकी उत्पत्तिका आरम्भ है। पुरोहितने अपने बारेमें बताया कि वह देवताके क्रोधसे असहाय मनुष्यकी रक्षा करने-वाला है। वह स्वर्गकी अदालतमें आदमीका वकील है। वह अदृश्य-लोकमें अमनके झण्डेके साथ प्रोटैस्ट और प्रार्थना लेकर पहुँचा और वहाँसे लौटा तो अपने साथ आज्ञा, अधिकार और शक्ति लाया। आदमीने अपने ही नौकर —पुरोहित—के सामने घुटने टेक दिये और पुरोहितने भी उस रोब-दाबका लाभ उठाकर जो उसके और देवताओंके काल्पनिक सम्बन्धके कारण उसका आदमियोंके दिलपर बैठ गया था अपने ही भाइयोंको रेंगनेवाले, ढोंगी और गुलाम बना डाला।

पुराने समयमें सभीको प्रेतोंका अस्तित्व स्वीकृत था। लोगोंको इसमें कुछ सन्देह न था। इस विश्वाससे स्वाभाविक तौरपर यह बात पैदा हुई कि प्रेतोंको दबानेके लिये मनुष्यको या तो स्वयं देवता बनना होगा या फिर किसी देवताकी सहायता लेनी होगी। धर्मोंके सभी संस्थापकोंने प्रेतोंको अपने

वशीभूत करके तथा प्रकृतिके नियमोंको रोक कर अपनी दैवी उत्पत्ति-को सिद्ध किया है। भूत-प्रेतोंको निकाल सकना 'दैवी' होनेका प्रमाणपत्र था। यदि कोई पैगम्बर प्रेतोंको अभिभूत न कर सकता था तो वह अच्छी नजरसे न देखा जाता था। ऊँचीसे ऊँची श्रेष्ठतम भावनाओंकी सूक्तियों और निष्क-लंक जीवनका कोई मूल्य न था, यदि उसके साथ आश्चर्य्य-कर बातें दिखाने तथा प्रेतोंको अभिभूत करनेकी शक्ति न हो।

यह अच्छी और बुरी शक्तियोंमें जो विश्वास पैदा हुआ है उसका कारण है अच्छी और बुरी परिस्थिति। जो स्थिति आदमीको अच्छी लगी उसका कारण अच्छी शक्तियाँ समझी गईं और जो स्थिति बुरी लगी, उसका कारण बुरी शक्तियाँ समझी गईं। यह मान लिया गया कि सारी परिस्थितिका कारण अच्छे या बुरे 'प्रेत' हैं, और प्रेतोंको अच्छी या बुरी परिस्थितिके हिसाबसे अच्छा या बुरा माना जाने लगा। इस प्रकार दैत्यकी कल्पना भी देवताकी कल्पनाके समान ही सर्व-व्यापक बन गई।

बहुतसे लेखकोंका ख्याल है कि जो विचार सर्व-व्यापक हैं वे 'सत्य' होने ही चाहिये, क्योंकि सभी सर्व-व्यापक विचार भीतरसे उत्पन्न होते हैं और जो विचार भीतरसे उत्पन्न होते हैं, वे 'असत्य' हो नहीं सकते। यदि किसी विचारका सर्व-व्यापी होना ही उसके भीतरसे उत्पन्न होनेका प्रमाण है और यदि किसी विचारका भीतरसे उत्पन्न होना ही उसके 'सत्य' होनेका प्रमाण है, तो जो लोग भीतरसे उत्पन्न होनेवाले विचारोंमें विश्वास करते हैं उन्हें यह स्वीकार करना होगा कि प्रकृतिके ऊपर किसी 'देवता' के अस्तित्वका प्रमाण भी वही है जो प्रकृतिसे ऊपर किसी 'दैत्य' या 'शैतान' के अस्तित्वका प्रमाण। इस लिये किसी शैतानका अस्तित्व भी उतना ही 'स्वयं-सिद्ध' है जितना किसी देवताका। सच्ची बात यह है कि भली परिस्थितिसे 'देवता' की कल्पना की गई है और बुरी परिस्थितिसे 'शैतान' की और यह मान लेना कि 'शैतान' हमारी प्रसन्नताका कारण होगा उतना ही स्वाभाविक तथा तर्कानुकूल है जितना यह मान लेना कि 'देवता' हमारी विपत्तिका। इस लिये यदि कोई महान् चेतन-शक्ति इस सारी परिस्थितिका निकट-कारण है तो यह निर्णय करना कठिन है

कि वह 'शक्ति' मानवकी मित्र है या शत्रु। यदि सारी परिस्थिति अच्छी ही अच्छी होती तो हम कह सकते थे कि उसकी उत्पत्ति किसी सम्पूर्ण कल्याणकारी अस्तित्वसे हुई है। यदि वह बुरी ही बुरी होती तो हम कह सकते थे कि उसकी उत्पत्ति किसी सर्वथा अकल्याणकारी अस्तित्वसे हुई है। लेकिन क्योंकि आदमीकी परिस्थिति अच्छी और बुरी दोनों होती है, आदमी-पर उसका अच्छा और बुरा दोनों तरहका प्रभाव पड़ता है, इससे यह सिद्ध होता है कि उसका कारण भिन्न और परस्पर-विरोधी शक्तियाँ होंगी, या कोई ऐसी एक शक्ति जो कभी दयासे अभिभूत हो उठती है कभी ईर्षासे; या वे सभी यों ही पैदा होती हैं और इससे उनका कोई सम्बन्ध नहीं कि आदमीपर उनका क्या प्रभाव पड़ता है।

सभी घटनायें किसी न किसी अच्छी-बुरी 'दैवी' शक्तिके हस्तक्षेपका परि-णाम हैं—यह मूर्खोंका सिद्धान्त लगभग सर्व-व्यापक रहा है और आज भी है। अधिकांश लोग किसी न किसी ऐसी दैवी शक्तिमें विश्वास करते हैं जो प्राकृतिक घटनाओंके क्रममें परिवर्तन कर सकती है। यह लगभग सभीके 'प्रार्थना' करनेसे सिद्ध होता है। इस क्षण भी हजारों आदमी किसी न किसी काल्पनिक 'शक्ति' के आगे हाथ फैला रहे होंगे कि वह उनका पक्ष ले। कुछ स्वास्थ्य चाहते हैं, कुछ चाहते हैं कि उनके प्रिय दूर-स्थित व्यक्ति सुरक्षित रहें, कुछ धन चाहते हैं, कुछ वर्षा चाहते हैं, कुछ रोग-निवृत्ति चाहते हैं, कुछ भोजनकी याचना करते हैं, कुछ अधिक बुद्धि चाहते हैं और कुछ कभी कभी भगवान्‌को वही कुछ करनेको कह देते हैं जो वह अच्छा समझता हो। इन सभी प्रार्थनाओंका आधार यह विश्वास है कि कोई एक 'शक्ति' प्राकृतिक घटनाओंके क्रमको न केवल बदल सकती है; किन्तु बहुत करके बदलेगी ही। अधिकांश कौमों और जातियोंका यही विश्वास रहा है। तमाम धार्मिक ग्रन्थ इस प्रकारके दैवी-शक्तिके वृत्तान्तोंसे भरे पड़े हैं—हमारी बाईबल भी इस नियमका अपवाद नहीं है।

यदि हम प्रकृतिसे बढ़कर किसी दूसरी शक्तिमें विश्वास करते हैं, तो फिर यह मानना एकदम स्वाभाविक और उचित है कि वह शक्ति सांसारिक मामलोंमें भी हस्तक्षेप करेगी और कर सकेगी। यदि वह ऐसा कुछ नहीं कर

सक्ती तो उसका उपयोग क्या है ? धार्मिक-ग्रन्थोंमें इन शक्तियोंके हस्त-क्षेपकी बहुत ही मनोरंजक कथायें भरी पड़ी हैं।

यह विचार कि आदमीने अज्ञानकी काली रात्रिमें कितना कष्ट उठाया है, किसी भी सहृदय व्यक्तिको पगला बना देनेके लिये काफी है। इस ख्यालने कि आदमी चारों ओरसे तरह तरहकी अच्छी-बुरी शक्तियोंसे घिरा हुआ है कितना त्रास दिया है ! तब इसमें कौन-सी आश्चर्यकी बात है यदि आदमीने अपने काँपते हुए घुटने टेक दिये और ऐसी धर्म-गंडिकायें बनाई जहाँ उसने अपना भी खून चढ़ाया ! इसमें क्या आश्चर्य है यदि उसने अज्ञानी पुरोहितों और अभि-मानी मन्त्र-पूजा करनेवालोंकी ओर सहायताके लिए हाथ फैलाये ! इसमें कौन आश्चर्य है यदि वह धूलमें लोटता हुआ मन्दिरोंके दरवाजों तक पहुँचा और निराशाके पागलपनमें उसने बहरे देवताओंसे अपनी दुःखभरी प्रार्थनायें सुन लेनेकी याचना की !

आदमी जब जंगली-पनसे शनैः शनैः मुक्त होता है तो वह क्रमशः अपनी लकड़ी और पत्थरकी गुड़ियोंमें भक्ति कम करता जाता है और उनकी जगह बहुत-सी दैवी शक्तियोंको दे देता है और जब उसके ज्ञानमें थोड़ी और वृद्धि होती है तब वह उन छोटी दैवी शक्तियोंको भी एक ओर हटा देता है और तब वह एक ऐसी शक्तिमें विश्वास करने लगता है जिसे वह मान बैठता है कि वह अनन्त है और सर्वोपरि है। क्यों कि वह इस शक्तिको प्रकृतिसे ऊपरकी चीज़ मानता है, इस लिये वह इससे सहायताकी आशाके बदलेमें इसकी पूजा करता है या प्रार्थनायें करता है। अन्तमें जब उसे यह पता लगता है कि उसे इस शक्तिसे किसी प्रकारकी सहायता नहीं ही मिलती, जब उसे पता लगता है कि 'अनन्त' की खोजके 'अन्त' में असफलता ही है, जब उसे पता लगता है कि आदमी किसी भी तरह सकारण-अस्तित्वसे परे और कोई कल्पना कर ही नहीं सकता, तब वह अपने इर्द-गिर्दके संसारकी परीक्षा करना आरम्भ करता है और तब वह आत्म-निर्भर हो जाता है।

लोग विचार करना आरम्भ कर रहे हैं, सोचना तथा खोज करना। धीरे-धीरे, बड़ी कठिनाईसे, किन्तु निश्चयात्मक रूपसे देवताओंको पृथ्वीसे विदा किया

जा रहा है। अधिक धार्मिक आदमी यह समझने लगे हैं कि देवता कभी कभी ही आदमियोंके मामलोंमें हस्तक्षेप करते हैं। अधिक बातोंमें हमें लगता है कि हम स्वतंत्र हैं। जबसे जहाजों और रेलोंके आविष्कार-स्वरूप एक देशकी उपज दूसरे देशमें आसानीसे भेजी जा सकनी सम्भव हुई है, देवताओंने लोगोंको अकालसे भूखा मारना छोड़ दिया है। कभी कभी वे किसी बालककी जान लेते हैं क्योंकि उसके माता-पिता ही उसे बलि चढ़ा देते हैं। हैजा, काला-ज्वर और चेचक अब भी 'दैवी' बीमारियाँ समझी जाती हैं किन्तु, खुजली आदि बीमारियोंके बारेमें लोग समझने लगे हैं कि वे प्राकृतिक कारणोंका परिणाम हैं।

धर्म किसी भी तरह परमात्माकी विशेष कृपाके विचारको नहीं छोड़ सकता। यदि वह इसे छोड़ दे तो उसके पास रह ही क्या जाये? धर्मका यह आग्रह होना ही चाहिए कि प्रार्थना अवश्य पूरी होती है, प्रकृतिके ऊपर कोई एक शक्ति है जो भक्तोंकी प्रार्थना सुनती है और उसे मंजूर करती है तथा वह शक्ति किसी न किसी तरह सभीके खान-पानकी व्यवस्था करती है!

एक भक्त लगभग हर मौके पर अपने लड़केके दिमागपर यह संस्कार डालना चाहता था कि परमात्मा अपनी सारी सृष्टिकी सुध लेता है और उसकी व्यवस्था करता है। एक दिन उसने एक सारसको अपने भोजनकी तलाश करते देखा। अपने पुत्रको सम्बोधित करते हुए वह बोला—"देखो उसकी टाँगें कैसी बनी हैं, क्या ही लम्बी चोंच है! जरा देखो कि वह कैसे अच्छी तरह अपनी टाँगोंको पानीमें डालता और निकालता है! उसके चलनेसे एक भी लहर नहीं उठती है। इस प्रकार वह किसी प्रकारकी सूचना दिये बिना ही मछलीके पास पहुँच जाता है। इस पक्षीको देखकर यह स्वीकार करना ही पड़ता है कि परमात्मा कितना चतुर और कितना कृपालु है।"

लड़का बोला, "हाँ, यह मैं भी समझता हूँ कि जहाँ तक सारसकी बात है, सचमुच 'परमात्मा' बहुत कृपालु है; लेकिन पिताजी, मछलीके लिए परमात्माकी यह व्यवस्था कैसी है?"

कोई कोई विकसित धार्मिक विश्वासवाले अब यह नहीं मानते कि देवता मनुष्यके कारोबारमें कुछ बहुत हस्तक्षेप करते हैं, किन्तु वे मानते हैं कि संसारके

आरम्भमें किसी न किसी परमात्मा ने कुछ ऐसे नियम बना दिये हैं जिनसे संसार संचालित होता है। वे मानते हैं कि इन्हीं नियमोंकी बदौलत एक आदमी किसी लोहेकी सलाखकी सहायतासे अधिक बोझ उठा सकता है; और यह कि इस 'परमात्मा' ने प्रकृतिको ऐसा बनाया है और चीज़ोंकी ऐसी सुव्यवस्था की है कि एक समयमें दो चीजें एक ही स्थान कभी नहीं घेर सकतीं कि एक वस्तुको यदि एक बार चालित कर दिया जाये तो वह रोक दिये जाने तक संचालित ही रहेगी; कि एक घेरेके व्यासकी अपेक्षा बर्तुल सदैव अधिक होता है, और कि एक सम्पूर्ण चतुष्कोणमें पाँच या सात लकीरें न होकर बराबर बराबरकी चार लकीरें होती हैं। उनका आग्रह है कि यदि भगवान्‌ने हस्तक्षेप न किया होता तो एक चीज अपने ही एक हिस्सेसे छोटी भी हो सकती थी, और इस प्रकृतिकी अपेक्षा बलवान् किसी शक्तिके ही कारण एकका दुगना, दोके दुगनेसे अधिक हो सकता था और यह भी हो सकता था कि किसी लकड़ी अथवा रस्सीका एक ही सिरा हो।

वे परमात्माके कृतज्ञ हैं कि रविवार सप्ताहके बीचमें न पड़कर सप्ताहके अन्तमें पड़ता है और मृत्यु भी जीवनके आरम्भमें न आकर जीवनके अन्तमें आती है। इससे हमें इस पवित्रदिन तथा अपने अंतिम समयकी तैयारीके लिये अवसर मिल जाता है।

इन धार्मिक लोगोंको जहाँ देखो तहाँ 'परमात्मा' की योजना ही दिखाई देती है और यह कि कोई न कोई 'चेतन-शक्ति' व्यक्तिगत रूपसे हस्तक्षेप करती है। उनका आग्रह है कि संसार उत्पन्न किया गया है और सभी साधन स्पष्ट रूपसे निश्चित उद्देश्य लिये हुए हैं। वे हमारा ध्यान सूर्यके प्रकाशकी ओर आकर्षित करते हैं, फूलोंकी ओर आकर्षित करते हैं, सावन-भादोंकी वर्षाकी ओर आकर्षित करते हैं और उन सब चीजोंकी ओर जो सुन्दर हैं और उपयोगकी हैं।

क्या उन्होंने कभी यह सोचा है कि विकासकी दृष्टिसे एक नासूर भी उतना ही सुन्दर होता है जितना अत्यन्त रक्ताभ गुलाबका फूल? जिन्हें वे 'निश्चित उद्देश्य' की प्राप्तिके लिये 'नियत साधन' समझते हैं वे 'नासूर' में भी उतने ही स्पष्ट हैं जितने सावन-भादोंकी वर्षामें।

......भोजनके पचनेकी प्रक्रिया कितनी सुन्दर है! किस अनोखे ढंगसे रक्तमें 'विष' का संचार होता है ताकि 'नासूर' को उसका भोजन मिलता रहे! मनुष्यका सारा शरीर ही किस अद्भुत ढंगसे इस दैवी तथा सुन्दर नासूरकी 'चौथ' चुकाता है! किन प्रशंसनीय साधनोंसे यह अपने आस-पासके काँपते हुए कोमल मांससे अपना भोजन ग्रहण करता है! शनैः शनैः किन्तु निश्चयात्मक रूपसे यह कैसे बढ़ता जाता है! किन अद्भुत लम्बी और पतली शिराओंद्वारा यह पीड़ाके गुप्ततम स्नायुओं तक पहुँच कर अपने जीवन और आधारकी सामग्री खोजता है! इसके वर्ण कितने सुन्दर हैं! जरा अणुवीक्षण यन्त्रसे देखें कि यह व्यवस्था और सौन्दर्यका कितना बड़ा 'करिश्मा' है! मनुष्यकी सारी चतुराई इसकी वृद्धिको नहीं रोक सकती। ज़रा विचार तो करो कि यह कितना बड़ा आविष्कार है कि एक नासूरकी रचनाके लिये एक आदमीके जीवनकी बलि चढ़ जाय? क्या यह सम्भव है कि हम एक 'नासूर' की ओर ध्यानसे देखें और इस सृष्टिमें किसी रचना-क्रमके होनेकी बातपर सन्देह कर सकें? क्या यह सम्भव है कि हम यह मान सकें कि इस अद्भुत 'नासूर' का आविष्कारक अनन्त शक्तिशाली होगा, अनन्त बुद्धिवाला होगा और वैसा ही दयालु होगा!

हमें बताया जाता है कि एक विशेष रचना-क्रमके अनुसार संसारकी उत्पत्ति हुई है, और यह मानना कि प्रकृति अनन्तकालसे यों ही चली आई है एक बेहूदा बात है। ईश्वर तो अनन्त कालसे यों ही चला आ ही सकता है! यदि ईश्वरने सृष्टिकी रचना की है तो कोई न कोई एक समय रहा होगा जब उसने सृष्टिरचनाका आरम्भ किया हो। उससे पहले एक अनन्तकाल रहा होगा जब किसी भी चीजका अस्तित्व नहीं था—एकदम किसीभी चीज़का नहीं—यदि था तो केवल इस कल्पित ईश्वरका। इस सिद्धान्तके अनुसार एक अनन्तकाल तक यह ईश्वर खाली बैठा रहा—एकदम निकम्मा।

यदि यह स्वीकार भी कर लें कि परमात्माने यह सृष्टि बनाई, तो प्रश्न उठता है कि उसने किस चीज़से यह सृष्टि बनाई? निश्चयात्मक रूपसे यह 'कुछ नहीं' में से तो बनी ही होगी। सामग्रीकी दृष्टिसे 'कुछ नहीं' से बढ़-कर कोई चीज़ नहीं। इसका मतलब है कि 'परमात्मा' ने यह सृष्टि अपनेमें-

से ही बनाई क्योंकि उस समय केवल उसीका अस्तित्व था। यह संसार तो 'भौतिक' रहा होगा। इसी विचारको अपने मनमें स्थान देकर 'मिलेतुस्स' (Miletus) के एनक्ज़ीमांदेर (Anaximander) ने कहा है कि सृष्टिकी उत्पत्ति (De. Composition) अनन्तकी वि-रचना है।

विज्ञानने यह बात सिद्ध कर दी है कि यदि यह पृथ्वी दूसरे विश्वोंसे आकर्षित न हो तो यह सूर्यके साथ आ टकरायेगी और वे दूसरे विश्व उनके भी आगेके दूसरे विश्वोंद्वारा आकर्षित होंगे और इसी प्रकार एक अनन्त क्रम समझो। इससे सिद्ध हुआ कि यह भौतिक संसार अनन्त है। यदि एक 'अनन्त' ईश्वरमेंसे एक 'अनन्त' सृष्टि बनी तो 'ईश्वर' का कितना हिस्सा शेष रहा?

शनैः शनैः लोग सृष्टि-रचयिताकी कल्पनाको छोड़ रहे हैं और यथार्थ रूपसे वैज्ञानिक ढंगसे विचार करनेवाले सभी यह बात स्वीकार करते हैं कि प्रकृतिका अस्तित्व अनन्त कालसे यों ही रहा होगा। इसका नाश नहीं हो सकता। जिसका नाश नहीं हो सकता, उसकी उत्पत्ति भी नहीं हो सकती।

हमारी शताब्दिने जो सबसे महान् आविष्कार किया है वह यह कि इसने इस बातको विज्ञानके आधारपर सिद्ध कर दिया है कि 'गति' सदासे रही है और उसका नाश नहीं हो सकता। न प्रकृतिमें ही कोई वृद्धि या कमी हो सकती है और न 'गति' में। 'गति' का प्रकृतिसे पृथक् अस्तित्व रह नहीं सकता। प्रकृति 'गति' के ही सम्बन्धसे रहती है और इस लिये प्रकृतिसे पृथक् अथवा प्रकृतिसे परे किसी 'गति' का अस्तित्व एक असम्भव सिद्धि है।

तो 'गति' भी अनन्त कालसे मौजूद रही होगी, और इसकी रचना नहीं ही हुई होगी। पृथ्वीकी जड़ी-भूत अवस्थासे लेकर हमारे प्रेम-पात्रकी आँखों-तक प्रकृतिके जो असंख्य रूप हैं और सामान्य 'गति' से लेकर महान्से महान् विचार तक 'गति' अथवा शक्तिके जो अनन्त रूप हैं वे सभी न उत्पन्न किये गये हैं और नहीं किसीके अधिकारमें हैं।

विचार 'गति' का एक स्वरूप है। हम जिस 'गति' अथवा शक्ति-

के बलसे चलते हैं उसीसे सोचते भी हैं। आदमी एक ऐसा संस्थान है जो 'गति' के अनेक रूपोंको विचार-शक्तिमें बदल देता है। आदमी एक मशीन है जिसमें हम भोजन डालते हैं और जिसमेंसे हम विचार निकालते हैं।

इसलिये परमात्माके लिये जहाँ यह आवश्यक है कि वह 'भौतिक' हो वहाँ उसके लिये यह भी आवश्यक है कि वह कोई अंग-प्रत्यंगोंवाला एक संस्थान हो जिससे वह 'गति' अथवा 'शक्ति' को विचार-शक्तिमें परिवर्तित कर सके। हम इसीको भोजन करना कहते हैं। इसलिये यदि परमात्मा सोचता है तो उसे भोजन भी करना चाहिये। अर्थात् उसके पास कोई न कोई ऐसा साधन होना चाहिये जिससे उसे सोचनेके लिये आवश्यक शक्ति प्राप्त हो सके। हम ऐसे किसी जीवकी कल्पना नहीं कर सकते कि जो अनन्त काल तक प्रकृतिको शक्ति प्रदान करता रहे, किन्तु जिसके पास स्वयं उस शक्तिके प्राप्त करनेका कोई साधन न हो।

यदि न प्रकृति होती और न 'गति' अथवा शक्ति होती तो हमारे पास प्रकृतिसे परे किसी 'पुरुष' के होनेका क्या प्रमाण था ? ईश्वरवादी कदाचित् उत्तर देंगे—"यहाँ नियम है, व्यवस्था है, कार्य-कारणका सम्बन्ध है और इन सबके अतिरिक्त प्रकृति स्वयं अपनेमें कभी 'गति' नहीं पैदा कर सकती थी।"

थोड़ी देरके लिये, तर्कके लिये, मान लीजिये कि प्रकृति और गति अनन्त कालसे चले आ रहे हैं। अब, मान लीजिये कि दो अणु आपसमें मिलते हैं तो क्या इसका कोई परिणाम होगा ? हाँ। यदि वे समान शक्तिसे ठीक विरोधी दिशाओंमें आते हैं तो इतना तो कहा ही जा सकता है कि वे रुक जायँगे। यह 'कार्य' होगा। यदि यह ऐसा है तो आपके पास 'प्रकृति' भी है, 'गति' अथवा 'शक्ति' भी है और 'प्रकृति' से परे बिना किसी 'पुरुष' की स्वीकृतिके 'कार्य' भी है। अब फिर कल्पना करें कि यदि दो दूसरे अणु पहले ही दो अणुओंकी तरह ठीक उन्हीं अवस्थाओंमें इकट्ठे हों तो क्या इसका ठीक पहले ही जैसा परिणाम नहीं होगा ? हाँ। नियम और व्यवस्थाका मतलब यही है कि समान कारणसे समान कार्य सिद्ध होता है।

तो हमारे पास 'प्रकृति' भी है, 'गति' अथवा शक्ति भी है, 'कार्य' भी है, नियम और व्यवस्था भी है, और 'प्रकृति' से परे कोई 'पुरुष' भी नहीं है। अब हम जानते हैं कि हर 'कार्य' का कुछ 'कारण' होना चाहिये और हर 'कारण' से कोई न कोई कार्य। अणु इकट्ठे हुए तो उनका एक परिणाम हुआ, अर्थात् उनसे एक 'कार्य' उत्पन्न हुआ, और क्योंकि हर 'कार्य' अपनेमें एक कारण होता है, तो अणुओंके एकत्र होनेसे जो 'कार्य' हुआ वह किसी न किसी दूसरी चीज़का कारण भी अवश्य होगा। तो अब हमारे पास 'प्रकृति' है, 'गति' अथवा 'शक्ति' है, 'नियम' है, 'व्यवस्था' है 'कार्य-कारण' हैं और 'प्रकृति' से परे कोई 'पुरुष' नहीं। उस प्रकृतिसे परे पुरुषके लिये शून्यके अतिरिक्त कुछ शेष नहीं बचा है। उसका सिंहासन शून्य है; और उसके, जिस राज्यकी चर्चा बड़े अभिमानसे की जाती है, उसमें न 'प्रकृति' है न 'गति' अथवा 'शक्ति' है, न 'नियम' है, न कोई 'कार्य-कारण' है।

लेकिन, इस सारी 'प्रकृति' को 'गति' किसने दी? यदि 'प्रकृति' और 'शक्ति' अनन्त कालसे चली ही आ रही हैं, तब, प्रकृति सदैवसे गतिमान रही होगी। बिना 'गति' के कोई 'शक्ति' हो नहीं सकती। 'शक्ति' सदा 'गतिशील' है। स्थिरता न कहीं है और न कहीं हो ही सकती है। इस-लिये यदि 'प्रकृति' और 'शक्ति' अनन्त कालसे चली आ रही हैं तो इसी प्रकार 'गति' भी। समस्त विश्वमें एक अणु भी ऐसा नहीं है, जो स्थिर हो।

प्रकृतिसे बाहर किसी 'देव' के लिये कोई स्थान नहीं। वह है ही नही। 'प्रकृति' अपनी अनन्त गोदमें समस्त जड़ प्रकृति और समस्त 'शक्ति' को लिये बैठी है। जो उसकी बाँहोंसे बाहर है उसमें दोनों नहीं हैं, और वह किसी एक भी मनुष्यकी पूजाकी वस्तु नहीं हो सकता। प्रकृतिसे स्वतन्त्र और प्रकृतिके भी ऊपर किसी 'शक्ति' के अस्तित्वके सिद्ध करनेका केवल एक ही तरीका है और वह यह कि चाहे एक ही क्षणके लिये क्यों न हो कार्य-कारणकी श्रृंखलाको तोड़ दिया जाय। संसारकी अनन्त

शृंखलामेंसे केवल एक कड़ी ले लीजिये; एक ही क्षणके लिये इस महान् स्रोतको रोक दीजिये, तो आपने असंदिग्ध रूपसे यह सिद्ध कर दिया कि प्रकृतिका कोई एक स्वामी है। केवल एक क्षणके लिये आप इस वास्तविकताको बदल दीजिये कि जड़ प्रकृति अथवा रूप रूपको आकर्षित करता है तुरन्त एक 'ईश्वर' के लिये जगह बन जायगी।

असभ्यसे असभ्य मानवकी भी समझमें यह बात आ चुकी है। इसी लिये उसे हमेशा एक प्रातिहार्य अथवा एक 'करिश्मे' की गवाही चाहिये। किसी धर्मके संस्थापकके लिये यह आवश्यक है कि वह पानीकी शराब बना दे, एक शब्दसे अन्धों और लंगड़ोंको अच्छा कर दे, तथा एक स्पर्शसे मुर्दोंको जिला दे। उसके लिये आवश्यक रहा कि वह अपने असभ्य शिष्योंको यह सिद्ध करके दिखाये कि वह प्रकृतिके नियमोंसे परे है। अज्ञानके युगमें यह कार्य कठिन न था। असभ्य मनुष्य असीम विश्वासी था। उसके लिये जो आश्चर्यकारक हो वही सुन्दर था। जो रहस्यमय हो वही सर्वोच्च था। इसीलिये प्रत्येक धर्म अपने आपको किसी न किसी 'करिश्मे' पर आश्रित सिद्ध करता है अर्थात् प्रकृतिके किसी न किसी नियमके उल्लंघनपर अर्थात् सफेद-झूठपर।

संसारके सारे इतिहासमें किसीने सत्यको कभी किसी करिश्मेकी सहायतासे सिद्ध नहीं किया। सत्य 'करिश्मों' की सहायता लेनेसे घृणा करता है। केवल असत्यने ही 'करिश्मों' की सहायता ली है। आजतक कभी कोई 'करिश्मा' नहीं किया गया। किसी ऐसे आदमीने जो पागल न हो गया हो कभी यह नहीं सोचा कि उसने कोई 'करिश्मा' किया है और जब तक कोई 'करिश्मा' नहीं तब तक प्रकृतिसे बढ़कर और प्रकृतिसे स्वतन्त्र किसी भी शक्तिके अस्तित्वको स्वीकार नहीं किया जा सकता।

धर्म-वादी चाहते हैं कि हम उनके कथनोंपर विश्वास करें। उनके धर्मका कोई एक भी सन्त-महात्मा आज कोई एक भी 'करिश्मा' करके दिखा दे, हम विश्वास कर लेंगे। हमें कहा जाता है कि प्रकृतिसे परे कोई एक शक्ति है। वह 'शक्ति' एक क्षणके लिये ही सही प्रकृतिपर अधिकार करके बता दे, हम उनके दावोंकी सत्यता स्वीकार कर लेंगे।

प्राचीन समयमें धर्मने प्रकृतिके नियमोंका उल्लंघन करके परमात्माके अस्तित्वको सिद्ध किया। उस समय अविश्वसनीय आसानीके साथ करिश्में किये जाते थे। वे इतने अधिक होने लगे कि धर्मने अपने पुरोहितोंको उनसे विरत रहनेकी आज्ञा दी। और अब क्योंकि लोगोंको कुछ थोड़ी बुद्धि आ गई है, तो वही धर्म न केवल यह स्वीकार करता है कि वह कोई 'करिश्में' नहीं कर सकता किन्तु अब उसका कहना है कि कार्य-कारणकी सतत अविछिन्न धारा ही प्रकृतिके परे किसी शक्तिके अस्तित्वका प्रमाण है। यथार्थ बात यह है कि कार्य-कारणकी अविच्छिन्न शृंखला ठीक इससे उल्टी बात सिद्ध करती है।

प्रकृति समर्थ-कारणोंकी एक अनन्त शृंखलाके अतिरिक्त कुछ नहीं। वह कुछ भी पैदा नहीं करती, किन्तु वह सदैव परिवर्तित होती रहती है। उसका कोई आरम्भ नहीं था, और उसका कोई अन्त नहीं हो सकता।

धार्मिक लोगोंमें जो श्रेष्ठ विचारक हैं वे भी इतनी बात तो स्वीकार करते हैं कि जड़-प्रकृतिमें किसी ईश्वरके अस्तित्वका कोई प्रमाण नहीं। उन्हें बुद्धिमें ईश्वरके अस्तित्वका प्रमाण दिखाई देता है, और बड़े ही भोलेपनके साथ वे कहते हैं कि बुद्धि प्रकृतिके परे हैं। यथार्थमें कहें तो प्रकृतिके विरुद्ध है। उनका आग्रह है कि कमसे कम मानव एक विशिष्ट-रचना है। उसकी खोपड़ीमें कहीं, उस दिव्य-ज्योतिका, उस महान् प्रथम कारणका, एक कण है। उनका कहना है कि जड़-प्रकृतिसे विचारकी उत्पत्ति नहीं हो सकती, किन्तु विचारसे जड़-प्रकृति अथवा 'रूप' की उत्पत्ति हो सकती है। उनका कहना है कि मनुष्यमें 'बुद्धि' है, इस लिये उसकी 'बुद्धि' से बढ़कर कोई न कोई बुद्धि अवश्य होनी चाहिये। वे यह क्यों नहीं कहते कि परमात्मामें 'बुद्धि' है, इस लिये उसकी बुद्धिसे बढ़कर कोई न कोई बुद्धि अवश्य होनी चाहिये ? जहाँतक हम जानते हैं जड़ प्रकृतिसे पृथक् कहीं कोई 'बुद्धि' नहीं है। हम विचारकी कल्पना उसी सीमा तक कर सकते हैं जहाँ तक कि दिमागमेंसे उसकी उत्पत्ति होती है।

जिस विज्ञानके द्वारा वे एक असम्भव तथा अज्ञेय चेतन-शक्तिके अस्तित्वका प्रतिपादन करते हैं वह दर्शन अथवा धर्म कहलाता है। दैववादी लोग

स्वीकार करते हैं कि जहाँतक प्रकृतिकी बात है, उससे प्रकृतिसे परे किसी शक्तिका अस्तित्व असिद्ध ही होता है, क्यों कि प्रकृतिमें कारणोंकी अनन्त शृंखलाके अतिरिक्त और कुछ नहीं है; मशीनगत मजबूरीके अतिरिक्त और कुछ नहीं। इस लिये वे प्रकृतिसे ऊपरकी शक्तिका प्रतिपादन करनेके लिये मन, अथवा चेतनाकी बात करते हैं। कठिनाई यह है कि मन अथवा चेतनामें भी हमें कारणोंकी यही अनन्त-शृंखला दिखाई देती है; वही मशीनगत मजबूरी। हर विचारका कोई न कोई पर्याप्त कारण रहा ही होगा। प्रत्येक उद्देश्य, प्रत्येक इच्छा, प्रत्येक भय, प्रत्येक आशा और प्रत्येक स्वप्नकी अवश्यंभावी उत्पत्ति हुई ही होगी। आदमीके मस्तिष्कमें 'कुदरत' अथवा आकस्मिक घटनाके लिये कोई जगह नहीं। ग्रहोंकी 'गति' जिस प्रकार निश्चित नियमोंका अनुसरण करती है उसी प्रकार विचारोंकी 'गति' भी। एक कविता भी प्राकृतिक शक्तिकी उपज है, वैसे ही जैसे कोई पर्वत अथवा समुद्र। यदि आप मनुष्यके दिमागमें किसी ऐसे विचारकी खोज करेंगे जिसका कोई कारण न हो तो आप अपने प्रयत्नमें विफल होंगे। प्रत्येक मानसिक क्रिया कुछ निश्चित घटनाओं तथा प्रत्ययोंका अवश्यंभावी परिणाम होती है। भौतिक प्रक्रियाकी अपेक्षा मानसिक प्रक्रिया बहुत सुलझी हुई रहती है और इसलिये बहुत रहस्यमय। क्यों कि वह रहस्यमय होती है इसीलिये लोग उसे ईश्वरके अस्तित्वका श्रेष्ठ प्रमाण मानते हैं। कोई भी जो सरल है, जो ज्ञात है, जो समझमें आता है उसकी ओर देखकर ईश्वरके अस्तित्वका स्वीकार नहीं करता; किन्तु जो उलझा हुआ है, जो अज्ञात है, जो अज्ञेय है, उसीकी ओर देखकर। हमारे अज्ञानका नाम 'परमात्मा' है। जो हम जानते हैं वही 'विज्ञान' है।

जब हम एक बार इस सिद्धांतको छोड़ देते हैं कि किसी अनन्त शक्तिने 'प्रकृति और 'गति' को जन्म दिया और उनका संचालन करनेके लिये कुछ नियमोंकी रचना की, तो 'नियामक' का विचार अपने आप ही जाता रहता है। तब जो सच्चा पुरोहित है वह किसी झूठमूठके ईश्वरका प्रतिनिधि नहीं रहता, किन्तु वह 'प्रकृति' का व्याख्याता बन जाता है।

किन्तु, ईश्वर-वादीका कहना है, "तुम प्रत्येक बातकी व्याख्या नहीं कर सकते; तुम प्रत्येक बात समझा नहीं सकते; और जिसकी तुम व्याख्या नही

कर सकते; जिसे तुम समझ नहीं सकते वही मेरा ईश्वर है।"

हम प्रत्येक दिन अधिकाधिककी व्याख्या करते जा रहे हैं। हम प्रत्येक दिन अधिकाधिक समझते जा रहे हैं, इसका मतलब हुआ कि परमात्मा प्रतिदिन छोटा होता जा रहा है।

इससे धर्म-वादी हतोत्साह ही होगा। उसका आग्रह है कि केवल मूल-कारण ही बिना किसी कारणके अस्तित्वमें आ सकता है और वह अकारण-कारण ही ईश्वर है।

हमारा निवेदन है कि प्रत्येक 'कारण' से 'कार्य' की उत्पत्ति होनी ही चाहिये। यदि कोई 'कारण' किसी 'कार्य' को उत्पन्न नहीं करता तो वह कारण ही नहीं। हर कार्यको फिर 'कारण' बनना ही होगा। इस लिये 'प्रकृति' में कभी कोई 'अंतिम कारण' हो ही नहीं सकता, क्योंकि वह तथाकथित 'अंतिम कारण' भी किसी न किसी कार्यको उत्पन्न करेगा ही और फिर वह कार्य भी अवश्यमेव कारण बनेगा ही। इन सिद्धान्तोंका प्रतिरूप भी सत्य होना चाहिये। हर कार्य कभी न कभी एक कारण रहा होगा और हर कारण एक कार्य। इसलिये कभी कोई प्रथम कारण हो ही नहीं सकता। अंतिम कार्यकी तरहसे ही प्रथम कारणका होना भी असम्भव बात है।

विश्वसे परे कहीं कुछ नहीं है और विश्वके भीतर प्रकृतिसे बढ़कर न कुछ है और न कुछ हो ही सकता है।

ज्यों ही ये महान् सत्य समझमें आ जाते हैं और स्वीकार हो जाते हैं तो फिर किसी सामान्य अथवा विशेष भगवानमें विश्वास करना असम्भव हो जाता है। उसी क्षणसे आदमी किसी काल्पनिक भगवानको प्रसन्न करनेके प्रयत्नोंसे विरत होकर अपना सारा समय और शक्ति इस संसारकी बातोंमें लगाने लग जाता है। वह प्रार्थनाके द्वारा किसी इच्छाकी पूर्तिकी आशा छोड़ देता है। एक बड़ी हद्दतक भविष्यके साम्राज्यसे अनिश्चितताका अन्तर्धान हो जाता है, और मनुष्य प्रकृतिपर एकके बाद दूसरी विजय-से उत्साहित होकर एक ऐसी महत्ताको प्राप्त कर लेता है कि जिसे मिथ्या-विश्वासके शिष्योंने कभी प्राप्त नहीं किया।

मानव-जातिकी योजनाओंमें कोई सर्वव्यापी कभी किसी प्रकारका विघ्न उपस्थित नहीं कर सकेगा। अब कोई भी, कभी, इस बातमें विश्वास

नहीं करेगा कि किसी परमात्माद्वारा जातियों अथवा व्यक्तियोंका सुरक्षा अथवा विनाश होता है । धार्मिक रूढ़ियों और पक्षपातोंसे मुक्त विज्ञान अपने क्षेत्रमें सर्वोपरि स्थान ग्रहण करेगा। मनुष्यकी बुद्धि उन्मुक्त होकर नई नई खोज करेगी और अपने परिणामोंकी घोषणा करनेमें सर्वथा निर्भय होगी।

यदि हम यह स्वीकार कर लें कि किसी अनन्त शक्तिका व्यक्तियों और जातियोंके भाग्य-निर्माणमें हाथ है, तो सारा इतिहास एक अत्यन्त निर्दय और रक्त-पूर्ण नाटकका रूप धारण कर लेता है। युगके बाद युग—प्रत्येक युगमें शक्तिशालीने दुर्बलको अपने पाँवतले रौंधा है, धूर्तों और निर्दय मनुष्योंने सरल तथा अबोध आदमियोंको अपना गुलाम बनाया है और मानव-जातिके इतिहासमें कभी किसी परमात्माने दलितोंकी सहायता नहीं की है।

आदमीको अब किसी भगवानसे आशा करना छोड़ देना चाहिये। अब उसे यह जान लेना चाहिये कि भगवानके न कोई कान हैं, जिनसे वह सुन सके और न उसके हाथ ही हैं जिनसे वह किसीकी सहायता कर सके। वर्तमान अतीतकी अवश्यंभावी उपज है। अकस्मात् न कभी कुछ हुआ और न हो ही सकता है।

यदि संसारकी बुराइयाँ नष्ट होंगी तो उन्हें आदमी नष्ट करेगा। यदि दास मुक्त होंगे तो उन्हें आदमी मुक्त करेगा। यदि नवीन सत्योंका आविष्कार होगा तो आदमीके द्वारा होगा। यदि नंगोंको वस्त्र मिलेंगे, यदि भूखोंको भोजन मिलेगा, यदि अन्यायके स्थानपर न्याय होगा, यदि मजदूरको उसकी उचित मजदूरी मिलेगी, यदि मिथ्या विश्वासोंसे मुक्ति मिलेगी, यदि असहायोंकी रक्षा होगी और यदि अपने सत्यकी जय होगी, तो यह सब आदमीका ही काम होगा। भविष्यकी सारी विजयोंका श्रेय आदमीको और केवल आदमीको रहेगा।

जहाँ तक हम देख सकते हैं प्रकृति बिना किसी राग-द्वेषके, बिना किसी उद्देश्यके निरन्तर रचती रहती है, परिवर्तन करती रहती है और फिर फिर परिवर्तन करती रहती है। वह न रोती है न प्रसन्न होती है। वह बिना किसी विशेष कारणके आदमीको अस्तित्वमें लाती है और बिना किसी पछतावेके उसे मिटा देती है। उसके लिए उपकारी और अपकारीमें कोई

भेद नहीं। विष और भोजन, दुःख और सुख, जीवन और मृत्यु, हास्य और रुदन—सब उसके लिये समान हैं। वह न दयालु है और न निर्दयी। वह प्रसन्न नहीं होती और आँसुओंसे पिघलती नहीं। प्रकृतिमें केवल मनुष्यको ही 'सत्य' 'शिव' तथा 'सुन्दर' का बोध होता है। जहाँतक हम जानते हैं आदमी ही सर्वश्रेष्ठ चेतन-शक्ति है।

इतना सब होनेपर भी आदमी अभीतक यह विश्वास करता चला आ रहा है कि प्रकृतिसे परे और उससे स्वतन्त्र कोई शक्ति है। वह पूजा, पाठ, प्रार्थना और यज्ञोंसे उसकी सहायता प्राप्त करनेके लिये प्रयत्नशील है। उसकी शक्तिका सर्वश्रेष्ठ अंश इसी भूतकी सेवामें नष्ट हो गया है। जादू-टोनेकी सारी भयानक बातें इसी एक विश्वासका परिणाम हैं कि प्रकृतिसे परे कोई एक अत्यन्त नीच स्वभावका महान् प्राणी है, जो प्राकृतिक नियमोंसे सर्वथा मुक्त है। इसी प्रकार सारे धार्मिक मिथ्याविश्वासका आधार भी दो शक्तियोंके अस्तित्वमें विश्वास रहा है—एक बुरी एक अच्छी, जो जब चाहें तब संसारमें इच्छानुसार परिवर्तन कर सकती हैं। धर्मका इतिहास इन दोनों शक्तियोंमेंसे एकको प्रसन्न करने और दूसरीके प्रकोपसे बच निकलनेके मानवी प्रयत्नोंके इतिहासके अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं। दोनों शक्तियोंने मानव-हृदयमें घोर भय-संचार करनेके अतिरिक्त और किया भी कुछ नहीं। शैतानकी विकट हँसी और परमात्माका प्रकोप समानरूपसे भयानक रहे हैं।

आदमीको अपने ऊपर विश्वास करना सीखना चाहिये। धर्म-ग्रंथोंके पाठ उस कड़कड़ाती सर्दीसे न बचा सकेंगे, घर, अग्नि, और वस्त्र ही उसकी रक्षा कर सकेंगे। अकालसे बचनेके लिये लाखों धर्मोपदेशोंकी अपेक्षा एक हल अधिक उपयोगी है। संसारके आरम्भसे जितनी प्रार्थनाएँ की गई हैं वे सब उतने रोगोंको दूर न कर सकेंगी जितने रोग किसी एक सामान्य पेटेण्ट दवासे दूर हो सकते हैं।

मनुष्यके विचार यदि उनका कुछ भी वास्तविक मूल्य है, तो उन्हें स्वतन्त्र होना चाहिये। जहाँ भय होता है वहाँ दिमाग जड़ हो जाता है। वह बहादुरीसे किसी भी समस्याको स्वयं हल न कर जैसा कोई कहता है वैसा काँपते काँपते स्वीकार कर लेता है। जब संसारके अधिकांश मनुष्य किसी छोटे-मोटे

राजाके सन्मुख भी जमीनपर नाक रगड़नेके लिये तैयार रहते हैं तो किसी काल्पनिक परमात्माके सामने उनकी क्या पामर गति होगी ? ऐसी परिस्थितिमें उनके विचार किस मूल्यके होंगे ?

जातियोंके पतन और उत्थानकी व्याख्या यह कहकर करनेका कि 'यह परमात्माकी मर्ज़ी है' कोई अर्थ नहीं। इस तरहकी व्याख्यासे 'अविद्या' और 'विद्या' में कोई अंतर नहीं रह जाता और किसी भी चीज़की व्याख्या-का कुछ प्रयोजन नहीं रह जाता।

क्या ईश्वरवादी यह कह सकेगा कि विज्ञानका वास्तविक प्रयोजन यह निश्चय करना है कि परमात्मा क्यों और कैसे काम करता है ? इस दृष्टिकोणसे तो विज्ञानका अर्थ किसी लाल-बुझक्कड़ कानूनकी खोज करना मात्र हो जायगा।

दार्शनिक दृष्टिकोणसे विज्ञान जीवनके नियमोंका ज्ञान है, प्रसन्नताकी शर्तोंका ज्ञान है, हमारी परिस्थिति और हमारे सम्बन्धोंका ज्ञान है।

धुँधले अतीतमें मानवने कल्पनातीत दुःख भोगे हैं। अधिकांश कष्ट कमजोरोंको सहन करना पड़ा है और करना पड़ा है भोले भाले लोगोंको। स्त्रियोंके साथ विषैले जन्तुओंका-सा व्यवहार हुआ है, और बच्चोंको विषैले कीड़ोंकी भाँति पैरोंतले रौंधा गया है। छोटे छोटे बच्चों तककी 'बलि' चढ़ाई गई हैं। छोटी छोटी बच्चियोंको साँपोंको सौंप दिया गया है। जातियोंकी जातियोंको शताब्दियों तक दास बने रहना पड़ा है और यह सब हर जगह और इतना अधिक हुआ है कि वाणी व्यक्त नहीं कर सकती। इस सारे समयमें दुखियोंने 'प्रार्थनाएँ' की हैं; अकाल-पीड़ितोंने 'याचनाएँ' की हैं, किन्तु 'दैव' हमेशा बहरा और अंधा ही सिद्ध हुआ है।

आखिर देव आदमीके किस काम आये हैं ?

यह कहना कि किसी परमात्माने दुनियाको बनाया, कुछ निश्चित नियम स्थिर किये, और तब दूसरे विषयोंकी ओर ध्यान देने लगा, उसने अपने बच्चोंको कमजोर, अज्ञानी, असहाय रहने दिया और अकेले ही जीवन-संग्राममें जूझनेके लिये छोड़ दिया; कोई उत्तर नहीं हुआ। यह घोषणा करनेसे कोई बात नहीं बनती कि यह परमात्मा किसी दूसरे संसारमें अपनी प्रजाके कुछ लोगोंको अथवा सभीको सुखी बनायेगा। हमें इस

बातका क्या अधिकार है कि हम एक सर्वज्ञ, सर्वहितरत, सर्वशक्तिमान् परमात्मासे यह आशा करें कि उसने जो कुछ अभी तक किया है अथवा कर रहा है भविष्यमें वह उससे कुछ अच्छा कर सकेगा ? संसार असम्पूर्णताओंसे परिपूर्ण है। यदि इसे एक अनन्त शक्तिशाली ईश्वरने बनाया है तो हम किस आधारपर यह कहें कि वह इस संसारको जैसा यह है भविष्यमें इससे अधिक सम्पूर्ण बना देगा ? यदि वह अनंत 'पिता' अपने पुत्रोंको अभी अज्ञान और दरिद्रताकी अवस्थामें रहने देता है, तो इसका क्या प्रमाण है कि वह कभी उनकी दशामें कुछ सुधार करेगा ? क्या भविष्यमें परमात्मा अधिक शक्तिशाली हो जायगा ? क्या वह अधिक दयावान् हो जायगा ? क्या अपनी दरिद्र सन्तानके लिए उसका प्रेम बढ़ जायगा ? क्या जो अनंत ज्ञानी है, जो अनंतशक्तिशाली है तथा अनंत करुणामय है, उसके आचरणमें भी कुछ परिवर्तन हो सकता है ? क्या 'अनन्त' में भी किसी प्रकारके 'सुधार' की गुंजायश है ?

धार्मिक लोगोंका कहना है कि यह संसार एक प्रकारका स्कूल है; और जिन दुःखोंसे हम घिरे हुए हैं वे हमारी आत्माओंके विकासके लिये हैं। कष्ट पानेसे ही हम पवित्र, शक्तिशाली, सदाचारी और महान् बन सकते हैं।

थोड़ी देरके लिये मान लें कि यह ठीक है, तो ऐसे लोगोंका जो बचपनमें ही मर जाते है क्या होगा ? इस दर्शनके अनुसार छोटे बच्चोंकी आत्माओंका तो कभी विकास नहीं हो सकता ? वे अभागे दुख-दर्द न भोग सके, और इसलिये उनका आत्म-विकास न हो सका और इसके परिणामस्वरूप अब उन्हें अनन्त काल तक अविकसित मानसिक अवस्थामें ही रहना पड़ेगा ! यदि इस विषयमें धार्मिक लोगोंका कथन ही ठीक है तो सुखी लोगोंसे बढ़कर कोई अभागा नहीं ! जो दुःखी हैं, जो दरिद्री हैं, वे ही हमारी ईर्ष्याके पात्र होने चाहिये। यदि इस जीवनमें मानवके विकासके लिये दुःखी रहना आवश्यक है तो स्वर्गके सुखोंमें आत्माका विकास कैसे हो सकता है ?

जबसे घड़ीका आविष्कार हुआ है तबसे कुछ लोग ऐसा समझने लगे हैं कि उनके 'रचना'के तर्कका उत्तर दिया ही नहीं जा सकता। धार्मिक सम्प्रदायोंका कथन है कि यह संसार और जो कुछ इसमें हम

देखते हैं लगभग उसी रूपमें बनाया गया था जैसा हमें वह आज दिखाई देता है। घास, फूल, वृक्ष, पशु, (आदमियोंको लेकर) सभी विशिष्ट रचनाएँ हैं। उनका परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है।

अति रूढ़िवादी भी यह तो स्वीकार करेंगे कि कुछ भूमि समुद्रके अन्तर्गत चली गई है, कुछ भूमिको समुद्रने भी अपनेमें आत्मसात् कर लिया है, और कुछ पर्वत सृष्टि-रचनाके आरम्भिक कालकी अपेक्षा कुछ नीचे हो जा सकते हैं। क्रमिक विकासका सिद्धान्त हमारे पूर्वजोंको अज्ञात था। 'विकास' की कल्पना उन्हें सूझी ही नहीं। हमारे पूर्वजोंने संसारमें जिस जिस चीज़का जो स्थान है उसे आदिकालसे वैसा ही माना। उन्हें लगा कि दैवने मानो, पृथ्वीकी अभी अभी रचना की है। उन्हें अनन्त वर्षोंके शनैः शनैः विकासोंकी कुछ जानकारी न थी। उनकी मान्यता थी कि यह असंख्य प्रकारकी वनस्पति और पशु-जगत् आरम्भसे ऐसा ही चला आया है।

क्या बनाई गई चीज़ोंमें जो विकास दिखाई देता है, उससे यह सिद्ध नहीं होता कि उनके रचयितामें भी विकास हो रहा है?

क्या एक सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् और सर्वभूतहित-रत 'परमात्मा' मनुष्यकी उत्पत्ति करने जाकर सर्व प्रथम जीवनके तुच्छतम रूपोंकी रचना करेगा, और इतने धीरे धीरे कि किसीको पता तक न लग सके? अपनी रचनाके गँवारू-आरम्भमें, वह मनुष्यकी रचना होने तक विकास करता रहेगा? क्या असंख्य युग केवल ऐसी बेढंगी शकलोंको निर्माणमें नष्ट कर दिये जायेंगे, जिनका आगे कोई उपयोग नहीं? क्या आदमीकी बुद्धिको इस बातमें विवेककी गन्ध भी आ सकती है कि सारी पृथिवीको रेंगनेवाले भयानक जन्तुओंसे ढँक दिया जाय, जो केवल दूसरोंकी पीड़ापर ही जीवित रहते हैं? क्या हम इसमें कुछ भी औचित्य देख सकते हैं कि पृथिवीकी रचना ऐसे ढंगसे की जाय कि उसके एक बहुत ही थोड़ेसे हिस्सेपर मनुष्य जैसा समझदार प्राणी पैदा हो सके? कौन है जो ऐसे संसारके रचयिताको 'दयालु' कह सके, जिसमें प्रत्येक जीव किसी न किसी दूसरे जीवको खा रहा है, अर्थात् प्रत्येक मुँह एक कसाई-खाना है और प्रत्येक पेट एक क़ब्र? क्या इस सर्व-व्यापक और अनन्त कसाई-खानेमें कहीं भी 'अनन्त-ज्ञान' और 'प्रेम' ढूँढ़ा जा सकता है?

हम उस पिताके बारेमें क्या सोचेंगे जो अपने बच्चोंको एक खेत दे दे और इससे पहले कि वे उसपर अधिकार कर सकें, वह उसमें हजारों विषैली झाड़ियाँ और लतायें लगा दे, उसमें भयानक जन्तुओं और विषैले सर्पोंको बसा दे, आस-पास जगह जगह कुछ दलदल कर दे जिससे मैलेरिया पैदा होता रहे, और कुछ ऐसा कर दे कि ज़मीन यदा-कदा फटकर उसके कुछ बच्चोंकी निगल जाया करे, और इसके अतिरिक्त एकदम पड़ौसमें कुछ ज्वालामुखी पर्वत खड़े कर दे, जो समय समयपर उबलकर उसके बच्चोंको आगके दरियामें डुबा दिया करें ! थोड़ी देरके लिये मान लीजिये कि इस पिताने अपने बच्चोंको यह भी नहीं बताया कि कौन कौनसे पौधे मृत्यु-कर हैं, कौन कौन सर्प विषैले होते हैं, भूकम्पोंके बारेमें कुछ भी नहीं बताया और ज्वालामुखी पर्वतोंकी बातको एक रहस्य बनाकर रखा; तो हम ऐसे पिताको क्या कहेंगे—देवता या राक्षस ?

और यही सब कुछ है जो परमात्माने किया है।

एक मेरे भोले-भाले मित्रको जब यह पता लगा कि मैंने कहा है कि संसार असम्पूर्णताओंसे भरा हुआ है, तो उसने पूछा क्या यह बात सत्य है ? जब मालूम हुआ कि हाँ बात तो सत्य है तब उसे बड़ा आश्चर्य्य हुआ कि कोई आदमी अपने मुँहसे ऐसी बात कैसे निकाल सकता है ? उसने कहा कि उसकी सम्मतिमें किसी एक भी असम्पूर्णताका नाम लेना असम्भव है। उसने कहा, कृपया, कोई एक तो सुधार बताइये, जो यदि आपको शक्ति दे दी जाय तो आप करना चाहें। मेरा उत्तर था—मैं चाहूँगा कि बीमारीकी 'छूत' लगनेकी बजाय अच्छे स्वास्थ्यकी 'छूत' लग जाया करे।

सच्ची बात यह है कि संसारके दुःखों, कष्टों तथा वेदनाओंका इस कल्पनासे मेल ही नहीं बैठ सकता कि हमें किसी सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् और सर्वभूतहितरत परमात्माने पैदा किया था, जो समस्त प्रकृतिके ऊपर है और उससे स्वतन्त्र है, तथा वही परमात्मा हमारी रक्षा और देख-भाल भी करता है।

इतना होनेपर भी 'पादरी' इस संसारके सभी दुःखोंके मुकाबिलेपर तुलाके दूसरे पलड़ेमें दूसरे लोकके सुखोंको रखते हैं। हमें विश्वास

दिलाया जाता है कि स्वर्गमें सब सुख ही सुख है, वहाँ अनभ्र बादल होते हैं; सर्वत्र सुख ही सुख, शान्ति ही शान्ति।

जब हमने एक बार इस बातको दिखा दिया कि आदमी अपनी ही कृति परमात्माके सामने कैसे गुलामकी तरह काँपने लग गया, तो प्रश्न उठता है कि तब आदमीने इन आकाशके राजाओंसे, इन बादलोंके तानाशाहोंसे, इस नभोमण्डलकी सत्तासे अपने आपको मुक्त कैसे किया? जितना भी हो सका उस सीमा तक भी, वह अपने अज्ञानसे, अपने भयसे तथा मिथ्या विश्वाससे कैसे मुक्त हुआ?

सम्भवतः पहली बात जिसने मानवके मस्तिष्कको मुक्ति दी वह संसारमें व्यवस्था. नियम तथा समय-पालनका आविष्कार था। इससे उसे इस बातमें सन्देह होने लगा कि संसारमें जो घटनाएँ घटती हैं उनका मानवसे कुछ अनिवार्य सम्बन्ध नहीं होता। उसने देखा कि वह चाहे कुछ भी करे, नक्षत्रोंकी गति-विधि वैसी ही बनी रहती है। निश्चित समयोंपर ग्रहण लगते हैं और पुच्छल-तारे भी निश्चित समयकी अवधिके बाद दिखाई देते हैं। इससे उसे विश्वास हो गया कि चन्द्र-ग्रहणों, सूर्य-ग्रहणों तथा पुच्छल-तारोंके दिखाई देनेको न उससे कुछ लेना देना है, और न उसके आचरणको कुछ उनसे। उसने अनुभव किया कि उनसे उसका कुछ हानि-लाभ नहीं होता। इस प्रकार वह उनसे भयभीत रहनेकी बजाय उनका प्रशंसक बन गया। उसकी समझमें आने लगा कि अकाल किसी क्रोधभरे परमात्माका प्रकोप नहीं, किन्तु आदमीकी ही लापरवाही और अज्ञानसे पैदा होता है। उसने जाना कि रोग भूत-प्रेतोंसे पैदा नहीं होते। उसने पता लगाया कि प्राकृतिक कारणोंसे बीमारियाँ पैदा होती हैं और प्राकृतिक उपायोंसे ही वे दूर भी की जा सकती हैं। उसने कमसे कम अपने आपको इस विषयमें संतुष्ट कर लिया कि प्रार्थना कोई औषध नहीं है। उसे बड़े दुःखभरे अनुभवके परिणामस्वरूप यह स्वीकार करना पड़ा कि उसके देवता कभी उसके किसी काम नहीं आये। उन्होंने उसकी तभी मदद की जब वह स्वयं अपनी मदद आप करनेमें समर्थ रहा। अन्तमें उसे यह पता लगने लगा कि उसके व्यक्तिगत आचरणका आकाशमें घटनेवाली विचित्र घटनाओंसे किसी प्रकारका

कुछ सम्बन्ध नहीं है। वह कितना भी बुरा हो किसी आँधीका कारण नहीं हो सकता, और कितना भी अच्छा हो किसी आँधीको रोक नहीं सकता।

शताब्दियोंके विचारके बाद वह बहुत कुछ इस परिणामपर पहुँचा कि किसी पुरोहित पादरीका मुँह चिढ़ानेसे कोई भूकम्प नहीं आसकता। उसने बड़े आश्चर्यके साथ देखा कि कभी कभी बड़े ही अच्छे आदमियोंपर बिजली गिर पड़ी है, और बहुत ही खराब आदमी बच निकले हैं। उसे मजबूर होकर यह बात माननी पड़ी कि सत्यकी ही हमेशा विजय नहीं होती। उसने देखा कि देवता निर्बलों और निर्दोषोंका पक्ष नहीं लेते। उसे कभी कभी यह देखकर आश्चर्य हुआ कि एक नास्तिक है, किन्तु वह बड़े ही अच्छे स्वास्थ्यका आनंद लूट रहा है। उसे इस बातमें संदेह होने लगा कि उसके मंत्र-जापके फलस्वरूप संसारमें लगातार कोई परिवर्तन होता है। उसने देखा कि 'दीक्षा' लेनेके बाद भी बच्चे चोरी करते ही हैं। उसे धर्म और न्यायमें महान् अन्तर दिखाई दिया। उसने देखा कि एक ही परमात्माकी पूजा करनेवाले एक दूसरेका गला काटनेमें आनन्द मनाते हैं। अंतमें उसने साहसपूर्वक यह बात सोचनी आरंभ की कि संसारकी घटनाओंमें किसी परमात्माका किसी प्रकारका कोई दखल नहीं। उसने कुछ बातोंका ज्ञान प्राप्त किया और देखा कि उन बातोंका उसके पूर्वजोंके मिथ्य विश्वासोंसे किसी प्रकार भी मेल नहीं बैठाया जासकता। जब उसने देखा कि कुछ विषयोंमें उसके धर्म-ग्रन्थोंके कथन अयथार्थ हैं, तो उनकी प्रामाणिकतामें उसकी श्रद्धा घट गई; और जब उसने देखा कि कुछ विषयोंमें उसके पुरोहित अज्ञानी हैं, तो उनके लिये उसका आदर घट गया। यह मानसिक स्वातंत्र्यका आरम्भ था।

जिस मात्रामें धर्म अथवा मज़हबकी शक्ति घटी है, ठीक उसी मात्रामें मानवी सभ्यताने उन्नति की है। आदमीकी मानसिक प्रगति इस बातपर निर्भर करती है कि वह कितनी कम या अधिक बार एक पुराने मिथ्या विश्वासका त्यागकर एक नया सत्य ग्रहण कर सकता है। धर्मने आदमीको कभी एक बार भी यह परिवर्तन नहीं करने दिया; उल्टे उसकी तो सारी शक्ति आदमीको इससे रोकनेमें खर्च हुई।

संसारमें मज़हबके लिये जो लड़ाइयाँ हुई, उनमें जो रक्त बहा, उसके कारण

एक प्रकारसे धर्ममात्र घृणा और निरादरकी वस्तु बन गया। विचारशील लोग ऐसे धर्मकी दैवी उत्पत्तिपर संदेह करने लगे; जो अपने अनुयायियोंको दूसरोंपर एकाधिकार देता है।

युगोंतक एक भयानक संघर्ष लड़ा गया है। एक ओर कुछ वीर विचारवान् तथा प्रतिभावान् स्त्री-पुरुष रहे हैं, और दूसरी ओर अज्ञ-धार्मिक जनताकी बड़ी भीड़। यह विज्ञान और श्रद्धाके बीचकी लड़ाई रही है। इन थोड़ेसे लोगोंने आदमीके तर्कको, उसके आत्मसम्मानको, न्यायको, स्वतंत्रताको, ज्ञातको तथा यहीं, इसी संसारमें, सुखको अपील की है। जो बहुसंख्यक रहे हैं, उन्होंने मिथ्या-विश्वासको, भयको, 'प्रातिहार्यों' अथवा करिश्मोंको, गुलामीको, अज्ञानको तथा भविष्यमें भोगे जानेवाले कष्टोंको अपील की है। थोड़ेसे लोगोंने कहा—सोचो। अधिक लोगोंने कहा—विश्वास करो।

उस अनन्त श्मशान भूमिमें—जिसे लोग 'अतीत' कहते हैं—लगभग सभी धर्म और उनके सभी देवता पड़े हैं। भारतके अधिकांश प्राचीन मंदिर कबके ध्वंसावशेष बन चुके।

एक एक करके आकाशके देवताओंकी कथाएँ मद्धम पड़ गईं, एक एक करके भयानक 'भूत' अन्तर्धान हो गये और एक एक करके उनके स्थान-पर सच्ची और वास्तविक बातें स्थापित हो गईं। जो कुछ प्रकृतिसे परे समझा जाता था उसका एक प्रकारसे लोप हो गया। अब जो प्राकृतिक है, वही विद्यमान् है। देवता अब भाग गये हैं। आदमी ही रह गया है।

व्यक्तियोंकी तरह, जातियाँ भी तरुण होती हैं, प्रौढ़ होती हैं, और तब उनको बुढ़ापा व्यापता है। धर्मोंका भी यही हाल होता है। अनित्यताके इस नियमका कोई अपवाद नहीं। जिन जातियोंने जिन देवताओंका निर्माण किया है, उन जातियोंके साथ उन देवताओंका भी नाश अवश्यंभावी है। उन्हें आदमियोंने उत्पन्न किया था और आदमियोंके साथ ही उन्हें भी अस्त होना ही होगा। दिन प्रतिदिन धार्मिक कल्पनाओंका रंग फीका पड़ता जा रहा है। दिन प्रतिदिन धार्मिक ग्रन्थों और सिद्धातोंकी प्राचीन 'आत्मा' मरती जा रही है। आरम्भिक धर्म-प्रचारकोंका दुर्दान्त उत्साह अब चला ही गया है, कभी, कभी, कभी नही लौट आनेके लिये।

तर्क, आँख खोलकर देखना और तजुर्बा करना, विज्ञानकी इस पवित्र

'त्रयी' ने हमें शिक्षा दी है कि सुखके लिये प्रयत्नशील होना ही एकमात्र धर्म है, सुखी होनेका समय भी यही है और सुखी होनेका एकमात्र मार्ग भी दूसरोंको सुखी बनाना है। हमारे लिये बस इतना पर्याप्त है। हम इस एक विश्वासको लेकर संतोषपूर्वक जीते रह सकते हैं और इसीमें मर सकते हैं। यदि कभी प्रकृतिसे परे तथा प्रकृतिसे स्वतंत्र किसी शक्तिका अस्तित्व सिद्ध हो जायगा तो उसके सामने घुटने टेकनेके लिये हमारे पास बहुत समय है। तब तक तो हम सीधे खड़े रहें।

यद्यपि सभी समयोंमें नास्तिकोंने मनुष्यके अधिकारोंके लिये लड़ाइयाँ लड़ी हैं, और वे हर समय स्वतंत्रता और अन्यायके निर्भय समर्थक रहे हैं, तब भी हमपर धार्मिक लोगोंकी ओरसे निरंतर यह आरोप लगाया जाता है कि हम केवल विध्वंस ही विध्वंस करते जाते हैं। कुछ भी नया निर्माण नहीं करते।

एक डाक्टरने एक बार एक लँगड़ेकी सामर्थ्य-भर सहायता करनी चाही। उसने रोगकी उत्पत्ति, कुछ ओषधियोंकी रोगनाशक शक्ति तथा व्यायाम, वायु, और प्रकाशके अतिरिक्त अन्य स्वास्थ्य और शक्तिके साधनोंपर एक विद्वत्तापूर्ण प्रवचन देना आरम्भ किया। उसकी बातें इतनी अच्छी थीं, इतनी विचारपूर्ण थीं, और उनमें इतनी यथार्थ जानकारी थी कि लँगड़ा चौकन्ना होकर चिल्लाने लगा,—"कृपया मेरी वैशाखी मत छीनो, मुझे केवल उसीका सहारा है, उसके बिना मैं सचमुच बहुत कष्ट पाऊँगा।" डाक्टरका उत्तर था—"मैं तुम्हारी वैशाखी छीनने नहीं जा रहा हूँ, मैं तुम्हें चगा कर दूँगा। तब तुम अपनी वैशाखी स्वयं फेंक दोगे।"

'नास्तिक' इतना ही चाहते हैं कि आकाशकी गप्पोंका स्थान पृथ्वीकी वास्तविकता ले ले; मिथ्या विश्वासोंका स्थान 'विज्ञान' की शानदार सफलताएँ ले लें और धार्मिक-रूढ़ियोंके अत्याचारका स्थान विचारोंकी बन्धनमुक्त स्वतंत्रता ले ले।

हम यह नहीं कहते कि हम सभी बातोंका पता लगा चुके हैं, अथवा हमारे सिद्धान्त सत्यके सर्वे-सर्वा हैं। हम मानवके विकासको असीम मानते हैं। हम प्रकृति और उसकी शक्तिकी अनंत ग्रन्थियोंको सुलझा नहीं सकते।

एक जीव-कणका इतिहास उतना ही अज्ञात है जितना समस्त विश्वका; पानीकी एक बूँद उतनी ही आश्चर्यकर है जितने कि तमाम समुद्र; एक पत्ता जितने कि तमाम जंगल और बालूका एक कण जितने कि तमाम तारे।

हम भविष्यको बाँधनेका प्रयत्न नहीं कर रहे हैं, हम तो वर्तमानको बन्धन-मुक्त करना चाहते हैं। हम अपने बच्चोंके लिये बेड़ियाँ नहीं बना रहे हैं। हम तो केवल उन बेड़ियोंको तोड़ना चाहते हैं, जो हमारे पूर्वजोंने हमारे लिये बनाई थीं। हम तो जिज्ञासा, खोज करने और विचार करनेके समर्थक हैं। एक यही बात इस बातकी प्रमाण है कि हम अभी तक जिन परिणामोंपर पहुँचे हैं उनसे संतुष्ट नहीं हैं। दार्शनिकमें अन्ध-श्रद्धालुकी अहमन्यता नहीं होती। जहाँ मिथ्या-विश्वास दीवारें बनाता है, और बाधाएँ उपस्थित करता है, वहाँ विज्ञान विचारके दरवाजे खोल देता है। हम यह नहीं कहते कि हमने हर बातका पता लगा लिया, और हर समस्याको सुलझा लिया, तो भी हम यह विश्वास करते हैं कि देवताओंसे डरनेकी अपेक्षा आदमियोंसे प्रेम करना अधिक अच्छा है। किसी एक सिद्धांतको लेकर उसे रटते रहनेकी अपेक्षा स्वयं विचार करना और खोज करना, बहुत ही श्रेष्ठ और शानकी बात है। हमें इस बातका निश्चय है कि जब तक आदमी आकाशके किसी निरंकुश सत्ताधारीकी पूजा करता रहेगा उसे पृथ्वीपर किसी प्रकारकी स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं हो सकती। हमारी यह आशा नहीं कि हम सभी कुछ अपने ही समयमें कर सकेंगे; लेकिन जो थोड़ा बहुत भलाईका काम हमसे बन पड़े, वह हम करना चाहते हैं। हम मानवताकी उन्नतिके पवित्र उद्देश्यकी जो भी सेवा बन पड़े वह करना चाहते हैं। हम जानते हैं कि देयताओं तथा प्रकृतिसे परे मानी जानेवाली अन्य शक्तियोंकी समाप्ति अपनेमें कोई उद्देश्य नहीं है। यह तो एक उद्देश्यका साधन मात्र है—वास्तविक उद्देश्य है मानवका सुखी जीवन।

हम भविष्यके विशाल मन्दिरकी नींव रखना चाहते हैं। देवताओंका मन्दिर नहीं, किन्तु लोगोंका मन्दिर, जिसमें उचित संस्कारोंके साथ मानवताका धर्म स्थापित किया जायगा। हम यथासम्भव वह दिन शीघ्रसे शीघ्र लानेके लिये प्रयत्नशील हैं जब समाजमें न एक ओर करोड़पति उत्पन्न हो सकेंगे, और न दूसरी ओर भिखारी, जब सत्य फटे हाल न रहेगा और मिथ्या

विश्वासोंके सिरपर ताज न होगा। हम उस समयकी प्रतीक्षा कर रहे हैं, जब समाजके लिये जो उपयोगी होगा वही सम्भावित होगा, और जब तर्क संसारके मस्तिष्करूपी सिंहासनपर विराजमान होकर महाराजोंका महाराजा और देवताओंका देवता बन जायगा।

मनुष्य-जातिका सुधार कैसे हो ?

अविद्या ही एक मात्र अंधकार है। प्रत्येक मानव परिस्थितियोंका अवश्यंभावी परिणाम है, और प्रत्येक आदमी कुछ न कुछ ऐसे दोष लेकर पैदा हुआ है, जिनके लिये उसे दोषी नहीं ठहराया जा सकता। प्रकृतिको न व्यक्तिकी परवाह है न जाति-विशेषकी।

जीवनके पीछे जीवन और उसके पीछे मृत्यु। जीवन, प्रेरणा, विचार और क्रियाका प्रत्येक रूप परिस्थितियों द्वारा ही निश्चित और निर्णीत होता है, अनन्त-पूर्व-घटित घटनाओं तथा सम-कालीन बातों द्वारा। वर्तमान तमाम अतीतकी अवश्यंभावी सन्तान है और समस्त भविष्यकी माता।

प्रत्येक मनुष्य प्रसन्न रहना चाहता है—भोजन, घर और वस्त्रद्वारा अपनी शारीरिक अवश्यकताएँ पूरी करना और यथासामर्थ्य प्रेम, ज्ञान, दर्शन, कला, तथा संगीतद्वारा अपने मनकी भूख मिटाना।

जंगली मनुष्यकी इच्छाएँ नपी तुली रहती हैं, लेकिन सभ्यताके साथ साथ शारीरिक आवश्यकताएँ बढ़ती हैं, मानसिक क्षितिजका विस्तार होता है तथा दिमाग़ अधिक और अधिक माँग करने लगता है।

जंगली आदमी अनुभव करता है किन्तु कदाचित् ही सोचता है। जंगली आदमीका आवेश चिन्तनसे अप्रभावित होता है, और दार्शनिकका चिन्तन आवेशसे। तर्क कर सकनेकी योग्यता होनेसे पूर्व बच्चोंमें इच्छाएँ और आवेश होते हैं। इसी प्रकार जगतके बचपनमें इच्छाओं और आवेशोंकी प्रधानता रहती है। जंगली आदमी रूपोंसे, मनपर पड़ी हुई छापोंसे शासित होता था। उसका मन दुर्बल था, आलसी था और वह न्यूनतम विरोधके मार्गको ही अपनाता था। वह किसी चीजको ठीक वैसा ही समझता था जैसी उसे वह

प्रतीत होती थी। उसे प्रकृतिसे परे किसी शक्तिमें स्वाभाविक विश्वास था; और जब भी कभी वह अपने आपको विपत्तियोंमें पड़ा पाता; वह नाना प्रकारसे अदृश्य शक्तियोंकी सहायता खोजता। उसके बच्चोंने उसके उदाहरणका अनुकरण किया, और युगोंतक नाना देशोंमें करोड़ों मनुष्य जिनमें बहुतसे अधिकसे अधिक दयावान और श्रेष्ठ थे, प्रकृतिसे परेकी किसी शक्तिकी सहायता खोजते रहे। अनन्त वेदिकाओं और मंदिरोंका निर्माण हुआ और उनमें बलि तथा संगीत द्वारा, आत्म-बलिदान तथा रीति-रिवाजों द्वारा, और धन्यवादों तथा प्रार्थनाओं द्वारा 'अलौकिक' की पूजा होती रही है।

इस सारे समयमें आदमीका दिमाग धीरे धीरे किन्तु बड़े कष्टसे विकसित होता रहा है। शनैः शनैः मन शरीरका सहायक बना, और विचार तथा श्रमकी परस्पर मैत्री हो गई। जिस मात्रामें विचार और कार्यने एक दूसरेका हाथ बटाया, जिस मात्रामें सिर और हाथ परस्पर सहयोगी बने, ठीक उसी मात्रामें मनुष्यने उन्नति की है। यह सब अनुभवका परिणाम है।

उदार और हृदय-हीन, फिजूलखर्च और कंजूस, यह प्रकृति ही हमारी माता है। यही हमारी एक मात्र शिक्षक है, और यही आदमियोंको ठगती भी है। उससे ऊपर हम उठ नहीं सकते, उससे नीचे हम गिर नहीं सकते। उसीमें हमको तमाम कल्याण और तमाम अकल्याणके बीज और भूमि दिखाई देती है। प्रकृति उत्पन्न करती है, पालन-पोषण करती है, रक्षा करती है और नष्ट भी कर डालती है।

सुकर्मोंका फल होता है, और उस फलमें ही वह बीज रहते हैं जो फिर फलों और बीजोंको जन्म देते हैं। महान् विचार कभी नष्ट नही होते और कल्याणभरी वाणी पृथ्वीपरसे कभी विलीन नहीं होती।

हर दिमाग एक ऐसा खेत है, जिसमें प्रकृति विचाररूपी बीज बोती है, और उसकी पैदावार मिट्टीके अच्छे या बुरे होनेपर निर्भर करती है।

इतना होनेपर भी युगोंतक आदमी सभी दिशाओंमें सचाईके साथ 'अलौकिक' के सहारे रहा और उसके अस्तित्वमें विश्वास करता रहा। उसने प्रकृतिकी एकरूपतामें विश्वास नहीं किया; उसे कार्य-कारणका कुछ ध्यान नहीं रहा। उसे 'गति' के अविनाशी होनेकी कुछ कल्पना नहीं थी।

ओषधिके रूपमें उसने मंत्रों, जादू, तावीजों और टोटकोंमें विश्वास किया। जंगली आदमीको यह कभी सूझा ही नहीं कि बीमारी भी प्राकृतिक होती है।

रसायन-शास्त्रके रूपमें उसने 'अमृत' की खोज की, पारस-पत्थरकी खोज की और किसी ऐसे तरीकेकी खोजमें रहा जिससे वह कम-कीमतकी धातुओंको सोनेमें बदल सके।

राज्य-शासनके रूपमें उसने जाना कि सारी शक्तिका स्रोत प्रकृतिसे परेकी शक्तिमें है। *

शताब्दियोंतक उसकी सदाचारकी कल्पना आज्ञाकारी रहने मात्रकी कल्पना थी—प्रकृतिमें जो कुछ विद्यमान है, उसके प्रति आज्ञाकारी नहीं, किन्तु प्रकृतिके परे किसी काल्पनिक अस्तित्वके प्रति।

अनुभवसे, तजर्बेसे, सम्भव है अनायास ही आदमीको यह पता लग गया कि कुछ रोग प्राकृतिक साधनोंसे अच्छे किये जा सकते हैं और अनेक अवस्थाओंमें उसका दुख-दर्द खास तरहके पत्तों अथवा वृक्षकी छालोंके उपयोगसे दूर किया जा सकता है।

यह आरम्भ था। शनैः शनैः जो प्राकृतिक है उसमें आदमीका विश्वास बढ़ने लगा और मंत्रों तथा जादू-टोनोंमें उसका विश्वास घटने लगा। शताब्दियों तक यह संग्राम होता रहा, किन्तु अन्तमें जो प्राकृतिक है उसीकी विजय हुई। अब हम जानते हैं कि सभी बीमारियाँ स्वाभाविक ढंगसे उत्पन्न होती हैं, और जितनी भी ओषधियाँ हैं, जितने भी इलाज हैं, सभी प्राकृतिक नियमोंके अनुसार काम करते हैं। अब हम जानते हैं कि जिस प्रकार मंत्र-तंत्र और जादू-टोना किसी एक भी गणितके प्रश्नको हल करनेके लिये बेकार हैं, उसी प्रकार वे किसी रोगको दूर कर सकनेमें भी असमर्थ हैं। अब हम जानते हैं कि कहीं कोई 'अलौकिक' चिकित्सा नहीं होती।

रसायन-शास्त्रमें जो लड़ाई लड़ी गई वह लम्बी रही और अत्यन्त तीखी, किन्तु अब न कोई 'अमृत' की खोजमें भटकता है और न पारस-पत्थरकी। हम निश्चयपूर्वक जानते हैं कि रसायन शास्त्रके क्षेत्रमें कहीं कुछ भी 'अलौकिक' नहीं है। हम जानते हैं कि पदार्थ अपने स्वभावके प्रति

* "मनुष्योंमें मैं राजा हूँ"—भगवद्गीता।

सदा सच्चे रहते हैं। हम जानते हैं कि एक पदार्थके ठीक इतने कण दूसरेके पदार्थके ठीक उतने कणोंके साथ मिलेंगे। हम निश्चिन्त हैं कि प्रकृतिके नियमोंमें कोई परिवर्तन नहीं होगा। हम प्रकृतिकी समानरूपतापर अखण्ड विश्वास रख सकते हैं—इस बातपर कि पृथ्वीके आकर्षणके नियम सदैव एक ही रहेंगे। हम जानते हैं कि एक चक्रकी परिधि और उसके व्यासके परस्परके सम्बन्धमें कभी कोई अंतर नहीं आ सकता।

इसी प्रकार हम लोग जो अमरीकाके संयुक्त-राज्यमें रहते हैं, विश्वास करते हैं कि शासन करनेका अधिकार, नियम बनाने और कार्यान्वित करनेका अधिकार शासित लोगोंकी रजामन्दीसे प्राप्त होता है, न कि किसी 'अलौकिक' स्रोतसे। हम यह नहीं मानते कि राजा, किसी 'अलौकिक' शक्तिकी इच्छासे राज्य-सिंहासनपर बैठा है। और हम यह भी नहीं मानते कि किसी अलौकिक शक्तिकी ही इच्छासे दूसरे लोग प्रजाजन हैं, गुलाम हैं, तथा दास हैं।

इसी प्रकार सदाचारके बारेमें हमारे जो विचार थे वे भी बदल गये हैं। करोड़ों लोगोंका अब यही विश्वास है कि जिससे सुख और कल्याणकी उत्पत्ति हो वही परम सदाचार है। अविवेकपूर्ण आज्ञाकारिता न सदाचारका आधार है, और न उसका सार। वह तो मानसिक परतंत्रताका परिणाम है। कृतज्ञताके भावसे प्रभावित होकर उसके अनुसार कुछ करना तो स्वतंत्रता और श्रेष्ठताका लक्षण है।

ऐसे लोग अनेक हैं जो इस परिणामपर पहुँच गये हैं कि सच्चे धर्मको 'अलौकिकता' से कुछ लेना देना नहीं। धर्मका यह मतलब नहीं कि बिना किसी प्रमाणके सर्वथा विरुद्ध किसी बातपर विश्वास किया जाए। इसका मतलब किसी 'अज्ञात' की पूजा नहीं है, और न किसी 'अनन्त'के लिये कुछ करना। रीति-रिवाज़, प्रार्थनाएँ, इलहामी किताबें, करिश्में, विशेष दैवीकृपा, तथा हस्तक्षेप—सभी अलौकिकताके अंश हैं, और उनका सच्चे धर्मसे कुछ सम्बन्ध नहीं।

प्रत्येक विज्ञानका आधार है—प्रकृति और सिद्ध हुई बातें। इसलिये धर्मको भी, प्रकृतिके स्वभावमें ही अपना आधार खोजना होगा।

२

क्योंकि अज्ञान अन्धकार है, इसलिये हमें जिस चीजकी आवश्यकता है वह मानसिक प्रकाश है। क्योंकि हर प्रकारकी उन्नतिका आधार शिक्षा है, इसलिये जो सबसे अधिक महत्त्वकी बात है वह यह है कि लोगोंको यह शिक्षा दी जाय कि सारा विश्व प्राकृतिक है, आदमी ही आदमीका 'परमात्मा' है, हम अपने मस्तिष्कके विकासद्वारा कुछ कष्टोंसे बच सकते हैं, कुछ बुराइयोंसे बचे रह सकते हैं, कुछ बाधाओंको पार कर सकते हैं, और प्रकृतिकी कुछ बातों तथा शक्तियोंसे लाभ उठा सकते हैं। यह भी कि आविष्कार और अध्यवसायद्वारा हम एक सीमा तक अपने शरीर-की आवश्यकतायें पूरी कर सकते हैं, तथा विचार, अध्ययन और प्रयत्न द्वारा आंशिक तौरपर हम अपने मनकी भूख भी मिटा सकते हैं।

आदमीको प्रकृतिके परेकी किसी भी शक्तिसे सहायताकी आशा छोड़ देनी चाहिये। अब उसे इस बातका निश्चय हो जाना चाहिये कि पूजासे धन पैदा नहीं हुआ, और प्रार्थनाओंसे ऐश्वर्य। उसे मालूम होना चाहिए कि प्रकृतिके परेकी किसी शक्तिने न दीनोंकी सहायता की, न नंगोंको वस्त्र दिये, न भूखोंको भोजन दिया, न निर्दोषोंको बचाया, न बीमारियोंको रोका और न दासोंको मुक्त किया।

यह विश्वास करके कि प्रकृतिसे परे कोई शक्ति है ही नहीं, आदमीको चाहिये कि वह अपना सारा ध्यान इस दुनियाकी बातोंपर केन्द्रित करे, प्रकृ-तिकी बातोंपर।

सबसे पहले तो उसे अपव्यय बन्द करना चाहिये—शक्तिका अपव्यय, धनका अपव्यय। हर भले पुरुष तथा हर भली स्त्रीको यह प्रयत्न करना चाहिये कि युद्धोंकी आवश्यकता न रहे, लोग जंगली-शक्तिको अपील करना छोड़ दें। आदमी जब जंगली अवस्थामें होता है, तो वह अपने शारीरिक बल-पर भरोसा रखता है, और स्वयं आप ही 'न्याय' तथा 'अन्याय' का निर्णायक होता है। सभ्य आदमी अपने मत-भेद मिटानेके लिये शस्त्रोंका सहारा नहीं लेते। वे अपने झगड़ोंको न्यायाधीशों तथा न्यायालयोंमें ले जाते हैं। जंगली और सभ्य आदमीमें यही बड़ा भेद है। परन्तु जातियाँ, एक

दूसरेके प्रति अभी भी जंगलीपनका रिश्ता निभाये चली जा रही हैं। उनके पास अपने झगड़ोंको निपटानेका कोई मार्ग नहीं। हर जाति अपने आप निर्णय करती है और फिर उस निर्णयके अनुसार कार्य हुआ देखना चाहती है। इसीसे युद्ध होते हैं। हज़ारों आदमी इस समय इस बातमें लगे हुए हैं कि अपने भाइयोंको मारनेके लिये नये नये अस्त्रों-शस्त्रोंका अविष्कार करें। ढाई हजार वर्षसे शान्तिका पाठ पढ़ाया जा रहा है, और तब भी संसारकी सभ्य जातियाँ सबसे अधिक युद्धप्रिय हैं। यूरोपमें आज लगभग एक करोड़ बीस लाख * सिपाही युद्ध-क्षेत्रके लिये तैयार खड़े हैं, और हर देशकी सीमाओंपर क़िले-बन्दी है। समुद्र फौलादके जहाजोंसे भरा है, जिनमें मृत्युकर गैस लदी है। सभ्य संसारने अपने आपको दरिद्र बना लिया है और ईसाई-देशोंका क़र्ज़ा जो कि अधिकांशमें युद्धोंके लिये ही लिया गया है, तीस अरब डालर है। इस बड़ी रकमपर सूद देना पड़ेगा और यह देना पड़ेगा श्रमिकोंको, अधिकांश गरीबोंका, उन्हें जिन्हें मजबूरीसे जीवनकी आवश्यकताओंके बिना ही रहना पड़ता है। यह ऋण प्रतिवर्ष बढ़ रहा है। या तो इस अवस्थामें परिवर्तन होना चाहिये, अन्यथा ईसाई-संसारका दीवाला निकल जायगा।

इस रक़मका सूद वर्षमें कमसे कम २० करोड़ डालर होगा। अब यदि इसमें स्थल-सेना तथा जल-सेनाका खर्च सम्मिलित कर लें, जहाज़ोंकी परम्मतका खर्च, मृत्युके नये नये साधनोंके निर्माणका खर्च, तो यह सारी रकम लगभग साठ लाख डालर प्रतिदिन हो जायगी। यदि मान लें कि काम-काजका एक दिन दस घंटेका होता है तो प्रति घंटा छः लाख डालरका खर्च हुआ और प्रति मिनट दस हजार डालरका।

ज़रा सोचिये कि यह सारी रकम अपने भाइयोंको मारने और उसकी तैयारी करनेमें खर्च की जाती है। इस बड़ी रक़मसे जो भलाईके काम किये जा सकते हैं, जो स्कूल बनाये जा सकते हैं, जिन इच्छाओंकी पूर्ति हो सकती है, उनका विचार करो। ज़रा सोचो कि इस रकमसे कितने घरोंका निर्माण हो सकता है, कितने बच्चोंके तन ढके जा सकते हैं।

किसी आदमीमें इतना सामर्थ्य नहीं कि वह अपनी कल्पना-शक्तिसे युद्धके

---

* यह पुरानी संख्या है—अनु०

कष्टों, उसकी भयानक बातों तथा उसकी क्रूरताओंको चित्रित कर सके। जरा सोचिये कि गोलियाँ आदमियोंके बदनोंको छेदती हुई चली जा रही हैं। जरा विधवाओं और अनाथोंकी बात सोचिये। जरा लँगड़े लूले अपाहिजोंकी बात सोचिये।

३

आओ, हम एक दूसरेसे एकदम साफ साफ बाते करें। हम सत्यकी खोजने लगे हैं। हम इस बातके लिये प्रयत्न-शील हैं। हम यह मालूम करें कि मानवताके कल्याणके लिये हमें क्या क्या करना चाहिये। मेरा ईमानदारीसे जो विचार है वही मुझे आप तक पहुँचाना चाहिये। आपका अधिकार है कि आप मुझसे वही माँगें और मुझे अपने प्रति भी सच्चा रहना चाहिये।

एक दूसरी दिशा है जिसमें मनुष्यकी शक्ति और धनका अपव्यय होता है। इतिहासके आरंभसे आज तक मनुष्य अदृश्यकी सहायता खोजता रहा है। शताब्दियोंसे संसारका धन अदृश्यको संतुष्ट रखनेमें खर्च होता रहा है। हमारे अपने देशमें ही इस मतलबके लिये जो धन अर्पित कर दिया गया है उसका मूल्य कमसे कम एक अरब डालर अवश्य है। इस रकमका सूद पाँच करोड़ डालर वार्षिक होगा और ऐसे आदमियोंको नौकर रखनेका खर्च जिनका एक मात्र काम अदृश्यकी शक्तिके फेरमें पड़े रहना है तथा इस सम्पत्तिकी देखभाल करते रहना है, और अधिक होगा। इस हिसाबसे हमारे अपने देशमें इस मदमें जो खर्च होता है, वह लगभग बीस लाख डालर प्रति सप्ताह है। और यदि एक काम-काजका दिन दस घंटेका माना जाय तो यह खर्चा लगभग पाँच सौ डालर प्रति मिनट ठहरता है।

इतने बड़े खर्चेके एवजमें जो लाभ होता है वह अत्यन्त कम है। ऐसा नहीं लगता कि इससे किसीका भी बहुत भला होता है। इससे अपराधोंमें किसी प्रकारकी कोई बड़ी कमी नहीं दिखाई देती। यह भी नहीं मालूम होता कि दुराचार, और दरिद्रतामें भी कुछ कमी हुई हो। अपने घरमें ही इतनी स्पष्ट असमानताके बावजूद धनकी बड़ी बड़ी रकमें इस बातपर खर्च की जाती हैं कि हम 'अदृश्य' के बारेमें जो हमारे विचार हैं उनका दूसरी जातियोंमें

कैसे प्रचार करें। हमारे गिरजाघर सप्ताहमें अधिकांश समय बंद रहते हैं। वे सात दिनोंमेंसे एक ही दिन थोड़े समयके लिये खुलते हैं। कोई नहीं चाहता कि ये गिरजे अथवा गिरजोंके संघटन नष्ट हो जायँ। इच्छा केवल इतनी ही है कि यह संसारका कुछ ठोस भला कर सकें। हमारी छोटी छोटी बस्तियोंमें जिनकी आबादी तीन या चार हजारकी होगी, चार चार पाँच पाँच या इससे भी अधिक गिरजे मिलेंगे। इन गिरजोंका आधार आपसके निस्सार भेद हैं और यह स्वीकार करना होगा कि इन भेदोंके पक्ष और विपक्षमें जितने भी तर्क हैं वे असंख्य बार दिये जा चुके हैं। इन विषयोंमें नया कुछ नहीं कहा जा रहा है। तो भी पुराने तर्कोंको ही रोज़ रोज़ दोहरा कर विवाद जारी रखा जाता है।

मुझे ऐसा लगता है कि जिस बस्तीमें चार या पाँच हजार आदमी हों उसमें केवल एक गिरजा होना चाहिये और उसके मकान न केवल रविवारके दिन किन्तु सप्ताहके प्रत्येक दिन उपयोगमें आना चाहिये। इस मकानमें बस्तीका पुस्तकालय होना चाहिये। यह घर एक प्रकारसे लोगोंका सभा-भवन होना चाहिये, जहाँ उन्हें संसारके मुख्य पत्र और पत्रिकाएँ मिल सकें। इसकी रचना थियेटरकी तरहकी होनी चाहिये। स्थानीय लोगोंको समय समयपर नाटक करने चाहिये; एक संगीत मण्डली हो, जिससे संगीतका भी विकास होता रहे। जब भी लोगोंकी इच्छा हो लोग वहाँ मिल सकें। स्त्रियाँ अपना सीना-परोना कर सकें और उसके साथ ही ऐसे कमरे होने चाहिये, जिनमें लोग तरह तरहके खेल खेल सकें। हर चीज अधिकसे अधिक संतोषजनक होना चाहिये। बस्तीके लोगोंके लिए यह मकान अभिमानकी चीज हो। उन्हें इसके ताकोंमें मूर्तियाँ और इसकी दीवारोंपर चित्र लगाने चाहिये। यह उनका विद्या-केन्द्र बन जाना चाहिये। उन्हें किसी योग्य आदमीको सम्भवतः किसी प्रतिभावान् व्यक्तिको रविवारके दिन वास्तविक महत्त्वके विषयोंपर भाषण देनेके लिये नियुक्त करना चाहिये; उन्हें अपने पुरोहितको कहना चाहिये,—"हम सप्ताह-भर काम-काजमें लगे रहते हैं; जिस समय हम अपने व्यापार तथा अन्य पेशोंमें लगे रहते हैं उस समय हम चाहते हैं कि आप अध्ययन करें और रविवारके दिन हमें बतायें कि आपने क्या खोज की है।"

इस प्रकारका पुरोहित अपने प्रवचनके लिये ग्रीक लोगोंके इतिहास, दर्शन, तथा कलाको ले सकता है। वह इजिप्त और भारतके विचित्र अध्यात्म

और पुराणोंको ले सकता है। उसे चाहिये कि वह अपने श्रोताओंको संसारके दर्शन-शास्त्रों, महान् विचारकों, महान् कवियों, महान् कलाकारों, महान् अभिनेताओं, महान् वक्ताओं, महान् आविष्कारकों, महान् व्यवसायियों — प्रगतिके सभी सैनिकोंसे परिचित कराए। एक रविवार-स्कूल होना चाहिये जहाँ बच्चोंको प्रकृतिकी, वनस्पतिशास्त्रकी, कृमि-शास्त्रकी, भूगर्भ-शास्त्रकी तथा खगोल-विद्याकी, बातें सिखाई जायें। उन्हें महान् काव्योंसे परिचित कराया जाय और परिचित कराया जाय साहित्यके श्रेष्ठतम अंशोंसे, वीरों, आत्म-त्यागियों तथा उदारचेताओंकी कहानियोंसे।

मुझे लगता है कि ऐसी 'संगतें' कुछ ही वर्षमें अमरीकाके सबसे अधिक समझदार लोगोंकी बन जायेंगी।

सच्ची बात यह है कि लोग पुरानी बातोंसे तंग आ गये हैं। उन्हें अब करिश्मोंमें विश्वास नहीं रहा, अदृश्यमें विश्वास नहीं रहा; और जिन बातोंमें उन्हें विश्वास नहीं, उनमें उन्होंने दिलचस्पी ही लेनी छोड़ दी।

अज्ञानसे बढ़कर अन्धकार नहीं।

ज्ञानसे बढ़कर प्रकाश नहीं।

जब जब भी हम अपनी एक गलतीको वास्तविकतासे बदल सकते हैं, एक झूठको एक सत्य बातसे—तब तब हम आगे बढ़ते हैं। हम संसारके मानसिक ज्ञानमें वृद्धि करते हैं, और इस प्रकार, और केवल इसी प्रकार मानव-जातिके भावी ऐश्वर्य और सभ्यताकी बुनियाद रखी जा सकती है।

मैं किसीपर दोषारोपण नहीं करता, मैं किसीके इरादोंको सन्देहकी दृष्टिसे नहीं देखता; मैं स्वीकार करता हूँ कि संसार इससे भिन्न कुछ आचरण नहीं कर सकता था।

लेकिन हमारी भावी आशा हमारी वर्तमान समझदारीपर ही निर्भर करती है। आदमीको अपनी आयके साधनोंपर अधिकार करना चाहिये। उसे असम्भवको प्राप्त करनेके प्रयत्नमें अपनी शक्तियोंका अपव्यय नहीं करना चाहिये।

उसे प्राकृतिक शक्तियोंसे लाभ उठाना चाहिये। उसे शिक्षापर निर्भर रहना चाहिये, जो भी ज्ञान वह अपनी इन्द्रियों द्वारा प्राप्त कर सके, देख-

भालकर, अनुभव करके, तर्क करके। उसे मिथ्या विश्वास और पक्षपातकी ज़ंजीरोंको तोड़ देना चाहिये। उसे सभी विषयोंमें अपने विचार प्रकट करनेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिये। उसे पता होना चाहिये कि प्रसन्न रहनेके लिये कौन कौन-सी आवश्यक बातें हैं, और इतना बुद्धिमान् होना चाहिये कि उन बातोंके अनुसार रह सके।

४

हम जुर्मोंको कैसे कम कर सकते हैं?

जो कुछ अब तक संसारके सुधारके लिये किया गया है, जितने आविष्कार हुए हैं, जितनी प्राकृतिक शक्तियाँ अब आदमीकी अनथक गुलामी करती हैं, जितने खेतीमें, मशीनोंमें तथा मानवी-श्रमके हर विभागमें सुधार हुए हैं, उन सबके बावजूद संसारसे दरिद्रता और जुर्मोंका अभिशाप दूर नहीं हुआ।

जेलखाने भरे हैं, अदालतोंमें भीड़ लगी है, कानूनके अफसरोंको खाली बैठना नहीं मिलता—तो भी जुर्ममें कहीं कुछ कहने-सुनने लायक कमी नहीं दिखाई देती।

हजारों वर्षों तक आदमीने जेल-खानों द्वारा, उत्पीड़न द्वारा, अंग-छेद द्वारा तथा मृत्यु द्वारा अपने भाइयोंके सुधारका प्रयत्न किया; तो भी संसारके इतिहाससे यही सिद्ध होता है कि दण्डमें किसी प्रकारकी सुधारकी शक्ति नहीं। जुर्मको कम करनेके लिये अब 'दण्ड' को और अधिक भयानक बना सकनेकी गुंजायश नहीं रही।

कुछ ही वर्ष पूर्व, सभ्य देशोंमें, चोरी तथा उससे भी छोटे जुर्मोंके लिए प्राण-दण्ड दिया जाता था, तो भी चोरों तथा दूसरे सभी तरहके जुर्म करनेवालोंकी संख्या वृद्धिपर रही। राजद्रोहियोंको या तो फाँसी दे दी जाती थी, या उन्हें चीर दिया जाता था, या घोड़ों द्वारा घसीटे जाकर उनके टुकड़े टुकड़े करा दिये जाते थे; तो भी राजद्रोह वृद्धिपर रहा।

इन भयानक कानूनोंमेंसे बहुतसे रद्द कर दिये गये हैं। इस रद्द कर देनेके कारण निश्चयसे जुर्मोंमें वृद्धि नहीं हुई है। हम अपने देशमें फाँसियों, सुधार-गृहों और जेलोंपर विश्वास करते हैं। जब कोई किसीकी हत्या करता है तो उस आदमीको या तो फाँसीपर लटका दिया जाता है, या बिजलीके स्पर्शसे मार

दिया जाता है, अथवा अन्य तरीकोंसे मार डाला जाता है। कुछ मिनटमें एक दूसरा हत्यारा यही दण्ड भुगतनेके लिये तैयार हो जाता है। आदमी चोरी करते हैं; वे कुछ वर्षोंके लिये सुधार-गृहोंमें भेज दिये जाते हैं, वहाँ उनके साथ जंगली पशुओंका-सा व्यवहार होता है, प्रायः अनेक तरहकी पीड़ा भी पहुँचाई जाती है। निश्चित समयकी समाप्तिपर उन्हें छोड़ दिया जाता है। पैसा, उनके पास इतना ही रहता है कि जिस जगहसे वे पकड़े गये उसी जगह वापिस हो सकें। उन्हें इस संसारमें खुला छोड़ दिया जाता है, विना जीविकाके साधनोंके, विना मित्रोंके। वे दण्डित हैं। उनसे लोग बचकर चलते हैं, उनपर संदेह करते हैं, उनसे घृणा करते हैं। यदि उन्हें कहीं कोई स्थान मिल जाता है तो ज्यों ही यह पता लगे कि वे जेलमें रहे हैं, उन्हें वह स्थान छोड़ देना पड़ता है। वे अपने जेल-जीवन और पहचानको छिपाए रखकर इस बातका भरसक प्रयत्न करते हैं कि उनके साथियोंमें उनका सम्मान बना रहे। किन्तु, ईमानदारीसे अपनी जीविका न कमा सकनेके कारण वे थोड़े ही समयमें फिर कोई जुर्म करते हैं। फिर अदालतमें जाते हैं, और फिर जेलके भीतर पहुँचा दिये जाते हैं। न सुधार, न सुधारका कोई अवसर, और न नये मित्र बनाते समय रोटीकी कोई व्यवस्था।

यह सब बड़ी ही निन्दाकी बात है। आदमियोंको दण्डित करके इन सुधार-गृहोंमें नहीं भेजना चाहिये, क्योंकि हमे याद रखना चाहिये कि आदमी जो कुछ करता है उसके अतिरिक्त वह और कुछ कर ही नहीं सकता। प्रकृति प्रायः पूर्ण मनुष्य पैदा नहीं करती। मानव-जातिमें एक बड़ी संख्या 'असफल' मनुष्योंकी ही है। विशेष परिस्थितिमें, विशेष प्रकारकी प्रवृत्ति और उत्तेजनाकी अवस्थामें और दिमागकी बनावट तथा उसका प्रकार विशेष होनेसे आदमी चोर, जाल-साज तथा झूठे सिक्के चलानेवाले बनेंगे ही। प्रश्न है कि क्या सुधार सम्भव है ? क्या परिस्थितिमें परिवर्तन कर देनेसे व्यक्तिमें परिवर्तन हो सकता है ? अपराधी भयानक आदमी होता है और समाजको पूरा अधिकार है कि वह उससे अपनी रक्षा करे। अपराधीको पृथक् रखना ही चाहिये और यदि संभव हो तो उसका सुधार होना चाहिये। 'सुधार-गृह' को एक 'स्कूल' होना चाहिये; अपराधियोंको शिक्षित बनाना चाहिये। कैदियोंको काम करना चाहिये और उन्हें अपने श्रमके

लिये उचित मज़दूरी मिलनी चाहिये। बहुत अच्छे आदमियोंको जेलका अधिकारी होना चाहिये। वे दयावान् हों, दार्शनिक हों, उन्हें मानव-प्रकृतिका ज्ञान हो। कैदीको उदाहरणके लिये—यदि पाँच सालकी शिक्षा दे दी जाय—सदाचारके नियम सिखा दिये जायँ, शीलकी स्वाभाविकता समझा दी जाय और दुःशीलताके दुष्परिणाम दिखा दिये जायँ; यदि उसे यह विश्वास करा दिया जाय कि समाजको उससे घृणा नहीं, उसे न कोई दण्ड देना चाहता है; न पदच्युत करना चाहता है और न लूटना चाहता है, और साथ ही जिस समय वह उस 'सुधार-गृह' से बाहर निकले उस समय उसे उसके श्रमका उचित मूल्य दे दिया जाय और इसके साथ कानून उसे इस बातकी आज्ञा दे कि वह अपना नाम बदल सके, जिससे उसका व्यक्तित्व छिपा रहे, तो वह सरकारके एक मित्रके तौरपर जेलसे बाहर हो सकेगा। उसे ऐसा लगेगा कि वह पहलेकी अपेक्षा एक अच्छा आदमी बना दिया गया है, और उसके साथ न्यायका बर्ताव हुआ है; दयाका बर्ताव हुआ है। जो रुपया वह अपने साथ ले जायगा वह उसके लिये एक ढालका काम देगा, जिससे वह प्रलोभनोंके विरुद्ध अपनी रक्षा कर सकेगा और जब तक उसे कोई काम न मिले तबतक उससे काम चला सकेगा। यह आदमी अपराध करनेको अपनी जीविकाका साधन न बनाकर स्वयं एक अच्छा मान्य और कामका नागरिक बन सकेगा। आज जैसी स्थिति है, सुधार नाम मात्रका ही होता है। बार बार वही चेहरे अदालतके सामने आते हैं; उन्हीं आदमियोंको बारबार सजाएँ सुनाई जाती हैं, और वे ही आदमी बार बार जेलोंमें लौट लौट आते हैं। हत्यारे; जो भयानक वर्गके हैं, जिन्हें प्रकृतिने ही ऐसा बनाया है कि वे भयानक दुष्कर्मोंकी ओर दौड़ दौड़कर जाते हैं, जीवन-भरके लिये कैद कर दिये जाने चाहिये अथवा उन्हें किसी द्वीपमें रख देना चाहिये—पुरुषोंको एक द्वीपमें और स्त्रियोंको दूसरे द्वीपमें। ऐसे लोगोंको पृथ्वीकी आबादी नहीं बढ़ानी चाहिये।

न तो मन और शरीरके रोगोंको और न उनकी विकृतियोंको ही स्थायित्व मिलना चाहिये। जीवन अपने स्रोतपर ही गंदला नहीं हो जाना चाहिये।

५

समीके लिये घर चाहिए। घर जातिकी इकाई है। अधिक घरोंका अर्थ है, जातिकी अधिक पक्की नींव और अधिक सुरक्षा।

जो भी सम्भव हो वह किया ही जाना चाहिये जिससे यह असामियों अथवा काश्तकारोंकी जाति न बन पाये। जो लोग खेती करते हैं उन्हें ही ज़मीनका मालिक होना चाहिये। हमारे देशमें इस दिशामें कुछ कार्य हुआ है, और शायद प्रत्येक राज्यमें घरसंबंधी छूट दी गई हैं। इस छूटसे महाजन-जातिकी कुछ हानि नहीं हुई है। जब हम कर्जके लिये लोगोंको जेलमें डालते थे, उस समय भी लोगोंका कर्जा, कमसे कम, उतना ही अरक्षित था, जितना आजकल। गृह-संबंधी कानूनोंके कारण एक निश्चित मूल्य अथवा निश्चित परिणामका घर जबर्दस्ती बेचा नहीं जा सकता। इन कानूनोंसे बड़ा लाभ हुआ है। निश्चयसे इनके कारण जातिके घरोंकी संख्या तिगुनी हो गई है।

एक दूसरा प्रश्न है, जिसमें मेरी बड़ी दिलचस्पी है। मेरी सम्मतिमें हमारी शताब्दिके बुद्धिमानों और दयावानोंको इस प्रश्नका उत्तर देना चाहिये।

हम सभी जानते हैं कि युगोंसे आदमी 'दास' होते आये हैं, और हम यह भी जानते हैं कि इन सारे वर्षोंमें, एक सीमातक, स्त्रियाँ दासोंकी भी दास रही हैं। मानव-जातिके लिये यह अत्यधिक महत्त्वकी बात है कि स्त्रियाँ माताएँ स्वतन्त्र हों। निस्संदेह विवाहका बन्धन बहुत महत्त्वपूर्ण और बहुत ही पवित्र है। सभी प्रथाओंमें विवाहकी प्रथा महत्त्वकी है। हाँ, विवाहका 'संस्कार' वास्तविक विवाह नहीं है। यह तो भीतर जलनेवाली प्रेमाग्निका बाहरी साक्षी मात्र है। परस्पर प्रेमके बिना वास्तविक विवाह नहीं हो सकता। मैं विवाहके 'संस्कार' में विश्वास करता हूँ कि यह सार्वजनिक होना चाहिये। इसका लेखा-जोखा रहना चाहिये। इसके अतिरिक्त, विवाह-संस्कार द्वारा सारे संसारको यह सूचना मिल जाती है कि जो विवाह करने जा रहे हैं वे परस्पर प्रेमी हैं।

अब तलाकका प्रश्न उठता है। करोड़ों आदमी यह समझते हैं कि जिनका

विवाह होता है वे किसी अदृश्य शक्ति द्वारा एक दूसरेके साथ बाँध दिये जाते हैं। इसलिये उन्हें इकट्ठे रहना चाहिये, कमसे कम जीवनभर विवाहित तो अवश्य। यदि जिनका विवाह हुआ है उन सबको किसी अदृश्य शक्तिने ही इकट्ठा किया है, तो हमें स्वीकार करना होगा कि वह अदृश्य शक्ति असीम बुद्धिकी मालिक नहीं है।

अन्तमें, विवाह एक शर्तनामा है। दोनों पक्षोंको शर्तोंका पालन करना ही चाहिये और दोनोंमेंसे किसी एकको ही उन शर्तोंसे तब तक मुक्ति नहीं मिलनी चाहिये, जब तक ऐसा करना समाज-हितके लिए आवश्यक न हो। मैं ऐसा कानून चाहूँगा कि यदि पत्नी लगातार और दुष्टतापूर्ण ढंगसे शर्तोंको तोड़े, तो पति तलाक़ प्राप्त कर सके। ऐसा तलाक बराबरीके आधारपर होना चाहिये। म स्त्रीको भी तलाककी अनुज्ञा दूँगा, यदि वह इसके लिये प्रार्थना करती हो, और इसे चाहती हो।

मैं यह केवल उसके लिये नहीं चाहूँगा बल्कि सारी जातिके लिये, सारी कौमके लिये। तमाम बच्चे प्रेमकी सन्तान होने चाहिये। ज्यों ही वे जन्म ग्रहण करें, उनका ईमानदारीसे स्वागत होना चाहिये। उन माताओंके बच्चे जो उनके पिताओंको नापसन्द करती हैं, उनसे घृणा करती हैं, उनसे पिंड छुड़ाना चाहती हैं, संसारको पागलपनसे और जुर्मसे भर देंगे। कोई भी औरत न कानूनके ही कारण और न लोगोंकी सम्मतिके ही कारण, इस बातके लिये मजबूर न होनी चाहिये कि उसे किसी ऐसे आदमीके साथ रहना पड़े जिससे वह घृणा करती है। इस बातका कोई खतरा नहीं है कि तलाक संसारको दुःशील बनायेगा और इस बातका भी खतरा नहीं है कि मानव हृदयसे वह दिव्य वस्तु जिसे प्रेम कहते हैं जड़ मूलसे जाती रहेगी। जब तक मानव-जातिका अस्तित्व है, और पुरुष और स्त्री एक दूसरेको 'प्रेम' करते रहेंगे, तब तक सच्चे और पूर्ण विवाह होते रहेंगे। सदाचारके लिये दासता न तो अच्छी मिट्टीका ही काम देती है और न वर्षाका।

मैं एक पुरुषको तलाक देने और एक स्त्रीको तलाक देनेमें भेद करता हूँ। उसका कारण है। एक स्त्री अपने पतिको अपना तारुण्य और अपना सौन्दर्य दहेजमें देती है। पुरुषको इस बातकी छुट्टी नहीं होनी चाहिये कि क्योंकि अब वह बूढ़ी हो गई है और उसके मुँहपर झुर्रियाँ पड़ गई हैं,

इसलिये वह उसे छोड़ दे। उसकी पूँजी जाती रही है और भावी जीवन-के लिये वह कुछ विशेष आशा नहीं रख सकती। दूसरी ओर हो सकता है कि पुरुष शादी करनेके समयसे भी अच्छी परिस्थितिमें हो। सामान्य रूपसे पुरुष प्रायः अपनी खबर आप ले सकता है और स्त्रीको सहायताकी आवश्य-कता होती है। इस लिये मैं पुरुषको इस बातकी आज्ञा नहीं दूँगा कि जब तक स्त्री एकदम ही विवाहकी शर्तोंका उल्लंघन न करे, वह उसे छोड़ दे। किन्तु जातिके लिये, और विशेष रूपसे बच्चोंके लिये मैं उसके इच्छा करने मात्रपर पतिको छोड़ देनेकी अनुज्ञा दूँगा।

जब तक स्वतन्त्र स्त्रियों, स्वतन्त्र माताओंकी एक पीढ़ी नहीं होती तब तक महान् पुरुषोंकी भी कोई एक पीढ़ी नहीं हो सकती।

हमारी भाषाका कोमलतम शब्द है—'मातृत्व'। इस एक शब्दमें आनंद और पीड़ाका प्रेम तथा आत्म-बलिदानका दैवी समिश्रण है। यह शब्द पवित्र है।

६

मजदूरोंकी समस्या

अनेक वर्षोंसे जिसे हम 'मजदूरों' की समस्या कहते हैं, उसपर लगातार विवाद चल रहा है—मजदूर और पूँजी-पतिके विरोधके बारेमें। अनेक तरीके निकाले गये हैं और इस समस्याको सुलझानेके लिये कुछ तजर्बे भी किये गये हैं। लाभमें हिस्सा बटानेसे काम नहीं चलेगा; क्योंकि जो हानिमें हिस्सा नहीं बटा सकते उनके साथ लाभमें हिस्सा बटा सकना असम्भव है। समितियोंकी रचना हुई है। उद्देश्य यही रहा है कि जो इन समितियोंके सदस्य हों वे खर्च करें और लाभमें हिस्सा बटायें। बहुत करके यह योजना भी सफल नहीं हुई।

दूसरोंने, न्यायकर्तासे न्याय करानेका समर्थन किया है; और यदि यह सम्भव मान भी लिया जाय कि मालिकोंको न्यायाधीशोंके निर्णयोंसे बँधा जा सकता है, तो भी अभी तक कोई ऐसा तरीका नहीं मालूम हुआ जिससे मजदूर लोग भी उन निर्णयोंसे बँधे रहें। दूसरे शब्दोंमें, इस समस्याका हल नही हुआ।

जहाँ तक मेरी बात है मालिकों और मजदूरोंके विकासके अतिरिक्त—सभ्य बननेके अतिरिक्त—मुझे समस्याका कोई संतोषजनक हल नहीं दिखाई देता। यह प्रश्न इतना उलझा हुआ है, इसमें इतनी अधिक शाखाएँ प्रशाखाएँ हैं कि मुझे कानून अथवा बल-प्रयोगद्वारा इस समस्याका हल हो सकना सम्भव नहीं दीखता। मालिकोंसे यह आशा की जाती है कि वे अपने मुनाफ़ेके अनुसार मजदूरोंको दें। वे दे भी सकते हैं, नहीं भी दे सकते। हो सकता है कि मालिकोंकी आपसकी होड़ उनके मुनाफ़ेको नष्ट ही कर दे। जिस प्रकार मजदूर किसी मालिककी दयापर निर्भर करते हैं उसी प्रकार वह मालिक भी दूसरे मालिकोंकी दयापर निर्भर करता है। मालिक लोग कीमतोंपर अधिकार नहीं कर सकते, वे माँगको काबूमें नहीं रख सकते। उनका किसी सामग्रीपर भी कोई अधिकार नहीं। और आजके संसारमें यदि षड्यंत्रद्वारा उनमें बाधा न डाली जाय तो पदार्थकी उत्पत्ति और उसकी माँगके जो नियम हैं वे ही व्यापारके संसारपर लागू होते हैं।

क्या बिना मस्तिष्कके विकासके, बिना बुद्धिके प्रकाशकी सहायताके कोई ऐसा समय आयेगा और क्या आ सकता है, जब खरीदार वस्तुका उचित मूल्य देना चाहे, जब मालिक उचित 'लाभ' से संतुष्ट हो जाय, जब मालिक कच्चे-मालके लिये उचित मूल्य देनेको उत्सुक रहे; जब वह वास्तवमें मजदूरको उसकी मज़दूरीका पूरा बदला देना चाहे? क्या मालिक कभी इतना सभ्य हो जायगा कि वह यह समझ जाये कि और चीजोंकी तरह संसारके मजदूरोंके बाजार पर भी 'मजदूरोंके मिलने और उनकी मांग' का सिद्धांत (Demand and Supply) लागू नहीं किया जा सकता? क्या वह कभी इतना सभ्य हो जायगा कि वह गरीब लोगोंकी भूख, वस्त्रोंकी आवश्यकता और उनकी दरिद्रतासे अनुचित लाभ न उठाये? क्या वह कभी इतना सभ्य हो जायगा कि वह कह सके कि "जो मजदूर मेरे लिये काम करता है, उसे मैं इतना पर्याप्त दूँगा कि वह उसका उचित आधार बन सके, वह उससे अपने बीबी-बच्चोंकी खबर ले सके, वह उससे यह सब करके अपने बुढ़ापेमें खाने पहननेके लिये कुछ बचाकर भी रख सके। वह जीवनकी पतझड़के लिये, एक घर बना सके जिसमें बैठकर वह अपने थके और काँपते हुए हाथोंको सेंक सके!" हाँ, विना श्रमकी सहायताके पूँजी कुछ नहीं कर सकती। संसारमें

जो कुछ भी मूल्यवान् है, सब मज़दूरकी कमाई है। चाहे आवश्यक चीजोंपर कर लगे, चाहे ऐशो आरामकी चीजोंपर कर लगे, मजदूरको ही हर पाई देनी पड़ती है।

हमें याद रखना चाहिये कि दिन प्रतिदिन मजदूर समझदार होते जा रहे हैं और इसी प्रकार मैं समझता हूँ कि मालिक भी शनैः शनैः अधिक सभ्य, शनैः शनैः अधिक दयालु होते जा रहे हैं। बहुतसे आदमियोंने जिन्होंने अपने भाइयोंके परिश्रमके फलस्वरूप अपार धन राशि एकत्रित की, उन्होंने करोड़ों रुपये 'दान' में खर्च किये, अथवा शिक्षा-प्रसारमें। यह एक प्रकारका प्रायश्चित्त है। क्योंकि जिन आदमियोंने अपने साथियोंके दिमाग, और शरीर-बलसे यह धन अर्जित किया, उन्होंने यह अनुभव किया कि यह पैसा उनका ही नहीं था। बहुतसे मालिकोंने, युनिवर्सिटियोंके लिये, पुस्तकालयोंकी स्थापनाके लिये, पानीके चश्मोंकी बनावटके लिये, अथवा महान् पुरुषोंकी यादगारें बनानेके लिये कुछ धन छोड़ कर अपना लेखा-जोखा बराबर किया है। मैं समझता हूँ कि यह कहीं अधिक अच्छा होता यदि उन्होंने इन रुपयोंको उन लोगोंकी दशा सुधारनेमें खर्च किया होता जिन्होंने इसे वास्तवमें कमाया है।

इसलिये मैं सोचता हूँ कि जब हम सभ्य हो जायँगे, तो बड़े बड़े संघ उन लोगोंके लिये हर तरहकी व्यवस्था करेंगे, जिन्होंने उनकी सेवामें अपना जीवन खपा दिया है। मैं समझता हूँ कि बड़ी बड़ी रेल-कम्पनियोंको अपने थके-माँदे मजदूरोंको पेन्शनें देनी चाहिये। उन्हें वृद्धावस्थामें उनकी सार सँभाल रखनी चाहिये। उन्हें अपने नौकरोंको एकदम निस्सत्व बनाकर दरिद्र गृहोंमें जीवन बितानेके लिए नहीं छोड़ देना चाहिये। इन बड़ी बड़ी कम्पनियोंको चाहिये कि जिन आदमियोंको वे चल सकनेमें असमर्थ बनाती है उनकी सुध-बुध लें। उन्हें उन आदमियोंका ध्यान रखना चाहिये, जिनके जीवन उन्होंने ले लिये, और जिनका परिश्रम ही उनके ऐश्वर्यकी आधार-शिला है। इस प्रश्नपर जनताकी भावना इस हद तक उभारी जानी चाहिये कि इन कम्पनियोंको किसी आदमीकी सारी जीवन-शक्तिका उपयोग कर लेनेके बाद उसकी वृद्धावस्थामें उस आदमीको उसी तरह छोड़नेमें लज्जा आये, जैसे कोई फटी पुरानी टाई फेंक देता है।

यह सम्भव है कि मिस्त्री और मज़दूर आगे चलकर इतने समझदार बन जायें कि वे आपसमें एक होकर एकट्ठे साथ क़दम उठा सकें। यदि ऐसा हो सके तो उनकी उचित मजदूरी निश्चित हो सकती है और लोगोंको उसे देनेके लिये मजबूर भी किया जा सकता है। इस प्रकारके जितने प्रयत्न अभी तक हुए हैं, वे सब स्थानीय रहे हैं, और उनमें किसी प्रकारकी सफलता नहीं मिली। लेकिन यदि वे संगठित हो सकें तो उन्हें जो उचित है, जो न्याय है, वह मिल सकता है; और उन्हें लोगोंके बहुत बड़े बहुमतकी सहानुभूति प्राप्त हो सकती है।

लेकिन इस तरहकी कोई बात कर सकनेसे पहले उन्हें वास्तवमें समझदार बनना होगा—उनमें इतनी समझ होनी चाहिये कि वे उचितको पहचान सकें, और इतनी ईमानदारी भी कि उससे अधिककी आशा न करें।

अभी तक मज़दूरके लिये इतना कुछ हो चुका है कि मुझे भविष्य आशा-पूर्ण, अत्यधिक आशापूर्ण लगता है। बहुतसे देशोंमें मजदूरीके घंटे कम कर दिये गये हैं, बहुत कम। एक समय था जब आदमी प्रति-दिन पंद्रह और सोलह घंटे काम करता था। अब सामान्य तौर पर दस घंटेसे अधिकका दिन नहीं होता और झुकाव इसी ओर है कि मजदूरीके घंटोंको और भी कम कर दिया जाय।

यदि हम बड़े कालखण्डोंकी परस्पर तुलना करें तो जो उन्नति हुई है उसे हम अधिक स्पष्टतासे देख सकते हैं। १८६० में एक मज़दूर, एक कारीगर तथा एक मिस्त्रीकी वर्षभरकी औसत-आमदनी लगभग दो सौ पचास डॉलर थी। अब यह लगभग ५०० डॉलर है, और आज एक डॉलरमें १८६० की अपेक्षा जीवनकी अधिक आवश्यकतायें खरीदी जा सकती हैं, अधिक भोजन अधिक कपड़े तथा अधिक जलावन। इन बातोंसे भविष्यके लिये आशा बँधती है।

हमारी तमाम सहानुभूति, उन्ही लोगोंसे होनी चाहिये जो काम करते हैं, जो परिश्रम करते हैं, उन स्त्रियोंसे जो स्वयं मेहनत करती हैं, और बच्चोंसे; क्योंकि हम जानते हैं कि श्रम ही सबका आधार है और जो परिश्रम करते हैं, वे ही वास्तवमें इस सभ्यता और उन्नतिके भवनके चमकदार ढाँचेको खड़ा रखे हुए हैं।

७

बच्चोंको शिक्षित बनाओ

हर बच्चेको आत्म-निर्भर रहनेकी शिक्षा देनी चाहिये, और हर किसीको यह शिक्षा मिलनी चाहिये कि वह जिस प्रकार मौतसे बचता है उसी प्रकार दूसरोंका भार बननेसे बचे।

हर बच्चेको यह शिक्षा मिलनी चाहिये कि जो उपयोगी हैं वे ही सम्माननीय भी हैं, और जो दूसरोंके परिश्रमकी कमाई खाते हैं वे समाजके शत्रु हैं। हर बच्चेको यह बताना चाहिये कि उपयोगी काम पूजा है और समझदारीके साथ किया गया परिश्रम, सर्वश्रेष्ठ ढंगकी पूजा।

बच्चोंको बिचार करना, खोज करना, अपनी बुद्धि पर, अपने परीक्षणपर निर्भर रहना सिखाना चाहिये; उन्हें इन्द्रियोंका उपयोग करना सिखाना चाहिये; उन्हें केवल वे ही बातें सिखानी चाहिये जिनका कुछ न कुछ उपयोग हो। उन्हें औजारोंको तथा अपने हाथोंको काममें लाना आना चाहिये और अपने विचारोंके अनुसार नवीन वस्तुओंकी रचना करना। उनका जीवन बेकार अथवा लगभग बेकार चीज़ोंके संग्रहमें नष्ट नहीं होना चाहिये। मृत भाषाओंके सीखनेमें तथा इतिहासके अध्ययनमें, जो अधिकतर ऐसी बातोंके ब्योरेके अतिरिक्त और कुछ नहीं, जो कभी घटी ही नहीं, उनके वर्ष खर्च नहीं होनी चाहिये। बड़ी बड़ी लड़ाइयों तथा राजाओंके पैदा होने और मरनेकी तिथियोंसे दिमाग़को भरना बेकार है। उन्हें इतिहासका 'दर्शन' सिखाना चाहिये और 'जातियों', 'दर्शनशास्त्रों', 'मतों' और सबसे बढ़कर 'विज्ञानों' का विकास-क्रम।

इस प्रकार उन्हें न केवल आर्थिक ईमानदारी, किन्तु दिमाग़ी ईमानदारीका भी महत्त्व समझाना चाहिये—वे एकदम सच्चे हों; अपने वास्तविक विचारोंको प्रकट करें और अपनी यथार्थ सम्मति दें। यदि माता-पिता चाहते हैं कि उनके बच्चे ईमानदार हों तो उन्हें स्वयं ईमानदार होना चाहिये। यह असम्भव नहीं कि ढोंगियोंकी संतान अपने माता-पिताके दुर्गुणोंको ग्रहण कर ले। जो स्त्री-पुरुष बहुमतके साथ सहमत होनेका ढोंग करते हैं, जो एक तरह

सोचते हैं और दूसरी तरह मुँह खोलते हैं, वे कभी इस बातकी आशा नहीं कर सकते कि उनकी संतान एकदम सच्ची होगी।

किसी स्कूलमें कोई ऐसी बात नहीं सिखाई जानी चाहिये जो अध्यापक स्वयं न जानता हो। विश्वासों, मिथ्या-विश्वासों और मतोंको वैज्ञानिक तौर-पर सिद्ध बातोंकी गिनतीमें नहीं लेना चाहिये। बच्चेको खोज करनेकी शिक्षा मिलनी चाहिये, न कि विश्वास करनेकी। अत्यधिक विश्वासीकी अपेक्षा अत्यधिक संदेहशील होना अच्छा है। इसलिये बच्चोंको यही शिक्षा मिलनी चाहिये कि यह उनका कर्त्तव्य है कि वे स्वयं सोचें, समझें, और यदि सम्भव हो तो जानें।

वास्तविक शिक्षा ही भविष्यकी आशा है और हृदयका विकास संसारसे अभाव और जुर्मको दूर कर देगा। विद्यालय ही सच्चा मंदिर है और विज्ञान ही मनुष्य-जातिका वास्तविक त्राता शिक्षा—वास्तविक शिक्षा, ईमानदारी, सदाचार तथा संयमकी सहायक है।

लोगोंको बुद्धिमान और नेक बनानेके लिये हम कानूनका भरोसा नहीं कर सकते और नहीं हम यह आशा कर सकते हैं कि आकर्षणोंसे दूर रहनेसे ही लोग सच्चरित्र बने रहेंगे। आकर्षण जंगलके वनोंकी तरह घने हैं। जब तक मर न जाय कोई भी उनकी पहुँचसे बाहर नहीं हो सकता। बड़ी बात यह है कि लोग इतने समझदार हों, इतने मज़बूत हों कि वे आकर्षणोंसे भागें नहीं किन्तु उनका मुकाबला करें। सभ्यताकी सारी शक्तियाँ सदाचार और संयमका पक्ष लिये हुए हैं। ऐसी बातोंमें कानूनके द्वारा कुछ नहीं हो सकता, क्योंकि कानून प्रायः व्यक्तिगत स्वतंत्रताका अपहरण करता है। संयम, सदाचार अथवा और भी किसी चीज़के लिये स्वतंत्रताका बलिदान नहीं किया जा सकता। हर वस्तुकी अपेक्षा यह अधिक मूल्यवान् है। तो भी ऐसे लोग हैं जो जंगली-घासकी बढ़तीको रोकनेके लिए सूर्यको नष्ट कर डालना पसन्द करेंगे। सूर्यका जीवनसे जो सबन्ध है, ठीक वही सम्बन्ध स्वतंत्रताका सभी सद्गुणोंसे है। स्वतंत्रताको खो देनेकी अपेक्षा यह अच्छा है कि मानवता फिर अपनी आरंभिक अवस्थाको प्राप्त हो जाय, आदमी ग़ारों और गुफाओंमें रहने लग जाय, वह तमाम कला और तमाम आविष्कारोंको भूल जाय। स्वतंत्रता उन्नतिकी साँस है। यह प्रेम और आनन्दका बीज है। धरती है, गर्मी है, और है वर्षा।

इस लिये सबको यही शिक्षा दी जानी चाहिये कि स्वयं प्रसन्न रहना सबसे बड़ी महत्त्वाकांक्षा है, और दूसरोंकी प्रसन्नताका कारण बनना। सफलताके लिये स्थान और पद अनावश्यक हैं। अत्यधिक धन इकट्ठा करनेकी इच्छा एक प्रकारका पागलपन है। उन्हें यह शिक्षा मिलनी चाहिये कि जिस चीजकी उन्हें आवश्यकता नहीं, जिस चीज़का न उनके लिये और न किसी दूसरेके लिये कोई उपयोग है उसका संग्रह करना शक्तिका अपव्यय है, विचारका अपव्यय है, और जीवनका अपव्यय है।

मानव-जातिमें न भिखारी ही सबसे अधिक सुखी हैं और न करोड़-पति ही। सीढ़ीके निचले सिरेपर खड़ा हुआ आदमी ऊपर चढ़ना चाहता है और जो ऊपरके सिरेपर है उसे डर लगा रहता है कि कहीं वह गिर न पड़े। एक माँगता है, दूसरा इन्कार करता है; और बारबार इन्कार करनेसे हृदय इतना कठोर हो जाता है और हाथ इतने लोभी कि उनसे छोड़ते ही नहीं बनता।

थोड़े ही आदमी इतने समझदार हैं और थोड़े ही आदमियोंमें इतनी वास्तविक महानता है कि वह विशाल धन-राशिके स्वामी बन सकें। समान्य रूपसे सम्पत्ति ही उनकी मालिक होती है। वे सम्पत्तिके लिये उसी प्रकार खटते हैं जिस प्रकार गुलाम अपने मालिकके लिये। जो आदमी किसी अच्छे काम-काजमें लगा है, खासी आमदनी कर लेता है, भविष्यके लिये भी कुछ बचा कर रख सकता है, अपने बच्चोंको पढ़ा-लिखा सकता है और अपने प्रियजनोंकी भूख-रूपी भेड़ियेसे रक्षा कर सकता है—वही आदमी सबसे अधिक प्रसन्नचित्त आदमी होना चाहिए।

अब समाज धनके आगे झुकना और घुटने टेकना जानता है। धनसे शक्ति मिलती है। धनसे खुशामद और पूजा होती है। इसलिए करोड़ों आदमी अपनी सारी शक्ति, अपना सब कुछ धन कमानेमें खर्च करते हैं। और यह तब तक जारी रहेगा जब तक कि समाज इतना अज्ञानी बना रहेगा, इतना ढोंगी रहेगा कि वह बिना धनी आदमीके चरित्रकी ओर तनिक भी ध्यान दिये, उसका आदर-सत्कार करता रहे।

धनिकोंका विचार करते समय दो बातें ध्यान देनेकी हैं : उन्होंने धन कैसे कमाया ? वे धनका क्या करने जा रहे हैं ? क्या धन इमानदारीसे कमाया गया

है ? क्या उसका उपयोग मानवताके कल्याणके लिये हो रहा है ? जब आदमी वास्तवमें समझदार हो जायगा, जब उसका मस्तिष्क वास्तवमें विकसित हो जायगा तो कोई भी भला आदमी किसी ऐसी चीजके संग्रहके लिये अपनी जान नहीं देगा जिसकी या तो उसे आवश्यकता नहीं है, या जिसका वह बुद्धिपूर्वक कोई उपयोग नहीं कर सकता ।

समय आयेगा जब सच्चा, बुद्धिमान आदमी तब तक प्रसन्न नहीं होगा, तब तक संतुष्ट नहीं होगा, जब तक उसके करोड़ों भाई नंगे और भूखे रहेंगे। समय आयेगा जब हर दिलमें दयाके पवित्र फूलकी सुगन्ध महकती होगी। समय आयेगा जब संसार सत्यकी खोजके लिए उत्सुक होगा, और उत्सुक होगा प्रसन्नताके नियमोंका पता लगानेके लिये तथा तदनुसार अपना जीवन बितानेके लिये। समय आयेगा जब प्रत्येक दिमागमें मानसिक औदार्यकी हवा बहती होगी ।

आदमी तभी सभ्य समझा जायगा जब उसके (कामादिके) वेग उसकी बुद्धिके अधीन होंगे, जब तर्क सिंहासनपर विराजमान होगा, और जब (कामादि) वेगोंका उष्ण-रक्त सफल विद्रोह न कर सकेगा ।

संसारको सभ्य बनानेके लिए, सम्पूर्णताका सुनहरी दिवस शीघ्र लानेके लिये, हमें बच्चोंको शिक्षा देनी चाहिये। वह हमें पालनेसे ही आरंभ करनी चाहिये —माताकी प्रेमभरी गोदसे ही ।

९

हम काम करें और प्रतीक्षा करें

जिन सुधारोंकी मैंने बात की है वे एक दिनमें नहीं हो सकते, सम्भव है अनेक शताब्दियोंतक नहीं; और इस बीचमें जुर्मोंकी कमी नहीं, दरिद्रताकी कमी नहीं और भूखकी कमी नहीं। इसलिये कुछ न कुछ अभी करना चाहिये ।

जहाँ तक सम्भव हो हर आदमी आत्म-निर्भर होनेका प्रयत्न करे; हर आदमी समझदारीके साथ कलकी भी चिन्ता करे; और यदि कोई अपना पालन-पोषण कर लेता है और तो भी उसके पास कुछ बच रहता है तो उसे चाहिये कि जो

बचा है, उसमेंसे एक हिस्सा वह अभागोंके लिये खर्च करे। हर आदमी यथासामर्थ्य अपने भाइयोंकी सहायता करे। हर आदमीको चाहिए कि वह अपने परिचितोंमें जो गिरे हैं, उन्हें उठानेका प्रयत्न करे, जिनको काम नहीं है उनको काम दे। हर आदमी मधुर-वाणी बोले, बुद्धिकी वाणी बोले, प्रसन्नता और आशाकी वाणी बोले। दूसरे शब्दोंमें हर आदमी जितनी भी भलाई कर सकता है करे, अपने भाइयोंकी जो भी सेवा कर सकता हो करे, लेकिन साथ ही इस बातके लिये प्रयत्नशील रहे कि अच्छे दिन यथाशीघ्र आयें।

मेरी सम्मतिमें यही सच्चा धर्म है। जो भलाई तुम कर सकते हो उसका करना 'महात्मा' शब्दके ऊँचेसे ऊँचे और श्रेष्ठसे श्रेष्ठ अर्थमें 'महात्मा' बनना है। जो भलाई तुम कर सकते हो उसका करना ही वास्तविक और सच्ची आध्यात्मिकता है। किसीके दुखको दूर करना, निराशाकी अँधेरी रातमें आशाकी किरण संचार करना, यही सच्ची पवित्रता है। यही विज्ञानका धर्म है। पुराने मत मतान्तर बड़े ही संकुचित हैं। जिस संसारमें हम रह रहे हैं, वे इसके लिये नहीं हैं। हम विशाल और श्रेष्ठतर होते जा रहे हैं।

"अज्ञान ही एक मात्र अंधकार है।"

हमें चाहिये कि हम संसारमें मानसिक प्रकाशकी बाढ़ ला दें।

प्रेत-देवता

"वे अपनी खाली जगहोंको जिनमें आँखें नहीं हैं अपने मांसहीन हाथोंसे ढक लें और आदमीके कल्पना-जगतसे सदाके लिये विलीन हो जायें।"

जो कुछ दुनियामें घटता है, उस सबकी व्याख्या तीन तरहसे की जाती है, एक अलौकिक तरहसे; दूसरे, अलौकिक और प्राकृतिक तरहसे; तीसरे, प्राकृतिक तरहसे। सभ्यताके उदयसे ही इन तीनों पद्धतियोंमें निरंतर युद्ध होता रहा है। इस महान् युद्धमें लगभग सभी सैनिक अलौकिक-वाद अथवा पारलौकिक वादकी ओरसे लड़ते रहे हैं। अलौकिक वाद अथवा पारलौकिक वादके माननेवालोंका आग्रह है कि प्रकृतिपर सोलह आने बाह्य शक्तियोंका अधिकार है और वह उन्हींके द्वारा संचालित होती है। प्रकृतिवादियोंका कहना है कि प्रकृति अपने ही भीतरसे काम करती है, प्रकृति प्रभावित नहीं होती; विश्व जितना है उतना ही है; जो कुछ भी विद्यमान् है, प्रकृति उसे अपनी अनन्त बाँहोंमें समेट लेती है, और प्रकृतिकी सीमासे परे जितनी भी काल्पनिक शक्तियाँ हैं वे सब भूत-प्रेत हैं। तुम कहते हो, 'ओह, यह तो भौतिकवाद है।' यह प्रकृति अथवा (महा) भूत क्या है? मैं अपने हाथमें कुछ मिट्टी लेता हूँ। इसमें कुछ बीज डालता हूँ। अब सूर्यके तरकशमेंसे किरणोंके कुछ तीर इसपर पड़े, और वर्षा भी हुई। बीज उगेंगे, और एक पौधा बाहर निकल आयेगा। क्या तुम इसे समझते हो? क्या तुम एक विचारकी उत्पत्तिकी व्याख्यासे इसकी अधिक अच्छी व्याख्या कर सकते हो? क्या तुम्हें इसकी तनिक भी कल्पना है कि यह वास्तवमें क्या है? इतना होनेपर भी तुम प्रकृति अथवा महाभूतकी चर्चा इस प्रकार करते हो मानो तुम उसकी उत्पत्तिसे परिचित हो, मानो तुमने चट्टानोंकी बंद मुट्ठियोंमेंसे भौतिक अस्तित्वके रहस्यको प्राप्त कर लिया है। क्या तुम जानते हो कि 'वेग' अथवा 'शक्ति' क्या वस्तु है? क्या तुम आणविक-क्रियाकी व्याख्या कर सकते हो? क्या तुम वास्तवमें रसायनशास्त्रसे परिचित हो और क्या तुम परमाणुओंके राग और द्वेषकी व्याख्या कर सकते हो? क्या प्रकृतिमें कुछ ऐसा नहीं है जो कभी हाथ ही नहीं लगता? सब

होने पर भी क्या तुम जो दिखाई देता है उससे परे, ऊपर या नीचे जा सकते हो ? इससे पहले कि तुम 'भौतिकवाद' 'भौतिकवाद' चिल्लाओ, क्या यह अच्छा नहीं कि तुम पहले इस बातका निर्णय कर लो कि प्रकृति अथवा महा-भूत वास्तवमें क्या हैं ? क्या तुम बिना भौतिक आधारके किसी भी चीजकी कल्पना कर सकते हो ? क्या तुम किसी एक भी परमाणुके सर्वथा विलीन होनेकी कल्पना कर सकते हो ? क्या तुम्हारे लिये यह सम्भव है कि तुम एक परमाणुकी उत्पत्तिकी ही कल्पना कर सको ? क्या तुम्हें एक भी ऐसा विचार सूझ सकता है जिसका मूल्य उस वस्तुमें न हो जिसे तुम प्रकृति या महा-भूत कहते हो ?

हमारे पूर्वजोंने * भौतिकवादको अस्वीकार किया और सभी घटनाओंकी व्याख्या देवताओं और भूत-प्रेतोंकी स्वेच्छाचारिताके हिसाबसे की।

हजारों वर्ष तक यह विश्वास किया जाता रहा है कि प्रेत-देवता अच्छे और बुरे, दयालु और निर्दय, कमज़ोर और शक्तिशाली किसी न किसी रहस्यमय तरीकेसे सभी घटनाओंके कारण होते रहे हैं। रोग और स्वास्थ्य, सुख और दुख, सौभाग्य और दुर्भाग्य, शांति और युद्ध, जीवन और मृत्यु, सफलता और असफलता सभी इन्हीं प्रेतोंके तरकशोंके तीर थे। यह छायारूप प्रेत मनुष्योंको प्रसन्न होकर पुरस्कृत करते थे ओर अप्रसन्न होकर दंड भी देते थे। वे बर्फ, प्रकाश और वर्षा देते और जब चाहते रोक भी देते। उनके आशीर्वादसे पृथ्वी हरि-भरी हो जाती और शापसे अकाल पड़ जाता। वे आदमीके बच्चोंको खिलाते-पिलाते और जब चाहते उन्हें भूखा भी मारते। वे राजाओंको सिंहासनपर बिठाते और उनके सरसे ताज उतार भी लेते। वे युद्धोंमें पक्ष ग्रहण करते थे। उनका हवाओंपर अधिकार था, जिससे कभी तो समुद्र-यात्रायें भाग्यवान् होतीं, बहादुर नाविक बंदरगाहमें जाकर अपने स्त्री-बच्चोंसे मिल सकते और कभी उनके भेजे तूफानोंके कारण समुद्र-तटसे टूटे हुए जहाज और मृत आदमीकी लाशें आ टकरातीं।

पहले इन प्रेत-देवताओंकी संख्या लगभग अनगिनत थी। पृथ्वी, हवा और पानी सभी स्थान इन भूत-प्रेतोंसे भरे हुए थे। आधुनिक युगमें उनकी संख्या

* क्या सभीने ? (अनु०)

बहुत कुछ घट गई है, क्योंकि अब बहुत करके अलौकिक तथा प्राकृतिककी खिचड़ीवाली व्याख्या स्वीकार कर ली गई है। शेष बचे हुए भूत-प्रेतोंके बारेमें यही समझा जाता है कि वे वही काम करते हैं जो पुराने अनगिनत भूत-प्रेत करते रहे हैं।

यह विश्वास सदासे चला आया है कि ये देवता-गण, येन केन प्रकारेण प्रसन्न किये जा सकते थे। उन्हें बलिदानों द्वारा संतुष्ट किया जा सकता था और प्रार्थनाओंद्वारा, व्रतोंद्वारा, मंदिरोंके निर्माणद्वारा, आदमियों और पशुओंके रक्त द्वारा, पूजा-पाठों द्वारा, मंत्रोंद्वारा, प्रणाम और दण्डवतों द्वारा, बियाबानमें एकान्तवास द्वारा, अविवाहित रहनेके द्वारा, उत्पीड़नके साधनोंके आविष्कार द्वारा, बच्चों, स्त्रियों तथा पुरुषोंकी हत्या द्वारा, और पृथ्वीपर कालकोठरियोंके निर्माण द्वारा संतुष्ट किया जा सकता था और किया जा सकता था 'नास्तिकों' को जिन्दा जलाकर, आदमियोंके विचारों और अंगप्रत्यंगको जकड़कर, बिना किसी प्रमाणके अथवा प्रमाणके भी विरुद्ध बातोंपर विश्वास करके, सप्रमाण सिद्ध बातोंपर अविश्वासकर उन्हें अस्वीकार करके। उन्हें तर्कसे घृणा करके संतुष्ट किया जा सकता था और किया जा सकता था स्वतंत्रताकी निंदा करके। 'नास्तिकों' को बदनाम करके, मृतोंका अपमान करके, बेहूदा और निर्दयतापूर्ण मतोंको स्वीकार करके, खोजकी प्रवृत्तिको हतोत्साह करके, ग्रंथ-विशेषकी पूजा करके, मिथ्या विश्वासोंको बढ़ा करके, खास-खास समयों और दिनोंको 'पवित्र' मान करके, माला जप करके, मूर्तियोंकी ओर देख करके, दूसरोंसे किरायेपर पाठ और जप कराके, धूप-बत्ती जलाकर, घंटियाँ बजा करके, और इन सभी तरहसे एक दूसरेको गुलाम बनाकर, उनकी आत्माकी आँखें निकाल करके। इन आकाशके प्रेत-देवताओंकी खुशामद करनेके लिये तथा उन्हें प्रसन्न रखनेके लिये यह सभी कुछ किया गया है।

हमारे इस बेचारे संसारके इतिहासमें कोई ऐसा भयानक काम नहीं है, कोई ऐसा अत्याचार नहीं है जो इन प्रेत-आत्माओंके विश्वासियोंके हाथों, इन मांस-रहित भूतोंके पुजारियोंके हाथों न हुआ हो। और आश्चर्य है कि यह 'छाया-रूप' कायरता और बुराईमेंसे ही पैदा हुए हैं। इन्हें उस कलाकारने

जिसका नाम मिथ्याविश्वास है, भयकी पैंसिलसे अज्ञानके फलकपर चित्रित किया है।

इन प्रेत-आत्माओंसे ही हमारे पूर्वज जानकारी प्राप्त करते थे। वे उनके अध्यापक थे। वे ही भूतकालके वैज्ञानिक थे, दार्शनिक थे, भू-गर्भशास्त्र-वेत्ता थे, स्मृतिकार थे, ज्योतिषी थे, अध्यात्मशास्त्री थे, और थे इतिहासकार। युगों तक यही माना जाता रहा कि यह प्रेत-आत्मा ही वास्तविक ज्ञानके स्रोत हैं। वे आदमियोंको पुस्तकें लिखनेके लिये प्रेरित करते, और इसलिये पुस्तकें 'पवित्र' मानी जातीं। यदि वास्तविक बातें इन पुस्तकोंमें लिखे विवरणसे मेल न खातीं, तो यह उन वास्तविक बातोंका दोष था, और उनका पता लगानेवालोंके लिये यह अच्छी बात न थी। उस समय यह विश्वास किया जाता था, और आज भी विश्वास किया जाता है कि ये पुस्तकें अमरत्वका आधार हैं, और इन पुस्तकोंको त्यागना, अथवा इनको 'दैवी ग्रंथ' न स्वीकार करना अमरत्वकी कल्पनासे इनकार करना है। मैं यह बात नहीं मानता।

समय और भाग्यके किनारों तथा चट्टानोंके साथ टकरानेवाली आशा और भयकी अपनी अनंत लहरोंको लिये हुए, आदमीके मनमें समुद्रकी लहरोंकी तरह उठने और बहनेवाली अमरत्वकी कल्पना किसी पुस्तक, किसी मत, अथवा किसी मज़हबमेंसे पैदा नहीं हुई है। यह तो मानवी प्यारमेंसे उत्पन्न हुई है और जब तक प्रेम मृत्युके ओठोंको चूमता रहेगा, तब तक यह संदेह और अंधकारके धुंध तथा बादलोंके नीचे लहराती और बहती रहेगी। यह इन्द्र-धनुष है — दुखके आँसुओंपर चमकनेवाली आशाकी किरण।

प्रेत-आत्माओं द्वारा लिखाई गई पुस्तकोंसे हम इस परिणामपर पहुँचे हैं कि जिस दुनियामें हम रहते हैं वे उसके बारेमें कुछ नहीं जानते थे। क्या वे दूसरी दुनियाके बारेमें कुछ जानते थे? प्रत्येक कदमपर जहाँ इनकी बातका खण्डन सम्भव था उनका खण्डन हुआ है।

इन प्रेत-देवताओं द्वारा, इन आकाशके नागरिकों द्वारा शासन-कार्य चलता था; समस्त शासनाधिकार उन्हींसे प्राप्त होता था। जितने महाराजा, जितने राजा, जितने नरेश थे, सब इन प्रेत-देवताओंसे ही अधिकृत होते थे। आदमीको

किसी भी प्रकारकी शक्तिका स्रोत नहीं माना गया। राजाके विरुद्ध विद्रोह करनेका मतलब इन प्रेत-देवताओंके विरुद्ध विद्रोह करना था, और इन अदृश्य प्रेतों अथवा दृश्य अत्याचारोंको विद्रोहीके रक्तके अतरिक्त कोई पीड़ा प्रसन्न नहीं कर सकती थी। जनताके लिये घुटने टेके रहना ही एक मात्र औचित्य था। दण्डवत् पड़े रहनेवाले ही अच्छे माने जाते थे। जो सीधा खड़ा होनेका साहस करते, वे नास्तिक थे अथवा विद्रोही। इन प्रेत-देवताओंके नामपर, इनसे प्राप्त अधिकारके नामपर, आदमी गुलाम बनाया गया है, कुचला गया है, और लूटा गया है। अधिकांश आदमी धूप और पानीमें कमर तोड़ परिश्रम करते रहे हैं, ताकि इन प्रेत-देवताओंके प्रिय चन्द लोग निकम्मे पड़े रह सकें। अधिकांश लोग झोपड़ियों, गुफाओं और ग़ारोंमें पड़े रहे हैं कि थोड़ेसे लोग महलोंमें रह सकें। अधिकतर लोग चिथड़े पहनते रहे, ताकि चन्द लोग अपने आपको सुनहरी वर्दियोंसे सजा सकें। अधिकांश आदमी रेंग कर चलें, ताकि चन्द आदमी उन्हें अपने लोहेके बूटोंसे कुचल सकें।

इन प्रेत-देवताओंसे आदमियोंने केवल अधिकार प्राप्त नहीं किये, किन्तु उनसे हर तरहकी जानकारी भी मिली। उन्होंने हमें पृथ्वीके आकार प्रकारकी जानकारी दी। उन्होंने हमें बताया कि सूर्य-ग्रहण और चन्द्र-ग्रहण आदमीके पापके परिणाम हैं, संसार छह दिनमें बनाया गया है; ज्योतिष और भूगर्भ विद्या शरारतीयोंके आविष्कार हैं, जो दुष्ट-प्रेतों द्वारा सुझाये गये हैं; दूरबीन-की सहायतासे आकाशका अध्ययन करना एक खतरनाक बात है; (पुरा-तत्त्ववेत्ताओंकी तरह) जमीनको खोदना पाप-भरी उत्सुकता है; और जो कुछ उनके ग्रन्थोंमें लिखा है उससे आगे अपनी बुद्धिको विकसित करनेका प्रयत्न विद्रोह और अगौरवकी भावनाका सूचक है। उन्होंने बताया कि विश्वास करनेसे बढ़कर पुण्य नहीं और संदेहसे बढ़कर कोई पाप नहीं। खोज करना केवल निर्लज्जता है, और इसकी सजा अनंत काल तक दुख भोगते रहना है। उन्होंने न केवल इसी संसारके बारेमें सब कुछ बताया, किन्तु दो और लोकोंके बारेमें भी। यदि दूसरे लोकोंके बारेमें उनके जो कथन हैं वे भी उतने ही सत्य हैं जितने इस लोकके बारे में, तो फिर उनकी जानकारीका मूल्यांकन असम्भव है।

अनगिनत समय तक संसारपर प्रेत-देवताओंका राज्य रहा है और उन्होंने मानवी बुद्धिरूपी बाज़को अंधकारके चमगादरका रूप देनेमें कुछ भी बाकी नहीं रखा। इस पाप-पूर्ण उदेश्यकी पूर्तिके लिए, मानवी-हृदयमेंसे सत्य-प्रेम निकाल बाहर करनेके लिए, मानवताकी 'प्रगति' रोकनेके लिये, संसारसे हर प्रकारकी प्रकाश-किरणोंके बन्द रखनेके लिए और हर दिमाग़को मिथ्या-विश्वासोंसे गन्दा बना देनेके लिए राजाओंकी ताकत, पुरोहितोंका अत्याचार, और चालाकी और जातियोंका धन, सब कुछ काममें आया है।

अत्याचार, अज्ञान, मिथ्या विश्वास और गुलामीके इस युगमें लगभग सभी आदमी राजा, वकील, डॉक्टर, पंडित और अनपढ अज्ञान, भय, और विश्वासकी भयानक उपज जादू-टोनामें विश्वास करते रहे हैं। उनकी धारणा रही है कि आदमी भूत-प्रेतोंका खेल और शिकार रहा है। वे सचमुच यह समझते रहे हैं कि सारा वायु-मंडल इन्हीं मानव-शत्रुओंसे भरा हुआ है। चन्द अपवादोंको छोड़कर यह भयानक विश्वास सर्वव्यापी था। ऐसी परि-स्थितिमें प्रगति लगभग असम्भव थी।

भय दिमागको जड़ बना देता है। प्रगति साहसकी संतान है। भय विश्वास करता है—साहस संदेह करता है। भय पृथ्वीपर गिरकर प्रार्थना करता है—साहस, सीधा खड़ा होकर विचार करता है। भय पीछे हटता है—साहस आगे बढ़ता है। भय जंगली-पन है—साहस सभ्यता है। भय जादू-टोने और भूत-प्रेतोंमें विश्वास करता है। भय 'मजहब' है—साहस विज्ञान है।

जो वास्तविक घटनायें इस भयानक विश्वासका आधार थीं, वे यूरोपकी हर अदालतमें बारबार सिद्ध हुई। आदमियोंने अपने आपको अपराधी स्वीकार किया—माना कि उन्होंने अपने आपको शैतानके हाथ बेच दिया। उन्होंने बिक्रीका ब्यौरा दिया; बताया कि क्या उन्होंने कहा और क्या शैतानने उत्तर दिया। उन्होंने इस बातको स्वीकार किया जब कि वे यह जानते थे कि स्वीकृतिका मतलब मृत्यु है, यह जानते थे कि उनकी सम्पत्ति जब्त कर ली जायगी, यह जानते थे कि उनके बच्चेको भीख माँगनी पड़ेगी। यह इतिहासके चमत्कारोंमेंसे एक है—मानवी बुद्धिका विचित्रतम परस्पर-विरोध। निसंदेह, वे अपने आपको सचमुच

अपराधी मानते थे। पहले तो वे जादू-टोनेमें विश्वास करते थे, और जब उनपर दोषारोपण किया जाता, वे सम्भवतः पागल हो जाते थे। अपने पागलपनमें अपना अपराध मानते थे। उन्हें ऐसा प्रतीत होता था कि उनसे सब कोई दूर दूर रहना चाहता है—उनपर एक ऐसा दोषारोपण है, जिसे वे असिद्ध नहीं कर सकते। दल-दलमें फँसे हुए एक आदमीकी तरह उनका प्रत्येक प्रयत्न उन्हें नीचे ही नीचे लिये जाता था। मिथ्या विश्वासकी मकड़ीके इस भयानक जालमें फँस जानेपर, आशा उनका साथ छोड़ देती, और अपराध-स्वीकृतिके पागलपनके अतिरिक्त और कुछ न बच रहता। सारा संसार पागल मालूम देता।

जेम्स प्रथमके समयमें एक आदमीको इसलिए मृत्यु-दण्ड दिया गया, क्योंकि वह राजकीय परिवारके एक व्यक्तिको डुबानेके उद्देश्यसे समुद्रमें तूफान लानेके लिये जिम्मेवार था। वह इसे असिद्ध कैसे कर सकता था? वह यह कैसे दिखा सकता था कि वह तूफान नहीं लाया? उस समय यही सामान्य विश्वास था कि सभी तूफान शैतानके उठाये हुए होते हैं, अथवा उन लोगोंके जिनकी वह सहायता करता है।

मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप इस बातको याद रखें कि ऐसी असम्भव बातोंमें विश्वास करनेवाले लोग ही हमारे मतों और धार्मिक अपराध-स्वीकृतियोंके निर्माता हुए हैं।

इंग्लैण्डके एक बड़े वकील और जज सर मैथ्यू हेल्के सामने एक स्त्रीपर इसलिए मुक़दमा चलाया गया और वह दोषी ठहराई गई कि वह बच्चोंसे सुईयाँ उगलवाती थी। उसपर प्रेत-आत्माओंको पालनेका दोषारोपण भी किया गया। विद्वान् जजने बुद्धिमान न्यायमण्डलसे कहा कि—"जादूगरनियोंके अस्तित्वमें किसी प्रकारका संदेह नहीं है। यह सारे इतिहाससे प्रमाणित होता है और बाईबलकी स्पष्ट शिक्षा है।"

औरतको फाँसी दी गई और उसका शरीर जला दिया गया।

सर थौमस मूरका कहना था कि जादू-टोनेको छोड़ देनेका मतलब सभी पवित्र धर्म-ग्रन्थोंको फेंक देना होगा। मेरी सम्मतिमें वह ठीक था।

जौन वेज़ले भूत-प्रेतों और जादू-टोनेका पक्का विश्वासी था। जिस समय

इंग्लैंडमें इस विषयके सभी क़ानून रद कर दिये गये थे, उसके वर्षों बाद भी उसे अपने मतका आग्रह रहा। मेरी प्रार्थना है कि आप यह याद रखें कि जौन वैज़ले मैथडिस्ट चर्चका* संस्थापक था।

नये इंग्लैंडमें एक स्त्रीपर यह आरोप लगाया गया था कि वह एक जादूगरनी है, और उसने अपनी शकल लोमड़ीकी बना ली। जिस समय वह उस हालतमें थी उसपर कुछ कुत्तोंने आक्रमण किया और उसे काट खाया। न्यान्यालयके तीन आदमियोंने उसे देखा भाला। उन्होंने उसके कपड़े हटाकर 'जादूके स्थानों' को ढूँढ़ा। जादूके स्थानोंसे मतलब ऐसी जगहें जहाँ सुईयाँ चुभानेपर दर्द न हो। उन्होंने अदालतको रिपोर्ट दी कि ऐसे स्थान मिले हैं। उसने बहुत इन्कार किया कि वह कभी लोमड़ी नहीं बनी थी। किन्तु, कमेटीकी रिपोर्टपर वह अपराधी ठहराई गई और उसका वध कर दिया गया।

उन दिनों लोग विश्वास करते थे कि शैतानकी सहायतासे आदमी भेड़ियेकी शकल बना सकता है। एक आदमीपर एक भेड़ियेने आक्रमण किया। उसने अपनी रक्षा की और वह भेड़ियेका एक पंजा काट लेनेमें सफल हो गया। भेड़िया भाग गया। आदमीने पंजा जेबमें रखा और घर ले आया। वहाँ उसने देखा कि उसकी स्त्रीका एक हाथ नदारद है। उसने अपनी जेबसे पंजा निकाला। वह आदमीका हाथ बन गया था। उसने अपनी औरतपर जादूगरनी होनेका दोष लगाया। उसपर मुक़दमा चला। उसने अपना अपराध स्वीकार किया और वह जला दी गई।

ग्रीष्म ऋतुमें पाला पड़नेका कारण होनेके लिये, पैदावारको ही पत्थरोंसे नष्ट करनेके लिये, तूफान लानेके लिये, गउओंका दूध सुखा देनेके लिये और शराबको खट्टा बना देनेके लिये भी लोग जला डाले गये। कोई ऐसी असम्भव बात नहीं थी जिसके लिये किसी न किसीपर मुकदमा चला कर उसे दंडित न किया गया हो। किसीका जीवन सुरक्षित नहीं था। दोषारोपण होनेका मतलब दंडित होना था। हर आदमीका जीवन हर दूसरे आदमीकी दयापर निर्भर था। यह भयानक विश्वास लोगोंके मनमें इतना घर किये हुए था कि इसमें किसी प्रकारका भी संदेहका मतलब अपने आपको आपत्तिमें

* ईसाइयोंका एक सम्प्रदाय।

डालना था। जो कोई भी जादूगरनियों और शैतानोंके अस्तित्वसे इनकार करता, वह एक 'नास्तिक' घोषित कर दिया जाता।

वे विश्वास करते थे कि जानवरोंपर भी भूत आते हैं, और जानवरको मार डालनेसे भूतकी हत्या हो सकती है। वे निश्चित रूपसे जानवरोंपर मुकदमा चलाते, उन्हें दण्ड देते, और उन निरीह पशुओंकी हत्या कर डालते।

सन् १४७० में, बैसलमें एक मुर्ग-विशेषपर अण्डा देनेके लिये मुकदमा चलाया गया। हर कोई जानता था कि उस जातिके मुर्गका अण्डा जादूका तेल बनानेके काममें आता है। वह मुर्गा दण्डित ठहराया गया और गम्भीरता-पूर्वक सार्वजनिक स्थानमें जलाया गया। इसी प्रकार एक सूअर और छः सूअरके छौनोंपर भी मुकदमा चलाया गया, क्योंकि उन्होंने एक बच्चेको मार दिया था। सूअर दण्डित हुआ था, किन्तु छौने अल्पायु होनेके कारण कदाचित् छोड़ दिये गये थे। १७४० में एक गऊपर मुकदमा चलाया गया था कि उसपर भूत सवार हुआ है।

हम इन बातोंपर हँसें नहीं। हम अपने युगकी प्रगतिपर अत्यधिक अभि-मान न करें। हमें यह याद रखना चाहिये कि हमारे कुछ भाई अब भी इस व्यापारमें उलझे हैं।

ढाई सौ वर्ष तक ईसाई पादरी जादू-टोनेके असम्भव अपराधको दण्डित करते रहे। उन्होंने पुरुषों, स्त्रियों और बच्चोंको, जलाया, फाँसीपर लटकाया और तरह तरहकी यातनायें दीं। प्रोटैस्टैण्ट लोग कैथोलिकोंसे इस बातमें पीछे नहीं रहे। जिनिवोमें तीन महीनेके अन्दर पाँच सौ 'जादूगरनियाँ' आगमें जला दी गईं। कोमोके जिलेमें एक वर्षमें लगभग एक हज़ारको कतल किया गया था। कमसे कम एक लाख जनोंको अकेले जर्मनीमें हत्या हुई। अंतिम प्राणदण्ड ब्लूटूसबर्गमें सन् १७३९ में दिया गया। स्वीटजरलैंडमें १७८० तक जादूगरनियोंको जलाया गया।

इंग्लैंडके कानूनोंपर सर विलियम ब्लैकस्टोनका जो भाष्य है, उसमें लिखा है: "जादूगरनियों और जादूगरीकी सम्भावना ही नहीं, उसके वास्तविक अस्तित्वसे इनकार करनेका मतलब है, स्पष्ट रूपसे पुरानी और नई बाइबलके अनेक अनुच्छेदोंमें आये हुए भगवानके वचनोंसे इनकार करना। यह

एक ऐसी बात है जिसकी सत्यताका समर्थन संसारकी हरेक जातिने किया है, या तो, उदाहरणों द्वारा अथवा ऐसे निषेधात्मक नियमों द्वारा जिनसे भूतप्रेतोंके साथ व्यापार करना सिद्ध होता है।"

एडिनबरा (स्काटलैंड) से १८०७ में प्रकाशित बाइबिलके ब्राउन-लिखित 'कोष' में कहा गया है: "शैतानसे सम्बन्ध रखनेवाली औरत 'जादूगरनी' कहलाती है। पुरुषोंमें भी ऐसे जन होते हैं। यह बात धर्म-ग्रन्थोंसे एकदम स्पष्ट है। और यह कि ऐसे लोगोंको मार डालना चाहिये।"

सन् १८१६ में यह ग्रन्थ न्यूयार्कसे प्रकाशित हुआ। इसमें तनिक आश्चर्य नहीं कि उस शहरके पादरी क्यों आजतक इतने अज्ञानी और द्वेषी बने हुए हैं।

अंदाजा लगाया गया है कि अकेले इंग्लैंडमें ३० हजार जनोंको फाँसीपर चढ़ा दिया गया है, और आगमें जला दिया गया है।

उन दिनों यह विश्वास किया जाता था कि पुरुष और स्त्रियाँ भूत-प्रेतोंसे जबानी और लिखकर सम्बन्ध स्थापित कर लेती हैं। वे परमात्मा और ईसा मसीहकी शरण छोड़ कर अपने आपको शैतानके प्रति समर्पित कर देती हैं। जादूगरनियों और भूत-प्रेतोंकी आम सभामें इन समझौतोंपर, स्वयं शैतानके सभापतित्वमें हस्ताक्षर होते थे, और लोग प्रायः अपने रक्तसे उनपर हस्ताक्षर करते थे।

यह विश्वास किया जाता था कि भूत-प्रेतोंके जिस्म आदमियों और पशुओंकी तरहके नहीं बने होते, जो शक्ल न बदल सकें। ऐसा समझा जाता था कि वह बादलोंकी तरह सूक्ष्म किसी पदार्थके बने होते हैं जो कोई भी शक्ल धारण कर सकते हैं और किसी भी घरमें प्रवेश पा सकते हैं। उन्हें जो तरह तरहके भयानक दण्ड मिलते हैं उनसे वे अत्यंत उद्विग्न रहते हैं, और इसी लिये वे किसी ऐसी जगहकी खोजमें रहते हैं जो कुछ नर्म हो, कुछ गर्म हो, जिससे उनके दर्दको कुछ सेक मिल सके। इसी कारण वे प्रायः मर्दों और औरतोंके शरीरमें प्रवेश करते रहते हैं।

शैतान आदमियोंको अपनी इच्छाके अनुसार एक जगहसे दूसरी जगह ले जा सकता था। वह बच्चोंको जन्म दे सकता था। स्वयं मार्टिन लूथरकी

एक इस प्रकारके बच्चेसे भेंट हुई थी! उसने बच्चेकी माको कहा था कि वह बच्चेको दरियामें फेंक दे ता कि उसका घर शैतानसे मुक्त हो जाय।

यह विश्वास किया जाता था कि शैतान अपने आपको जैसा चाहे वैसा बना ले सकता है।

एक उदाहरण ऐसा भी है जिसमें एक औरतके पास जानेके लिये शैतानने धार्मिक आदमीकी शकल बना ली थी, किन्तु, जब पता लगा तो वह चारपाईके नीचे घुस गया, और जब खैंच कर निकाला गया तो, उसने दुस्साहस करके कहा कि वह वहाँका बड़ा पादरी है। उसने बड़े पादरीकी शकल और उसका रंग-ढंग इस सफाईसे बनाया था कि जो लोग बड़े पादरीको बहुत अच्छी तरह जानते थे, वे भी धोखा खा गये।

अंधकार और मिथ्या-विश्वासकी इन शताब्दियोंमें आदमीके दिमागकी क्या भयानक स्थिति रही होगी, इसकी कल्पना कर सकना कठिन है। उनके लिये ये सभी चीजें वास्तविक और भयानक थीं।

यदि आप सनातन-धर्मी चर्चसे नरककी धमकी और भय छीन लें, तो वह एक बुझा हुआ ज्वाला-मुखी रह जाता है।

यदि आप चमत्कारपूर्ण बातें, अलौकिक बातें, समझमें न आ सकनेवाली बातें, तर्क-विरोधी बातें, असम्भव बातें, न जानी जा सकनेवाली बातें और अन्य बेहूदा बातें निकाल दें तो शून्यताके अतिरिक्त और कुछ नहीं बचा रह सकता। चर्चके बारेमें जितनी बातें ऊपर कही गई उन सबके बावजूद यह कहा जाता है कि आज जिसे हम सभ्यता कहते हैं वह अतीतके मिथ्या-विश्वासोंसे ही पैदा हुई है

मज़हबने आदमीको सभ्य नहीं बनाया। आदमीने ही मज़हबको सभ्य बनाया है। ज्यों ज्यों आदमी प्रगति करता है त्यों त्यों परमात्मामें सुधार होता जाता है।

इन भूत-प्रेतोंके विश्वासियोंसे जो कुछ हमें मिला है क्या मैं उसकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करूँ? इन आकाशके दार्शनिकोंने हमें जो विज्ञान सिखाया उसकी कुछ रूप-रेखा, मैं आपके सामने रखता हूँ।

जितनी भी बीमारियाँ थीं या तो वे देवताओंके कोपका परिणाम थीं या

असुरोंके द्वेषका। वास्तवमें बीमारी नामकी कोई चीज़ थी ही नहीं। बीमारों-पर भूत-प्रेतोंका आवेश आया करता था। चिकित्सा-शास्त्रका काम था कि वह यह मालूम करे कि इन भूत-प्रेतोंको उन व्यक्तियोंमेंसे कैसे निकाला जाय? हजारों वर्षों तक रोगियोंकी चिकित्सा मन्त्रोंसे, भयानक हल्लेसे और बाजे गाजेसे होती रही। भूत-प्रेतोंके आगमनको अप्रिय बनानेके लिये जो कुछ भी हो सकता था, वह करते थे और वे प्रायः सारे वायु-मण्डलको इतना अधिक अरुचिकर बनानेमें सफल हो जाते थे कि यदि भूत-प्रेत नहीं चले जाते थे, तो बेचारा रोगी ही प्रस्थान कर जाता था। इन भूत-प्रेतोंके बारेमें यह माना जाता था कि ये भिन्न भिन्न दर्जे, योग्यता और पद रखते हैं। कभी कभी कोई एक आदमी किसी एक शक्तिशाली भूत-प्रेतको वशमें किये रहनेका बहाना करता था, जिसका मतलब था कि उसे छोटे मोटे भूत-प्रेतोंपर अधिकार प्राप्त है। ऐसा आदमी एक प्रसिद्ध चिकित्सक माना जाता था।

यह भी पता लगाया गया था कि विशेष प्रकारका धुआँ—मछलीके कलेजेका धुआँ, साँपकी सूखी केंचलीका धुआँ, कछुएकी आँखोंका धुआं, साँपकी जबान-का धुआँ—एक सामान्य भूत-प्रेतकी नाकको बहुत ही बुरा लगता था। इस धुएँसे रोगीका कमरा भर जाता था और तब तक या तो प्रेत ही भाग जाता था या रोगी ही मर जाता था।

यह भी विश्वास किया जाता था कि कुछ देवताओंके नाम—सर्वाधिक शक्तिशाली देवताओंके नाम—लेना भी बड़ा कारगर हथियार था। एक दीर्घ काल तक यही समझा जाता था कि लातीनी भाषामें उच्चाटन किये गये नाम सबसे अधिक फलते हैं; क्योंकि लातीनी-भाषा मृत भाषा थी और उसका ज्ञान केवल पुरोहितोंको ही था। दूसरोंको विश्वास था कि यदि दो लकड़ियाँ एक दूसरेके सहारे खड़ी करके उन्हें दुष्ट भूतके सामने कर दिया जाय तो वह डरके मारे तुरन्त भाग जाता है।

हजारों वर्ष तक चिकित्सा-शास्त्रका एकमात्र काम इन भूत-प्रेतोंको मनुष्योंके शरीरसे बाहर निकालना ही रहा।

जो कोई भी प्राकृतिक कारणोंसे इन सब चीज़ोंकी व्याख्या करनेका प्रयत्न करता, जो कोई भी स्वाभाविक साधनोंसे रोगोंको दूर करनेका प्रयत्न करता,

वही मज़हब द्वारा नास्तिक करार दिया जाता। किसी भी चीज़की व्याख्या करना एक अपराध था। यही बात पुरोहितके हितमें थी कि सभी घटनायें देवताओं और असुरोंकी इच्छाका परिणाम ही समझी जाती रहें। जिस क्षण यह मान लिया जाय कि सभी घटनायें प्राकृतिक कारणोंसे ही घटती हैं पुरोहितकी आवश्यकता जाती रहती है। मजहब एक अलौकिकताके वायुमंडलमें ही जीवित रह सकता है। आदमीके मस्तिष्कमेंसे अलौकिकताके विचारको निकाल दें तो मजहबके लिये कोई स्थान नहीं रहता। इसी लिये मज़हबने उस आदमीको सदा घृणाकी दृष्टिसे देखा है जिसने आश्चर्यकरकी व्याख्या करनेका प्रयास किया। इस सिद्धान्तके अनुसार चिकित्साशास्त्रकी प्रगतिको रोकनेके लिये कोई ऐसी बात नहीं थी जो उठा रखी गई हो। जब तक 'प्लेग' और दूसरी महामारियाँ 'प्रार्थना' द्वारा रोकी जा सकती थीं, पुरोहितका कुछ उपयोग था। किन्तु ज्यों ही चिकित्सकने उनकी कोई औषध खोज निकाली पुरोहित बेकार सिद्ध हो गया। जब यह स्पष्ट होने लगा कि 'प्रार्थना' शरीरके लिये बहुत-कुछ नहीं कर सकती, तो पुरोहितने शरीरकी ओरसे ध्यान हटाकर 'आत्मा' के कल्याणके लिये प्रार्थना करना आरम्भ कर दिया।

मज़हब यह कभी नहीं चाहता था कि बीमारियाँ आदमीके वशमें हो जायँ। येल कालेजके सभापति टिमोथी डविट्ने सूई लगवानेके विरुद्ध व्याख्यान दिया था। उसका विचार था कि यदि ब्रह्माने पहलेसे लिख दिया है कि अमुक आदमीकी मृत्यु 'माता' की बीमारीसे होनी ही चाहिये, तो 'सूई' लगाकर ब्रह्माके उस लेखको झूठा करनेका प्रयत्न करना भयानक अपराध है। प्लेग और दूसरी महामारियाँ ही 'परमात्मा' के वे हथियार हैं, जिनके बलपर वह आदमियोंसे अपने-आपको पुजाता है। रोगके इलाजका पता लगानेका मतलब है मज़हबके हाथसे एक शस्त्र छीन लेना। कोई भी अब मलेरियाके बुखारको प्रार्थनाद्वारा दूर करनेका प्रयत्न नहीं करता। कुनैन अधीक विश्वसनीय सिद्ध हो गई है। ज्यों ही किसी बीमारीके लिये किसी एक निश्चित ओषधिका पता लग जायगा त्यों ही उसका नाम प्रार्थनाकी सूचीमेंसे काट दिया जायगा। समय समय पर परमात्मा आदमीके लिये जिन बीमारियोंको भेजनेकी कृपा करता है, उनकी संख्या घट रही है। कुछ वर्षोंमें सभी बीमारियाँ आदमीके अधिकारमें आ

जायँगी। देवता निःशस्त्र हो जायँगे और तब उनके पुरोहितोंकी धमकियों-पर आदमी केवल मुस्करा सकेगा।

चिकित्सा-शास्त्रका केवल एक ही शत्रु रहा है—मज़हब। आदमी अपने शरीरकी रक्षा करनेसे डरता रहा कि कहीं वह अपनी आत्माको न गँवा बैठे!

क्या यह कोई आश्चर्यकी बात है कि उन दिनों लोग अनन्त-कालीन दण्डके निन्दनीय सिद्धान्तमें विश्वास करते थे—वह सिद्धान्त जो परमात्माको एक निर्दय राक्षस और आदमीको 'दुर्बल' 'ढोंगी' और दास बनाता है।

उन दिनोंके इतिहासोंमें शायद ही कोई सच्ची बात हो। वास्तविक घट-नायें इस योग्य नहीं समझी जाती थीं कि उनका लेखा सुरक्षित रखा जाय। ईब्यूस नामक प्रसिद्ध मजहबी इतिहास-लेखकका कथन है कि उसने किसी भी ऐसी बातको नहीं लिखा है जो उसके सम्प्रदाय केहितके विरुद्ध पड़ती थी और उसने हर ऐसी बातको बढ़ा चढ़ा कर लिखा है जो उसके सम्प्रदायके महत्त्वको बढ़ानेवाली हो।

यह निश्चित रूपसे कहा जा सकता है कि उन समयोंके सारे इतिहास आकस्मिक घटनाओं अथवा चमत्कारोंके परिणाम हैं।

ज्यों ही इस विचारको छोड़ दिया जाय कि सभी कुछ प्राकृतिक है, और जितनी भी घटनाएँ घटती हैं, वे सभी संसाररूपी जंजीरकी अनन्त कड़ियाँ हैं, उसी क्षण इतिहासकी कल्पना ही असम्भव हो जाती है। भूतात्माओंके लिये न तो वर्तमान अतीतकी संतान है और न भविष्यकी माता। मज़हबके राज्यमें सभी कुछ, आकस्मिक है,— भगवानकी इच्छा।

कानून विकासका परिणाम है—यह एक विज्ञान है। उचित तथा अनुचित वस्तुओंके अपने स्वरूपमें ही विद्यमान रहा है। कोई बात इसलिये उचित नहीं ठहरती, क्योंकि उसके करनेकी आज्ञा है, और कोई बात इसलिये अनुचित भी नहीं ठहरती कि उसका निषेध किया गया है। वास्तविक अपराधोंकी संख्या, इतनी पर्याप्त है कि और बनावटी अपराध बनानेकी आवश्यकता नहीं। कानून बनानेमें शताब्दियोंतक जितना विकास हुआ है वह मात्र इतना ही रहा है कि प्रेत-आत्माओंके बनाये हुए कानूनोंको रद किया जाय।

आदमीकी आनन्द लेने और कष्ट भोगनेकी शक्तिमेंसे ही उचित अनुचितकी कल्पना पैदा हुई। यदि आदमी कष्ट न उठा सकता, यदि वह दूसरेको कष्ट न पहुँचा सकता, यदि उसे न दर्द होता और न वह किसीके दर्दका कारण हो सकता, तो आदमीके दिमागमें कभी उचित अनुचितकी कल्पना न आई होती। यदि एक यह बात न होती तो आदमीकी वाणीने कभी अन्तरात्मा शब्दका उच्चारण न किया होता।

भलाई केवल एक ही है, और वह है—सुखी रहना। बुराई भी केवल एक ही है और वह है—स्वार्थ। सारे कानूनका केवल एक ही काम होना चाहिये कि वह पहली चीजकी रक्षा करे और दूसरीका विनाश।

प्रेत-आत्माओंके राज्यमें यह माना जाता था कि वस्तुओंके स्वाभाविक रूपमें कानून निहित नहीं है। यह माना जाता था कि वह किसी दैवी शक्तिकी अनुत्तरदायित्वपूर्ण आज्ञाएँ मात्र हैं। इन आज्ञाओंका आधार तक नहीं माना जाता था, वे स्वेच्छाचारी कल्पनाकी उपज मानी जाती थीं।

इन कानूनोंको न माननेसे जो दण्ड मिलता था, वह उतना ही निर्दयतापूर्ण होता था, जितने कि ये कानून अर्थहीन और बेहूदा थे। किसीकी हत्या करने और भगवानके विश्रामके दिन काम करने, दोनोंका परिणाम मृत्यु-दण्ड था। ऐसे सब कानूनोंका झुकाव इसी ओर है कि आदमीके मनसे, न्यायकी भावनाका लोप हो जाय।

यह दिखानेके लिये कि ज्ञान अथवा अज्ञानका हर विभाग मिथ्या-विश्वासोंसे कितना अधिक परिपूर्ण था, मैं एक क्षणके लिये भाषा-विज्ञानकी बात कहने जा रहा हूँ।

हमारे पूर्वजोंका ख्याल था कि हिब्रू मूल-भाषा थी। सर्वशक्तिमान परमात्माने स्वयं अदनके उद्यानमें आदमको इसकी शिक्षा दी थी, और इसलिये, जितनी भी भाषाएँ हैं, उन सबका मूल हिब्रूमें खोजा जा सकता है। हर ऐसी बात जो उक्त धारणासे मेल न खाती हो, अस्वीकार कर दी जाती थी। प्रेत-आत्माओंके मतानुसार, बाइबलके दीप-स्तम्भपर जो गड़बड़ी हुई थी, उसका एक ही कारण था कि सब लोग हिब्रू नहीं बोलते थे। इस बाइबल-वृत्तान्तने भाषा-विज्ञानसम्बन्धी सभी प्रश्नोंका निराकरण कर दिया!

१५६९ में अन्दरेकेपेंने स्वर्गकी भाषाके सम्बन्धमें एक ग्रन्थ लिखा, जिसमें उसने सिद्ध किया कि परमात्माने आदमको स्वेडनकी भाषामें सम्बोधन किया था, और आदमने हालैण्डकी भाषामें उत्तर दिया था और अजगरने ईवसे फ्रान्सीसी भाषामें बातचीत की थी।

भाषा-विज्ञानका वास्तविक संस्थापक लीबनिज़ था, सर आइजक न्यूटनका समकालीन। सभी भाषाओंका एक ही मूल-स्रोत खोजे जा सकनेके विचारको उसने त्याग दिया। उसका मत था, कि भाषा स्वाभाविक विकासका परिणाम है। अनुभव हमें सिखाता है कि ऐसा ही होना चाहिये। शब्द लगातार मरते हैं और लगातार उत्पन्न होते हैं। शब्द, स्वाभाविक तौरपर और आवश्यक तौरपर उत्पन्न होते हैं। शब्द विचारोंके वस्त्र और आभूषण हैं। कुछ ऐसे रूखे होते हैं जैसे जंगली पशुओंकी खाल। कुछ रेशम और स्वर्णकी तरह चमकते-दमकते हैं। शब्द घृणासे पैदा हुए हैं, और बदला लेनेकी भावनासे पैदा हुए हैं; वे प्रेमसे पैदा हुए हैं, आत्म-त्यागसे पैदा हुए हैं; वे आशासे पैदा हुए हैं, और भयसे पैदा हुए हैं, वे वेदनासे पैदा हुए हैं और आनन्दसे पैदा हुए हैं। 'शब्द' प्रकृतिके भयावह रूप और उसके सौन्दर्यकी सन्तान हैं। तारागणोंने उनका निर्माण किया है। उनमें उषा और अंधकारका सम्मिश्रण है। उन्होंने हर वस्तुसे कुछ न कुछ ग्रहण किया है।

शब्द समस्त मानव-इतिहासकी मूर्ति हैं। मानवने जो आनन्द मनाया और जो कष्ट भोगा; उसकी विजय और उसका पराजय, उसने जो कुछ गँवाया और जो कुछ पाया, वे सबकी मूर्ति हैं। शब्द अतीतकी छाया हैं और वर्तमानका दर्पण हैं।

प्रेतात्माएँ हमारे पूर्वजोंको ज्योतिष और भूविद्याका भी ज्ञान देती थीं। उनके मतानुसार सृष्टिकी रचना शून्यमेंसे हुई थी। शेष शून्यमेंसे जितना शून्य इस संसारके निर्माणमें खर्च हुआ, उससे कुछ अधिक लेकर तारागणोंकी रचना हुई। छठी शताब्दिमें कौस्मसकी शिक्षा थी कि देव तारागणोंको ढोते थे— या तो वे उन्हें अपने कंधोंपर ले जाते, या अपने आगे ढकेलते अथवा पीछे खींचते थे। उसका यह भी कहना था कि तारोंको ढकेलने या खींचनेवाले देव इस बातका बड़ा ही ध्यान रखते थे कि दूसरे देव क्या कर रहे हैं जिससे तारा-गणोंके बीचकी आपसी दूरी वही बने रहे।

उसने यह भी घोषणा की थी कि पृथ्वी चपटी है। यह बात उसने बाइबलके अनेक अनुच्छेदोंसे सिद्ध की। पृथ्वीके चपटी होनेके अनेक कारणोंके साथ उसने एक कारण यह बताया, "हमें नये टेस्टामेंटमें यह शिक्षा दी गई है कि ईसा अपनी सारी शानके साथ फिर प्रकट होंगे और तमाम संसार उनको देखेगा। अब मान लो कि पृथ्वी गोल है तो पृथ्वीके दूसरी ओरके लोग ईसाके आगमनपर उसके दर्शन कैसे कर सकेंगे?" इससे प्रश्नका निर्णय हो गया। साम्प्रदायिकोंने न केवल उस पुस्तकका समर्थन किया, साथ ही यह घोषणा की कि जो कोई इससे न्यूनधिक्य विश्वास करेगा वह नास्तिक है।

उन पुण्य दिनोंमें अज्ञान बादशाह था और विज्ञान अछूत।

वे जानते थे कि ज्यों ही यह पृथ्वी विश्वका केन्द्र नहीं रहेगी और ताराओंसे भरे विश्वमें एक सामान्य धब्बा समझी जाने लगेगी, त्यों ही उनका मज़हब बच्चोंका दिल बहलानेवाली प्राचीन कथाओंसे अधिक कुछ नहीं रहेगा।

आदमियोंने प्रेतात्माओंका नाम लेकर और उनका भय दिखाकर अपने भाइयोंको दास बनाया है, उन्होंने स्त्रियों और बच्चोंके अधिकारोंको कुचला है। प्रेतात्माओंका ही नाम लेकर और उनका भय दिखाकर उन्होंने परस्पर एक दूसरेको बेचा और नष्ट किया है। उन्होंने आकाशको अत्याचारियों और पृथ्वीको दासोंसे भर दिया है, और भर दिया है उन्होंने वर्त्तमानको निराशासे और भविष्यको भयानकतासे। प्रेतात्माओंका ही नाम लेकर तथा भय दिखाकर उन्होंने मानवीय बुद्धिको कैदी बनाया, हृदयको कठोर बनाया, न्यायका स्थान अन्यायको दिया, लूट-मारको सिंहासनपर बिठाया, ढोंगको महात्मापन ठहराया और पूरे एक सहस्र वर्षतक बुद्धिके प्रदीपको बुझा रहने दिया।

मैंने आपको कुछ ही हद तक यह दिखानेका प्रयत्न किया है कि जब आदमी मिथ्या विश्वास और भयसे शासित होते हैं; जब वे तर्कका श्रेष्ठ आधार छोड़ देते हैं तथा जब वे स्वयं विना खोज किये दूसरोंके शब्दोंको यों ही मान लेते हैं, तब उसके परिणामस्वरूप आजतक क्या कुछ होता रहा है और भविष्यमें भी क्या कुछ हो सकता है!

इस मामलेमें उन दिनोंके महान् पुरुष भी सबसे अज्ञजनों जैसे ही कमजोर थे। केपलर एक महान् ज्योतिषी था, संसारके महान् आदमियोंमेंसे एक।

उसने तारोंसे विश्वके रहस्योंका पता लगाया। लेकिन वह फलित-ज्योतिषमें भी विश्वास करता था। वह मानता था कि यह जान लेनेसे कि आदमीके जन्मके समय कौन-सा नक्षत्र किस राशिमें था, आदमीके जीवनके बारेमें भविष्य-वाणीकी जा सकती है। यह कहना होगा कि यह महा पुरुष अपने युगके मिथ्या-विश्वासका शिकार था।

टाइचो ब्राहे नामका एक और नक्षत्रज्ञ था। उसने एक जड़भरतको अपने पास रखा था और उस जड़भरतके मुँहसे जो अंट-शंट निरर्थक शब्द निकलते वह उन्हें बड़े ध्यानसे लिखता और तब उन्हें ऐसे क्रमसे रखता कि कोई न कोई भविष्यवाणी बन जाय, और तब बड़े सब्रके साथ बैठा हुआ उस भविष्यवाणीकी पूर्तिकी प्रतीक्षा किया करता। लूथरका विश्वास था कि उसकी शैतानसे वास्तविक भेंट हुई थी और उसने उससे धर्मशास्त्रकी कुछ बातोंको लेकर बहस की थी। मानव-मस्तिष्क बेड़ियोंसे जकड़ा हुआ था। हर कल्पनाने भूतका रूप धारण कर लिया था। विचार कुरूप हो गया था, वास्तविक बातें बेकार समझी जाती थीं, उनका कुछ भी मूल्य न आँका जाता था। जो बात आश्चर्यजनक होती उसीको सुरक्षित रखना उचित माना जाता। जो घटनाएँ वास्तवमें घटतीं वे लिख रखने योग्य ही न मानी जातीं—वास्तविक बातें अतिसामान्य थीं। प्रत्येक व्यक्ति कोई चमत्कार देखना चाहता था।

इसकी भी पर्वाह न करके कि मेरी बातें सुनते-सुनते आप उकता जायँगे। मैंने आपको यह बतानेकी कोशिश की है कि आदमीका दिमाग़ जब अज्ञान और भयसे जकड़ जाता है तब वह कैसी-कैसी चीजें उत्पन्न कर सकता है। मैं आपको यह निश्चय करा देना चाहता हूँ कि दासताका प्रत्येक रूप एक भयानक सर्प है जो कभी न कभी आदमीको अपने विषैले दाँतोंसे अवश्य डसता है।

उन्नतिकी ओर पहला महान् कदम जो आदमी उठा सकता है वह यही है कि आदमी आदमीका दास न रहे; और दूसरा यह है कि वह अपने ही पैदा किये हुए राक्षसों—भूतों और आकाशके अन्य अदृश्य प्राणियों—का दास न रहे।

युगों तक आदमी बंधनोंमें बँधा रहा। लोहेके सीखचोंमेंसे प्रकाशकी चंद किरणें आईं। विज्ञानको अपना पीला और चिंता-शील चेहरा इन्हीं सीखचोंसे रगड़ना पड़ा। उसका मानव-प्रगतिके पवित्र उषाकालके साथ गठ-बंधन हो गया।

आदमीको पता लग गया कि जो वास्तविक है वही उपयोगी है और किसी प्रेतात्माके कथनकी अपेक्षा आदमीका ज्ञान श्रेयस्कर है; और एक भविष्य-वाणीकी अपेक्षा एक घटी हुई घटनाका अधिक मूल्य है। उसे मालूम हो गया कि प्रेतात्माएँ रोगका कारण नहीं हैं, और उन्हें डराकर भगा देना किसी रोगकी चिकित्सा भी नहीं है। उसे पता लगा कि मृत्यु जीवन जितनी ही स्वाभाविक है। उसने मानव-शरीरकी रचना और उसके कार्य करनेके ढँगका अध्ययन किया। उसे पता लगा कि सब कुछ प्राकृतिक है और प्रकृतिके नियमसे बाहर नहीं।

जादू-टोना और मंत्र करनेवालोंको छुट्टी दे दी गई और उनकी जगह डाक्टरों तथा शल्य-चिकित्सकोंने लेली। उसे पता लगा कि पृथ्वी चपटी नहीं है और तारागण 'आकाशके धब्बे' मात्र नहीं हैं। उसे पता लगा कि नक्षत्र विशेषमें जन्म लेनेका मनुष्यके भाग्यसे कोई संबंध नहीं। नजूमीको छुट्टी दे दी गई और उसकी जगह गणित-ज्योतिषीने ले ली।

उन्हें पता लगा कि पृथिवी तारामण्डलमें करोड़ों वर्षोंसे चक्कर काट रही है। उन्हें पता लगा कि प्राकृतिक कारणोंसे भलाई और बुराई पैदा होती है न कि प्रेत-आत्माओंसे। और कोई आदमी कितना ही अच्छा क्यों न हो, वह अपनी अच्छाईसे पानी नहीं बरसा सकता, और कोई आदमी कितना भी बुरा क्यों न हो, वह अपनी बुराईसे बरसते पानीको रोक नहीं सकता। बीमारीकी उत्पत्ति उतनी ही प्राकृतिक है, जितनी घासकी। वह किसी खास मतको न मान सकनेके कारण किसीकी ओरसे दिया गया दण्ड नहीं है। उन्हें पता लगा कि आदमी बुद्धिसे प्रकृतिकी शक्तियोंसे लाभ उठा सकता है, वह चाहे तो पानीकी लहरोंको, हवाओंको, आगको और बिजलीको अपनी आज्ञा माननेके लिए मजबूर कर सकता है। उन्हें पता लगा कि प्रेत आत्माओंको किसी ऐसी चीजकी जान-कारी नहीं थी जो आदमीके लिये उपयोगी सिद्ध हो सके। न उन्हें भूगर्भ-शास्त्रकी

जानकारी थी, न गणित-ज्योतिषकी, न भूगोलकी और न इतिहासकी। उन्हें खराब डाक्टर और उससे भी खराब शल्य-चिकित्सक मानना चाहिये। उन्हें कानूनकी जानकारी न थी और उससे भी कम 'न्याय' की। उन्हें न दिमाग थे और न दिल। उन्हें आदमियोंके अधिकारोंका कुछ पता न था। उन्हें स्त्रियोंसे नफरत थी, उन्नतिसे घृणा थी, विज्ञानसे शत्रुता थी और स्वतन्त्रताके तो वे विध्वंसक थे।

इस अन्धेरे युगमें संसारकी स्थिति ऐसी ही थी जैसी आदमियोंके शरीर और मनको गुलाम बना देनेके फलस्वरूप हो सकती थी। उन दिनों किसीको किसी तरहकी स्वतन्त्रता नहीं थी। श्रमसे घृणा की जाती थी और एक श्रमिकको पशुसे कुछ ही अच्छा समझा जाता था। एक बड़े अजदहे साँपकी तरह अज्ञानने आदमीकी बुद्धिपर अधिकार पा लिया था और मिथ्या-विश्वास मानवकी कल्पनाके साथ खुल-खेल रहे थे। आकाश देवताओं, दैत्यों और राक्षसोंसे भरा था। आदमीके मनपर अन्ध-विश्वासका राज्य था और तर्क एक देश-निर्वासित राजा था। आदमीको विशिष्ट बनानेके लिये या तो सैनिक बनना पड़ता था या पादरी। लड़ना और धर्म-शास्त्र अर्थात् आदमियोंकी हत्या करना और ढोंग—यही दो आदमीके प्रधान पेशे थे। कला-कौशल्य पराधीन थे, चोरी ही व्यापार था, हत्या करना ही युद्ध था, और ढोंग ही धर्म था।

पन्द्रहवीं शताब्दिमें इंग्लैण्डमें निम्नलिखित कानून था—

"जो आदमी अपनी मातृभाषामें धर्म-ग्रन्थको पढ़ेगा उसकी भूमि, उसके पशु, उसका जीवन सब उससे छीन लिया जायगा, उसके उत्तराधिकारियोंका भी सर्वस्व अपहरण कर लिया जायगा और वह परमात्माका द्रोही, राज्यका द्रोही तथा देशका द्रोही घोषित कर दिया जायगा।"

यह कानून लागू होनेके प्रथम वर्षमें ३२ आदमियोंको इस कानूनका पालन न करनेके अपराधमें फाँसी दी गई और उनके शरीर जला दिये गये।

सोलहवीं शताब्दिमें कुछ आदमियोंको इस लिये जला दिया गया क्योंकि वे पादरियोंके सामने घुटने टेककर नमस्कार करना भूल गये थे।

यदि किसीने उस युगके मिथ्या विश्वासोंके विरुद्ध एक भी शब्द कहा तो उसे प्राण-दण्ड ही मिलता था।

उस समयके तथाकथित सुधारकोंको भी मानसिक स्वतन्त्रताकी कुछ कल्पना न थी। लूथर, नाक्स और काल्विन तभी तक धार्मिक-स्वतन्त्रतामें विश्वास करते रहे जब तक वे अल्प मतमें थे। ज्यों ही उनके हाथमें शक्ति आई उन्होंने तलवार और आगसे दूसरोंको मिटाना आरम्भ किया।

मौनतेन, जिसमें इतनी सामान्य बुद्धि थी कि वह अपने समयका सबसे अधिक असामान्य आदमी सिद्ध हुआ, पहला आदमी था जिसने फ्रांसमें जन-पीड़नके विरुद्ध अपनी आवाज उठाई। लेकिन करोड़ों अज्ञानी, मूर्ख, मिथ्या-विश्वासी, तथा दूसरोंकी बुराई चाहनेवाले लोगोंकी आवाजके मुकाबलेमे एक आदमीकी आवाजका क्या मूल्य ? यह निर्दय समुद्रके भयानक घोषके आगे डूबते हुए एक आदमीका क्षीण-स्वर था।

चन्द वीर-आत्माओंके प्रयत्नोंके बावजूद आदमीके स्वातन्त्र्यके विरुद्ध यह गन्दी लड़ाई तब तक जारी रही जब तक कमसे कम दस करोड़ मानव—माता, पिता, भाई, बहन—जिनकी इच्छायें और आकाक्षायें ठीक वैसी ही थीं जैसी हमारी आपकी-एक अन्ध मिथ्या-विश्वासकी बलि-वेदीपर बलिदान नहीं हो गये।

जहाँ तक मेरी बात है, मुझे इस बातका अभिमान है कि उस नये संसारमें सबसे पहले अमरीकामें ही आदमीकी स्वतन्त्रताकी घोषणा की गई। अमरीकाके ही विधा-नमें सर्वप्रथम मानवताकी समानताकी अदालतमें धर्म और राज्यको एक दूसरेसे पृथक् करके, मानवताके पक्षमें डिग्री दी गई थी। मानवताने उन्नति-पथपर जितने महान्-क़दम उठाये हैं, उनमें यह एक है।

तुम पूछोगे कि तीन सौ सालमें यह आश्चर्यजनक परिवर्तन कैसे हुआ ? मेरा उत्तर है—चन्द लोगों द्वारा किये गये आविष्कारोंके कारण, चन्द लोगोंके निर्भय-चिन्तन और तदनुरूप कथनोंके कारण, चन्द नई बातोंकी जानकारीके कारण।

और, इसके अतिरिक्त यह भी बात याद रखनेकी है कि हर बुराईमें उसका विनाशका बीज भी छिपा रहता है। यह आसान नहीं है कि असत्य सदैव जीवित रहे। असत्यका वास्तविक घटनासे कभी मेल नहीं बैठ सकता। असत्यका मेल किसी दूसरे, इसी उद्देश्यसे घड़े गये, असत्यसे ही बैठ सकता है। असत्यका जीवन केवल समयका प्रश्न है। एक मात्र सत्य ही अविनाशी है।

१४४१ में प्रेसका आविष्कार हुआ। उस समय तक अतीत एक विशाल श्मशान था, जिसमें किसी समाधिपर कुछ नहीं लिखा था। जिन दिमागोंने आदमियोंके विचारोंको जन्म दिया, उनके साथ वे विचार भी प्रायः नष्ट हो गये। मानव-जातिके होंठ सिले हुए थे। प्रेसने विचारोंको पर दिये। उसने विचारोंकी रक्षा की। उसने आदमियोंके लिये यह सम्भव बना दिया कि वह भावी पीढ़ियोंको अपने विचाररूपी धनका उत्तराधिकारी बना जाय। आरम्भमें तो प्रेसका उपयोग पुराने लोगोंकी ग़लतियोंकी ही बाढ़से दुनियाको पाट देनेमें हुआ, किन्तु उसके बादसे अब प्रेस दुनियामें प्रकाश फैला रहा है।

जब आदमी पढ़ते हैं, तो वे तर्क करना आरम्भ करते हैं। जब वे तर्क करते हैं तो वे प्रगति करते हैं। प्रगतिकी दिशामें यह दूसरा महान् कदम था।

बारूदके आविष्कारने भी किसानको राजकुमारके मुकाबलेपर ला खड़ा किया; उसने तथा-कथित वीरताके युगको समाप्त कर दिया। इसीके परिणाम-स्वरूप मनुष्योंकी एक बड़ी संख्या सेनाओंसे मुक्ति पा गई। अब पशुबलके साथ साहस, सूझ-बूझ और स्नायुबलने भी अपना स्थान ग्रहण किया।

हर वास्तविक घटनाकी जानकारीने आदमीके किसी न किसी मिथ्या विश्वासको और आकाशमेंसे किसी न किसी देवताको मार भगाया है। मशीनसे सम्बन्ध रखनेवाली हर कला अपनेमें एक शिक्षक है। हर करघा, हर धान्य काटनेकी मशीन, हर पानीका अग्निपोत (जहाज), हर रेलका इंजन, हर दूसरी तरहका इञ्जन, हर प्रेस तथा हर तारघर, विज्ञान और प्रगतिका एक प्रचारक है। हर कारखाना, हर भट्टी, तथा हर भवन जहाँ आदमीकी आसानी, उपयोग, आराम और उसको ऊपर उठानेकी कोई भी चीज़ बनती है, एक गिरजाघर है। हर स्कूल-भवन एक मन्दिर है।

संसारमें शिक्षा ही सबसे अधिक परिवर्तन लानेवाली वस्तु है।

किसीको वर्ण-माला सिखानेका मतलब है एक क्रान्तिको आवाहन देना।

एक स्कूल-भवनका बनाना एक क़िलेका निर्माण करना है।

हर पुस्तकालय एक शस्त्रागार है जो कि 'प्रगति' के अस्त्र-शस्त्रों और गोला-बारूदसे भरा हुआ है।

मैं आविष्कारकोंको धन्यवाद देता हूँ और धन्यवाद देता हूँ नई बातोंका

पता लगाने वालोंको तथा विचारकोंको। मैं कोलम्बस (Colambus) और मेगेलन (Magelean) को धन्यवाद देता हूँ। मैं गेलीलियो (Galilao) और कॉपरनिकस (Copernicus), केपलर (Kepler) और डेसरटीस (Deseartes) तथा न्यूटन (Newton) और लेपलेस (Laplas) को धन्यवाद देता हूँ। मैं लॉक (Locke), ह्यूम (Hume), बेकन (Bacon), शेक्सपीयर (Shakespeare), कांट (Kant), फिचे (Fichhe), लिबनिज (Leibnity), और गेटे (Gaethe) को धन्यवाद देता हूँ। मैं फलटन (Fulton), वाट्स (Vatts), वोल्टा (Volta), गालबनी (Galbani), फ्रेंकलिन (Franklin) और मोर्स (Morse) को धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने बिजलीको आदमीका सन्देशवाहक बनाया। मैं क्रोम्पटन (Crompton) और अर्कराइट (Arkwright) को धन्यवाद देता हूँ जिनके दिमाग़से वे करघे और तकवे निकले जो संसारको कपड़ोंसे ढाँकते हैं। गिरजोंकी बुराइयोंके विरुद्ध प्रोटेस्ट करनेके लिए मैं लूथरको धन्यवाद देता हूँ, किन्तु साथ ही मैं उसकी निन्दा भी करता हूँ क्योंकि वह स्वतंत्रताका शत्रु था। मैं थॉमस पेनको धन्यवाद देता हूँ क्योंकि वह स्वतंत्रतामें विश्वास करता था और क्योंकि उसने मेरे देशको स्वतंत्र बनानेमें उतना ही बड़ा काम किया है जितना किसी भी दूसरे आदमीने। मैं वॉल्टेयरको धन्यवाद देता हूँ, उस महान आदमीको जो पूरी आधी शताब्दितक यूरपका बौद्धिक बादशाह रहा और जो एल्पसपर्वतके नीचे अपने सिंहासनपर बैठा रहा, किन्तु ईसाइयतका कोई एक भी ढोंगी ऐसा नहीं था जिसकी ओर उसने अपनी घृणाकी उँगली न उठाई हो।

मैं निर्भय विचार रखनेवाले बहादुर आदमियोंको धन्यवाद देता हूँ। ये वे ही हैं जिन्होंने मिथ्या विश्वासोंकी जंजीरोंको तोड़ा है और अब भी तोड़ रहे हैं।

आदमीका सुख ही एकमात्र संभव कल्याण है। जो भी चीज आदमीको सुखी बनानेका कारण बनती है वह उचित है और मूल्यवान् है। वे तमाम बातें जो आदमीके शरीर और मनके विकासका कारण होती हैं; वे तमाम बातें जो हमें अच्छे घर, अच्छे कपड़े, अच्छा भोजन, अच्छी फिल्में, बढ़िया संगीत, बढ़िया दिमाग और बढ़िया दिल देती हैं; वे तमाम बातें जो हमें अधिक बुद्धिमान् और अधिक स्नेही बनाती हैं; वे तमाम बातें जो हमें अच्छे

पति-पत्नी, अच्छे बच्चे और अच्छे नागरिक बनाती हैं—ये सभी चीज़ें मिलकर उस चीजको जन्म देती हैं जिसे मैं ‘ प्रगति ’ कहता हूँ।

आदमी उसी मात्रामें विजय प्राप्त करता है जिस मात्रामें वह प्रकृतिकी बाधाओंपर विजय प्राप्त करता है। यह कार्य केवल श्रम और विचारसे ही हो सकता है। श्रम ही सबका आधार है। बिना श्रमके, बिना महान् श्रमके प्रगति असंभव है।

श्रमसे पैदा हुए अतिरिक्त-धनसे ही स्कूल और विश्वविद्यालय बने और चालू हुए। इस धनसे चित्रकार अपने चित्रोंके लिए, मूर्तिकार अपनी सुन्दर मूर्तियोंके लिए और कवि अपने आशा, प्रेम तथा आकांक्षाओंके गीत गानेके लिए मजदूरी पाता है। इसी अतिरिक्त-धनने हमें पुस्तकें दी हैं जिनसे हम मानव-जातिके मृत और जीवित नरेशोंसे सम्बन्ध बनाये रख सकते हैं।

मैं जानता हूँ कि इस बारेमें बड़ा मतभेद है कि वास्तविक प्रगति किसे माना जाय? बहुत-से लोग वर्तमान विचारोंको समस्त सुख तथा सारी भलाईका विघातक मानते हैं। मैं जानता हूँ कि बहुत-से लोग अतीतके ही पुजारी हैं। वे प्राचीनकी पूजा केवल इस लिए करते हैं क्योंकि वह प्राचीन है। उन्हें किसी ऐसी चीजमें कुछ भी सौंदर्य नहीं दिखाई देता जिसपर युगोंसे पड़ी हुई धूलिको उन्हें अपनी प्रशंसा और स्तुतिकी साँसोंसे उड़ाना न पड़े। उनका कहना है कि पुराने राजाओंके समान राजा नहीं, धर्म नहीं, कारीगर नहीं, वक्ता नहीं, कवि नहीं, नीतिका जानकार नहीं। दो हज़ार वर्षसे जो धूलमें मिल गये हैं उनके समान उन्हें कोई नहीं दिखाई देता। कुछ दूसरे लोग हैं जो एक मात्र आधुनिक होनेके कारण ही आधुनिकसे प्रेम करते हैं।

हममें इतनी कृतज्ञता अवश्य होनी चाहिये कि हम अपने पूर्वजोंकी महानता और शौर्यके लिए उनके आभारी बने रह सकें, और इतनी स्वतंत्रता भी होनी चाहिये कि हम किसी बातको केवल इसलिए न मानें क्योंकि यह हमारे पूर्वजोंकी कही हुई है।

श्रमको प्रगतिका आधार माननेके साथ ही यह सत्य भी जुड़ा हुआ है कि श्रमिक स्वतंत्र मानव हो।

अपने स्त्री और बच्चोंके लिए कार्य करनेवाला स्वतंत्र मानव अपने दिमाग़ और हाथोंके कार्यमें समन्वय स्थापित करता है।

थोड़ेसे थोड़े समयमें अधिकसे अधिक कार्य कर सकना ही स्वतंत्र श्रमकी सबसे बड़ी समस्या है।

गुलाम अधिकसे अधिक समयमें कमसे कम काम करता है।

श्रमके स्वतंत्र होनेसे हमें धन मिलेगा। विचारके स्वतन्त्र होनेसे हमें सत्य-की प्राप्ति होगी। प्रेत-आत्माओंमें विश्वास करनेवाले लोगोंकी यह घोषणा है कि पृथ्वीपर एकमात्र वे ही बुद्धिमान् और शीलवान् हैं; वे अब भी यह मानते हैं कि उनमें और अविश्वासियोंमें इतना अधिक भेद है कि वे अनन्तरूपमें पुरस्कृत होंगे और दूसरे अनन्तरूपमें दण्डित।

मैं आज आपसे पूछता हूँ कि क्या इन साम्प्रदायिक लोगोंके सिद्धान्त १९ वीं शताब्दीके दिल और दिमागको संतुष्ट करते हैं ?

क्या लोग इन साम्प्रदायिक लोगोंका विश्वास करते हैं ? क्या कोई व्यापारी किसीको भी केवल इस लिये उधार देगा कि वह सम्प्रदाय-विशेषका आदमी है ?

क्या पादरी-पुरोहित सामूहिक रूपसे अपने परिवारके लोगोंके प्रति डाक्टरों, वकीलों, व्यापारियों तथा किसानोंकी अपेक्षा अधिक दयावान् होते हैं, अधिक अच्छा व्यवहार करते हैं ?

जब हमारे यहाँ ही अपराधोंकी भरमार है, तो हम दूसरे देशोंमें पादरियोंको धर्म-प्रचारक बनाकर क्यों भेजें ?

क्या आरम्भिक पाप-कर्मके बारेमें झगड़ते रहनेमें कुछ सार है, जब इतना अधिक पाप-कर्म विद्यमान् है ?

क्या साम्प्रदायिक सिद्धान्तवादी लोग नवीन सत्योंका स्वागत करनेवाले होते हैं ? क्या वे अपनी स्पष्ट-वादिताके लिये प्रसिद्ध हैं ? क्या वे अपने विरोधीके साथ सज्जनताका व्यवहार करते हैं ? क्या वे खोज-कार्य करते हैं ? क्या वे हमें आगे बढ़ाते हैं, अथवा पीछे खींचते हैं ?

क्या साम्प्रदायिकताने विज्ञानको कोई एक भी वास्तविक जानकारी देकर अपना कृतज्ञ बनाया है ?

किस सम्प्रदायने किस पीडित सत्यवादीकी रक्षा की है ?

किस सम्प्रदायने किस बड़े सुधारका श्रीगणेश किया है ?

क्या ईसाइयतने दास-प्रथाको नष्ट किया ?

क्या ईसाइयतने युद्धके विरुद्ध घोषणा की ?

मैं सोचा करता था कि मजहब किसीको कुछ करनेसे रोक नहीं सकता। इस विषयमें मेरा विचार बदल गया है। मज़हब आदमीको बनावटी अपराध और मर्य्यादाओंका उल्लंघन करनेसे रोक सकता है।

एक आदमीने दूसरेकी हत्या कर दी। उसके विरुद्ध प्रमाण इतना पक्का और स्पष्ट था कि उसने अपराध स्वीकार कर लिया।

उससे पूछा गया कि उसने अपने एक भाईको क्यों मार डाला ?

" रुपयेके लिये। "

" क्या कुछ मिला ? "

" हाँ। "

" कितना ? "

" पन्द्रह पैसे (सैंट)।

" तुमने उन पैसोंका क्या किया ? "

" खर्च कर दिया। "

" किस लिये ? "

" शराबके लिये ? "

" मृत आदमीके पास और तुम्हें क्या मिला ? "

" एक बालटीमें उसके पास उसका भोजन था, कुछ रोटी और मांस। "

" उसका तुमने क्या किया ? "

" मैंने रोटी खा ली। "

" मांसका तुमने क्या किया ? "

" मैंने उसे फेंक दिया। "

" क्यों ? "

" उस दिन शुक्रवार था। "

ज्ञानके साथ, आज्ञाकारी होना समझदारीपूर्ण स्वीकृति मात्र रह जाता है। इससे किसी प्रकारका पतन नहीं होता। जो समझमें आ गया है, जो ज्ञात है,

उसके सम्बन्धमें स्वीकृति स्वामीका काम है, किसी दासका नहीं। यह आदमी-को ऊपर उठाता है, नीचे नहीं गिराता।

आदमी यह जान गया है कि स्वयं स्वतन्त्र रहनेके लिये उसे दूसरोंको स्वतन्त्रता देनी चाहिये। वह जान गया है कि जो मालिक होता है, वह भी दास होता है। जो अत्याचारी है वह स्वयं गुलाम है। वह जान गया है कि सरकारकी व्यवस्था आदमियोंद्वारा होनी चाहिए और आदमियोंके लिये, कि सभीके अधिकार समान हैं, कि किसीको ईश्वरकी ओरसे कोई अधिकार नहीं मिला है; कि स्त्रीका दर्जा कमसे कम पुरुषके बराबर अवश्य है; कि आदमी धर्म-ग्रन्थोंके अस्तित्वमें आनेसे पहलेसे है; कि मज़हब विचारकी एक अवस्था-मात्र है जिसमेंसे संसार गुजर रहा है; कि सभी मत आदमीके बनाये हुए हैं; कि सभी कुछ प्राकृतिक है; कि चमत्कार अथवा करिश्मा एक असम्भव घटना है; कि हम संसारके आदि अंतके बारेमें कुछ नहीं जानते; कि अज्ञेयके सम्बन्धमें हम सभी समानरूपसे अज्ञानी हैं; कि पुरोहितके कथनका सामान्य जन खण्डन कर सकता है; कि आदमी अपने तथा जिनकी उससे हानि पहुँचे उनके प्रति उत्तरदायी है; और कि सभीको सोचनेका अधिकार है।

सच्चे धर्मको स्वतन्त्र होना चाहिये। दिमाग़की सम्पूर्ण मुक्तिके बिना सच्चा धर्म हो ही नहीं सकता। गुलाम झुक सकता है, रेंगकर चल सकता है, किन्तु न वह पूजा कर सकता है, न प्रेम कर सकता है।

सच्चा-धर्म एक स्वतन्त्र और कृतज्ञ हृदयकी सुगन्ध है। सच्चा-धर्म राग-द्वेषादि वृत्तियोंको बुद्धिके अधीन करता है। सच्चा-धर्म कोई सिद्धान्त नहीं है, आचरण है। मत नहीं है, जीवन है।

यदि कोई सिद्धान्त परीक्षणसे डरता है तो उसके लिये आदमीके दिमागमें कोई जगह नहीं होनी चाहिये।

मैं सारेके सारे सत्यको बता सकनेका झूठा दावा नहीं करता। मैं केवल स्वतन्त्रताके पक्षकी वकालत करता हूँ। मैं गुलामीके अत्याचारों और भयावह बातोंकी निन्दा करता हूँ। मैं आदमियोंकी अन्तरात्माके लिये प्रकाश और वायु चाहता हूँ। मैं कहता हूँ, इन ज़ंजीरोंको दूर करो, इन बेड़ियोंको काटो,

इन अंगोंको मुक्त करो, इस दिमागको स्वतन्त्र करो। मैं सोचने, तर्क करने तथा खोज करनेके अधिकारके पक्षमें लड़ता हूँ कि भविष्य आदमीके इमानदाराना-विचारोंसे धनी हो। मैं हर आदमीसे बड़ी विनम्रतासे प्रार्थना करता हूँ कि वह प्रगतिकी सेनाका सैनिक बने।

मैं किसी दूसरेके अधिकारपर आक्रमण नहीं करूँगा। तुम्हें कोई अधिकार नहीं कि तुम विचार-स्वातन्त्र्यके मार्गपर अपना चुंगीघर बनाओ। तुम जो चाहो विश्वास करो, जिस बातका चाहो उसका प्रचार करो, जितने धार्मिक रीति-रिवाज चाहो उतने रखो, अपने तरीकेपर अपनी स्वतन्त्रताका पूरा उपयोग करो; किन्तु दूसरोंको भी वही अधिकार दो।

मैं न तुम्हारे सिद्धान्तोंपर आक्रमण करूँगा न तुम्हारे मतोंपर; यदि वे मेरी स्वतन्त्रतामें बाधक नहीं होते। यदि वे विचार करनेको 'खतरनाक' समझते हैं, यदि वे कहते हैं कि सन्देह करना ही अपराध है, तो मैं एक सिरेसे उन सबका विरोध करता हूँ, क्यों कि वे आदमीके दिमाग़को गुलाम बनाते हैं।

हमें किसी अज्ञात-लोकके फेरमें पड़कर जो वास्तविक लोक है उसका बलि-दान क्यों करें ? हम अपने आपको गुलाम क्यों बनायें ? हम अपने ही हाथों अपने पाँवमें बेड़ियाँ क्यों डालें ?

मैं प्रकाश चाहता हूँ, खुली वायु चाहता हूँ, अवसर चाहता हूँ। मैं व्यक्तिगत स्वातन्त्र्यके लिये लड़ता हूँ। मैं श्रम और स्वतन्त्र-चिन्तनके अधिकारोंके लिये लड़ता हूँ। मैं बन्धनमुक्त भविष्यके लिये लड़ता हूँ।

मनुष्य इन प्रेतोंसे कहीं बड़ा है। मानवता सभी मतों, सभी पुस्तकोंसे महान् है। मानवता एक महान् समुद्र है, और ये मत, ये पुस्तकें, ये मन सब केवल एक दिनकी लहरें हैं। मानवता आकाश है, और ये धार्मिक-सिद्धान्त और मत लगातार बदलनेवाले धुंध और बादल हैं जो एक दिन निश्चित-रूपसे हट जायँगे।

जिसका आधार गुलामी है, भय है, अज्ञान है, वह कभी चिर-स्थायी नहीं हो सकता। भविष्यके धर्ममें पुरुष, स्त्री और बच्चे होंगे और होगी उनकी तमाम कोमल-भावनायें तथा मानव-हृदयकी तमाम आकांक्षायें।

ये प्रेतात्मायें विदा हों। हम अब और उनकी पूजा नहीं करेंगे। वे अपनी खाली जगहोंको जिनमें आँखें नहीं हैं, अपने मास-हीन हाथोंसे ढक लें और आदमीके कल्पना-जगतसे सदाके लिये विलीन हो जायँ।

मैं अज्ञेयवादी क्यों हूँ ?

जिस प्रकार दूसरे विषयोंमें उसी प्रकार आर्थिक विषयोंमें भी वे ही नियम अथवा सम्भावनाओंके कानून लागू होने चाहिये। कोई भी ऐसा विषय नहीं है, कोई हो ही नहीं सकता, जिसे आदमी विना किसी प्रमाणके माननेके लिये मजबूर हो। कोई समझदार आदमी भी ऐसा नहीं होगा जो अन्ध-विश्वासको अपनी प्रशंसाका कारण समझे। कोई भी आदमी हो-यदि वह समझदारीके साथ पुरानी बाईबल और नई बाईबलको पढ़ेगा, तो कट्टर ईसाई रह ही नहीं सकता। बिना भय और बिना पक्षपातके कोई भी आदमी किसी भी धर्मकी छान-बीन करे, वह विश्वासी रह ही नहीं सकता।

बहुत-से लोग जब इस मतके हो जाते हैं कि ईसा ईश्वर नहीं है, बाईबल ईश्वरीय ग्रन्थ नहीं है, और ईसाई धर्म भी सभी दूसरे धर्मोंकी तरह मनुष्यकी कृति है, तब प्रायः कहते हैं—"कोई न कोई एक सर्वोपरि शक्ति अवश्य होगी। ईसा उसका नाम न सही, बाईबल उसका वचन न सही, किन्तु कहीं न कहीं कोई न कोई एक ऐसी शक्ति होनी ही चाहिये जो सर्वोपरि हो और सबपर शासन करती हो।"

यह बात भी वैसी ही वे सिर-पैरकी है जैसी पहली। जो बाईबलमें वर्णित अत्याचारोंके साथ ईसाके सौजन्यका मेल नहीं बिठा सकता, वह प्रकृतिके अत्याचारोंके साथ भी किसी काल्पनिक ईश्वरके शिव होनेका मेल नहीं बिठा सकता। वह बीमारी और अकाल, भूकम्प और तूफान, दासता, ज़बर्दस्तकी कमज़ोरपर विजय और अन्यायकी अगणित विजयोंकी कोई व्याख्या नहीं कर सकता। उसके लिये यह बताना असम्भव हो जायगा कि अज्ञानियों, ईर्ष्यालुओं तथा दुष्ट लोगोंने अच्छे, भले, स्नेही लोगोंको जलाकर 'शहीद' क्यों बना दिया ?

कोई भी ईश्वरवादी बच्चों और स्त्रियोंके कष्टोंकी क्या व्याख्या कर सकता है ? वह धार्मिक अत्याचारोंकी और, धार्मिक घृणाके कारण लोगोंको तलवारके घाट उतार दिये जाने तथा जला दिये जानेकी क्या व्याख्या कर सकता है ? यह परमात्मा सिंहासनपर बैठा रहा और इसने अपने शत्रुओंको इस बातकी छुट्टी दे दी कि उसके मित्रोंके खूनसे अपनी तलवारोंको तर करें ! उसने कैदियों और असहायोंकी प्रार्थनायें क्यों नहीं सुनीं ? जब उसे दासकी नंगी पीठपर पड़नेवाले कोड़ोंकी आवाज सुनाई दी, तो उसे उसकी प्रार्थना भी क्यों नहीं सुनाई दी ? जिस समय छोटे छोटे बच्चोंको उनकी माताओंके स्तनोंसे छुड़ाकर बेचा गया, उस समय वह उन बच्चोंकी चिल्लाहटके प्रति बहरा क्यों बना रहा ?

मुझे ऐसा लगता है कि जो आदमी मानवी मस्तिष्ककी मर्यादा समझता है, जो मानवी साक्षीको उचित महत्त्व देता है, वह आवश्यक रूपसे अज्ञेयवादी ही होता है । वह प्रथम अथवा आदि-कारणका पता लगानेकी आशा छोड़ देता है, और आशा छोड़ देता है पारलौकिकको समझ सकने तथा किसी अनंत शक्तिकी कल्पना कर सकनेकी । सृष्टि-रचयिता, पालन-कर्ता आदि शब्दोंका उसके लिये कुछ अर्थ नहीं रहता ।

आदमीका मन कमसे कम बाधाका मार्ग ग्रहण करता है, और आदमी जिन परिणामोंपर पहुँचता है, वे परिणाम कुछ तो आदमीके दिमागकी बनावटपर निर्भर करते हैं, कुछ उसके निजी अनुभवोंपर, कुछ उसकी परम्परागत प्रवृत्तियोंपर, और कुछ उन असंख्य बातोंपर जो एक दिमागको दूसरेसे भिन्न बनाती हैं । एक आदमी जो कि रहस्यवादी वातावरणमें पला है, इस परिणामपर पहुँचता है कि सब कुछ योजनाका परिणाम है, सभी चीजोंके पीछे एक अनन्त शक्ति है; अर्थात् एक असीम मानव । वह सभी बातोंकी व्याख्या केवल यह कहकर करता है कि इसी अनन्त शक्तिद्वारा विश्वकी रचना और चालन हुआ और इसी शक्तिद्वारा यह एक अलौकिक रहस्यपूर्ण ढंगसे शासित और रक्षित है । इस आदमीको यह स्पष्ट दिखाई देता है कि प्रकृति अपनी रचना स्वयं नहीं कर सकती थी; इसीलिये वह किसी रचयिताकी कल्पना करता है । वह यह सोचकर पूर्ण रूपसे संतुष्ट है कि क्योंकि संसारमें व्यवस्था दिखाई देती है, इसलिये कोई न कोई एक व्यवस्थापक होना ही चाहिये ।

उसे यह सूझता ही नहीं कि इस अनन्त-शक्तिकी उत्पत्तिके बारेमें भी कुछ सोचनेकी जरूरत है। वह इस बारेमें असन्दिग्ध है कि बिना किसी व्यवस्थापकके व्यवस्था नहीं हो सकती, साथ ही वह इस बारेमें भी असन्दिग्ध है कि किसी भी व्यवस्थाके विना एक व्यवस्थापक अस्तित्वमें आ सकता है। यह बात इतनी बेहूदी बन जाती है, कि एक मज़ाकसे अधिक कुछ नहीं रहती। वह यह मानकर चलता है कि प्रकृति उत्पन्न की गई थी और यह कि इसका उत्पन्न करनेवाला उत्पन्न नहीं किया गया था। वह मान लेता है कि अनादि-कालसे सृष्टिका एक रचयिता चला आ रहा है। उसका कोई कारण नहीं है। उसने अभावमेंसे 'प्रकृति' की रचना की। इस रचयिताने ही उसे रचा, जिसे हम पदार्थ कहते हैं।

क्या मानवी मस्तिष्कके लिये यह संभव है कि वह किसी अनन्त-शक्तिकी कल्पना कर सके? क्या यह किसी आदि-रहित, अनन्त सामर्थ्ययुक्त और ज्ञान-वान् व्यक्तित्वकी कल्पना कर सकता है? यदि कभी कोई ऐसा व्यक्तित्व रहा है, तो उससे पहले एक ऐसा अनन्तकाल अवश्य रहा होगा जिसमें इस एक व्यक्तित्वके अतिरिक्त और कुछ नहीं था। क्योंकि यदि विश्व रचा गया, तो एक ऐसा समय अवश्य ही रहा होगा जब विश्वका अस्तित्व नहीं था, और उससे पीछेकी ओर एक अनन्त काल, जब उस असीम-व्यक्तित्वके अतिरिक्त और कुछ नहीं था। क्या यह सम्भव कल्पना है कि एक अनन्त-बुद्धि, अनन्त-काल तक अनन्त-शून्यमें रहती रही? ऐसे व्यक्तित्वको किसी भी वस्तुका ज्ञान कैसे हो सकता था? उस समय कौन-सी ऐसी चीज़ थी, जिसका वह ज्ञान प्राप्त कर सकता था? उस समय एक ही चीज़ जाननेकी थी और वह यह कि इस एक अस्तित्वके अतिरिक्त और कुछ न था। इस प्रकारका व्यक्तित्व सर्वशक्तिमान् कैसे हो सकता था? उस समय कोई ऐसी चीज ही नहीं थी, जिसपर वह अपनी शक्तिका प्रयोग कर सके। संसारमें कोई वस्तु थी ही नहीं, जिसके कारण कोई विचार सूझ सके। अनन्त-ज्ञान और अनन्त-शून्यके बीचके सम्बन्धके अतिरिक्त और कोई भी सम्बन्ध स्थापित हो ही नहीं सकता था।

मेरी दूसरी कठिनाई है रचनाका कार्य। मेरा दिमाग ऐसा है कि मैं शून्यमेंसे

किसी भी चीजकी रचनाकी कल्पना कर ही नहीं सकता। मैं विना कारणके भी किसी कार्यके होनेकी कल्पना नहीं कर सकता। मैं एक कदम आगे बढ़ता हूँ। बिना कारणके किसी कार्यके होनेकी कल्पना जितनी कठिन है, उतनी ही कठिन यह कल्पना भी है कि कारणके होनेसे कार्य होता है। किसी एक कारणका पूर्व अस्तित्व मान लेने मात्रसे कठिनाई कुछ भी कम नहीं होती। हम पदार्थके विनाशकी कल्पना नहीं कर सकते। पत्थर पीसकर चूर चूर कर दिया जा सकता है, और फिर उस पत्थर-चूर्णको भी इतना अधिक बारीक पीसा जा सकता है कि उसके एक एक कणको देखनेके लिये किसी अत्यन्त शक्तिशाली अणुवीक्षण यन्त्रकी आवश्यकता पड़े। हम इन कणोंके और भी अधिक विभागीकरणकी कल्पना कर सकते हैं, और फिर उसके बाद भी, और फिर उसके बाद भी। लेकिन हमारे लिये यह सम्भव नहीं कि हम छोटेसे छोटे अणुके भी सर्वथा विनष्ट होनेकी कल्पना कर सकें। इस प्रकार न तो रचनाकी ही कल्पना की जा सकती है, और न विनाशकी। इस तरहसे हम बड़ी आसानीसे इस परिणामपर पहुँच सकते हैं कि जिसका विनाश नहीं हो सकता, उसकी रचना भी नहीं हुई होगी।

जो भी हो, इन प्रश्नोंका उत्तर प्रत्येक व्यक्ति अपने मनकी रचनाके अनुसार, अपने अनुभवके अनुसार, अपनी विचार करनेकी आदतके अनुसार, अपने ज्ञान अथवा अज्ञानके अनुसार, अपने पक्षपात और अपनी प्रतिभाके अनुसार ही देगा।

सम्भवतः मानवताका एक बहुत बड़ा अंश अलौकिक आत्माओंके अस्तित्वमें विश्वास करता है, और सभ्य कही जानेवाली जातियोंमेंसे अधिकांश एक अनन्त व्यक्तित्वके अस्तित्वमें विश्वास करती हैं। विचारके क्षेत्रमें बहुमत प्रमाण नहीं है। प्रत्येक दिमाग एक स्वतन्त्र राज्य है, प्रत्येक दिमाग एक साम्राज्य।

किसी विश्वासका सर्वव्यापक होना उसके सत्य होनेका प्रमाण नहीं। मनुष्योंका एक बहुत बड़ा मत ईश्वरमें विश्वास करता रहा है, और एक उतना ही बड़ा मत, वैसी ही श्रद्धाके साथ शैतानमें। जो कुछ घटित होता है उसे देखकर ही इनकी कल्पना की गई है। अधिकतर ये दोनों अज्ञान, भय और स्वार्थकी उपज हैं। सभी युगोंमें आदमीने जीवन और मृत्यु, पदार्थ, शक्ति,

वस्तुओंकी उत्पत्ति और प्रवाह, पृथिवी तथा आकाशके रहस्य जाननेका प्रयत्न किया है। आदिम-युगका असभ्य प्राणी गुहामें रहता था। उसका भोजन था कन्द-मूल तथा ऐसे पशु जिन्हें वह लाठी अथवा पत्थरसे मार सकता था। उसके चारों ओर अनगिनत भयानक वस्तुएँ थीं। वह ऐसी नदियोंके किनारे खड़ा था जिनका न उसे आदि ज्ञात था और न अन्त। वह ऐसे समुद्रके तटपर रहता था जिसका उसकी समझके अनुसार एक ही किनारा था। वह अपनेसे अधिक शक्तिशाली पशुओंका आहार था और शिकार था विचित्र भयानक बीमारियोंका। वह मेघकी गर्जना सुनकर काँप उठता था और बिजलीकी चमक उसे अन्धा बना देती थी। उसे अपने पैरके नीचेकी पृथ्वी हिलती मालूम देती थी और आकाश पर्वतोंकी आगसे लाल। आदिम-युगका वह आदमी साष्टांग लेट गया और उसने अज्ञातसे आत्म-रक्षाके लिये प्रार्थना की!

आदिम युगकी अन्धकारमय रात्रिमें, बीमारियों और अकालके बीच, समाप्त न होने वाली शरत्-ऋतुमें, अन्धेरी गुफ़ाओंमें रहनेवाले मानवके मनमें अन्ध-विश्वासके बीज बोये गये। असभ्य मानवने माना और पूरे विश्वासके साथ माना कि जो कुछ भी होता है उसका उसीसे सम्बन्ध है। वह अपने कर्मोंसे अदृश्यकी क्रोधाग्निमें घी डाल सकता है, और अपनी प्रार्थनाओंसे उस क्रोधाग्निको शान्त कर सकता है। उसने खुशामद और प्रार्थनाओंका रास्ता ग्रहण किया। अपनी योग्यताके अनुसार उसने अपने सामर्थ्य-भर अपने ईश्वरकी कल्पनाको पत्थर अथवा अनघड़ लकड़ीकी मूर्तिके रूपमें साकार बनाया। अपनी इस मूर्तिके लिये उसने एक झोपड़ी बनाई, जैसा तैसा घर बनाया और अन्तमें एक मन्दिर बनाया। इन मूर्तियोंके सामने वह झुका और इन वेदियोंसे जिनपर उसने अपना धन पानीकी तरह बहाया उसने अपनी और अपने प्रिय-जनोंकी रक्षाकी आशा की। कुछ लोगोंने अधिकांश अज्ञानियोंके अज्ञानसे लाभ उठाया। उन्होंने 'अदृश्य' के संदेशवाहक होनेका झूठा दावा किया। वे असहाय जनता और देवताओंके बीच-बिचौलिया बनकर खड़े हो गये। पर-लोकके न्यायालयमें वह आदमीके वकील बने और इस लोकमें लोगोंको मूर्ख बना कर वह अपना निर्वाह करने लगे।

मेरा दिमाग ही ऐसा है कि मैं एकमात्र इसी परिणामपर पहुँच सकता हूँ कि पदार्थ नित्य है। संसारका न कोई आरम्भ है और न अन्त। यह एक नित्य अस्तित्व है। वस्तुओंके आपसके सम्बन्ध अनित्य हैं और निरोध-स्वभाव हैं। जितने भी अंगी हैं, वे सभी उत्पन्न होते हैं और निरोधको प्राप्त होते हैं। वस्तुओंका रूप परिवर्तन-शील है; किन्तु जो पदार्थ है वह अनादिसे अनन्तकाल तक अनित्य है। यह संभव है कि नक्षत्र-मण्डलका जन्म और मृत्यु हो, यह भी संभव है कि अनन्त आकाशमेंसे तारागण लुप्त हो जायँ; यह भी सम्भव है कि अनगिनत सूर्य अन्तर्धान हो जायँ—किन्तु पदार्थ रहेगा ही।

विश्वकी उत्पत्ति और विनाशका प्रश्न मानवकी बुद्धिके परेका प्रश्न मालूम देता है।

पैतृकता अन्ध विश्वासकी पक्षपातिनी है। हमारा सारा अज्ञान प्राचीनका आग्रही है। अधिकांश आदमियोंमें यही भावना रहती है कि उनके पूर्वज बहुत ही अच्छे, बहादुर और बुद्धिमान् थे, और जहाँ तक धर्मके मामलोंका सम्बन्ध है उन्हींका अनुकरण करना चाहिये। उनका विश्वास है कि उनके माता-पिता सर्वश्रेष्ठ थे, और जिस बातसे उनको सन्तोष हो जाता था, उनकी सन्तानको भी उससे हो जाना चाहिये। बड़ी आदर-भक्तिकी भावनाके साथ वे कहते हैं कि उनकी माँका धर्म उनके लिये काफी अच्छा है, काफी पवित्र है, काफी तर्क-संगत है। इस प्रकार माता-पिताके प्रेमने तथा पूर्वजोंकी भक्तिने अनजानमें हमारी बुद्धिको रिश्वत दे दी है, अथवा हमारी बुद्धिरूपी आँखके प्रकाशको बहुत ही मद्धम बना दिया है।

वयोवृद्ध लोगोंकी एक आकांक्षा रहती है कि वह वहीं रहें और मरें जहाँ उनके पूर्वज रहे और मरे थे—अपने यौवनके स्थानकी ही ओर वापिस जानेकी प्रवृत्ति। मनुष्यताके पुराने वृक्षके इर्द गिर्द लतायें चिपटी रहना चाहती हैं। यह सब होनेपर भी यह कहना कि मेरी माँका धर्म मेरे लिए काफी अच्छा है, उतना ही अनुचित है जितना यह कहना कि मेरी माँका भू-गर्भ-का ज्ञान, नक्षत्रोंका ज्ञान अथवा दर्शन मेरे लिये काफी अच्छा है। हर आदमीका अधिकार है कि जो उसे अच्छेसे अच्छा मिल सकता है, उसे

प्राप्त करे। यदि माँके धर्ममें कुछ भी सुधार हुआ हो तो पुत्र उस सुधारका अधिकारी है। उसे इस मिथ्या धारणाके कारण कि माँके प्रति उसकी जो आदरकी भावना है, उसका मतलब है कि वह माँकी ग़लत धारणाओंको भी स्थायित्व प्रदान करे, अपने आपको इस लाभसे वञ्चित नहीं रखना चाहिये।

यदि हमारे लिये अपने माता-पिताके धर्मको ही अक्षरशः मानना धर्म है, तो हमारे माता-पिताको भी अपने माता-पिताओंके धर्मसे एक इंच भी इधर उधर नहीं होना चाहिये था। यदि ऐसा होता तो मानवताके विचारोंमें तनिक भी सुधार न हुआ होता। आरंभिक कालका धर्म ही विकासकी चर्म-सीमा बना रहता और पुत्र अपनी माँ जितना ही अज्ञानी बना रहकर मर जाता। उन्नति असंभव रहती और पूर्वजोंकी कब्रपर ही मानवताकी बुद्धिका बलिदान हो जाता।

सामान्य आदमी अपने देशके धर्मको अपना लेता है अथवा उसके देशका धर्म उसे अपना लेता है। वह अपनी नस्लके अभिमानसे अभिभूत रहता है और अपनी जातिकी अहम्मन्यता और जातीयता नामक मिथ्या विश्वाससे घिरा रहता है। वह तर्क नहीं करता। वह केवल हृदयसे अनुभव करता है। वह खोज नहीं करता; वह केवल विश्वास करता है। उसे दूसरी जातियोंके धर्म बेहूदा वाहियात मालूम देते हैं और उनके देवता भयानकता और अत्याचारकी मूर्तियाँ। प्रत्येक देशमें इस सामान्य आदमीको शिक्षा दी जाती है, प्रथम यह कि एक सर्वोपरि सत्ता है; दूसरे यह कि उसने अपनी इच्छा प्रकट कर दी है; तीसरे यह कि वह सच्चे विश्वासीको पुरस्कृत करेगा; चौथे यह कि वह नास्तिकको दण्ड देगा; पाँचवें यह कि कुछ रीति-रिवाज अथवा संस्कार ऐसे हैं जिनसे वह परमात्मा प्रसन्न होता है; छठे यह कि उसने पृथ्वीपर धर्म-विशेषकी स्थापना की है; और सातवें यह कि उस धर्मके पादरी-पुरोहित उसके प्रतिनिधि हैं। और इस सामान्य आदमीको इस बातके मान लेनेमें कोई कठिनाई नहीं मालूम देती कि उसकी जातिका परमात्मा ही सच्चा परमात्मा है कि सच्चे परमात्माकी इच्छा उसके देशके धर्म-ग्रन्थोंमें दर्ज है; कि वह एक सच्चा विश्वासी है;

और कि दूसरी जातियोंके आदमी—दूसरे धर्मोंके अनुयायी—नास्तिक हैं; और कि उसका धर्म ही एक मात्र सच्चा धर्म और कि उसके देशके पादरी पुरोहित ही एक मात्र ऐसे हैं जिनका इस सच्चे परमात्मापर कुछ प्रभाव पड़ता रहा है, अथवा भविष्यमें पड़ सकता है।

उस सामान्य आदमीको यह सारी बातें स्वयं-सिद्ध मालूम देती हैं; और इस लिये वह अन्य सभी धर्मोंसे घृणा करता है, और यह सोचकर प्रसन्न होता है कि वह एक मात्र सच्चे परमात्माका प्रिय-पात्र है।

यदि एक सामान्य ईसाई तुर्किस्तानमें पैदा हुआ होता तो वह मुसलमान होता, और यदि एक सामान्य मुसलमान नवीन इग्लैण्डमें पैदा हुआ होता और उसे अण्डोवरमें शिक्षा मिली होती तो उसके लिये नास्तिकोंका नरक गमन बड़ी ही प्रसन्नताका विषय होता।

क्या एक आदमीको अपने देशके धर्म—अपने माता-पिताके धर्म—का सत्यासत्य विचारनेका अधिकार है? ईसाइयोंका कहना है कि संसारके समी निवासियोंका न केवल यह अधिकार है किन्तु यह उनका कर्तव्य है। प्रतिवर्ष हजारों मिशनरियोंको उन देशोंमें जहाँके लोग ईसाई नहीं हैं भेजा गया है कि वह उन लोगोंको अपने मिथ्या विश्वासोंकी परीक्षा करनेके लिये ही नहीं, किन्तु उन्हें छोड़कर मिशनरियोंके अपने मिथ्या-विश्वासोंको ग्रहण करनेकी प्रेरणा करें। यदि ईसाई जातियोंसे पृथक् जातियोंके लोगोंका यह अधिकार है कि वह अपने धर्मोंके सत्यासत्यको देखें तो यह भी मान लिया जा सकता है कि ईसाई जातियोंके लोगोंका भी यह अधिकार है। ईसाई तो इससे एक कदम आगे जाते हैं। वे गैर-ईसाइयोंसे कहते हैं—"तुम्हें अपने धर्मोंके सत्यासत्यपर विचार करना चाहिये। केवल इतना ही नहीं, तुम्हें उन्हें छोड़ना चाहिये और यदि तुम अपने धर्मको छोड़कर हमारेको अंगीकार नहीं करते तो तुम अनन्तकाल तक नरककी आगमें पकते रहोगे।" और ये ही ईसाई ईसाई-देशोंके निवासियोंसे कहते हैं—"तुम्हें अपने धर्मके सत्यासत्यका विचार नहीं करना चाहिये, चाहे तुम सत्यासत्यका विचार करो चाहे न करो, तुम्हें विश्वास करना चाहिये; अन्यथा तुम अनन्तकालतक नरकमें पड़े सड़ते रहोगे।"

यदि संसारमें एक ही सच्चा-धर्म है तो उस सच्चे धर्मका पता लगानेका

क्या तरीका है ? तरीका केवल एक ही है। हमें निष्पक्ष होकर सबके दावोंपर विचार करना चाहिये। परीक्षा करनेके अधिकारमें स्वीकार करने अथवा अस्वीकार करनेकी आवश्यकताका समावेश होता ही है। मेरी बातको आप समझ लें। मैं स्वीकार करने अथवा अस्वीकार करनेके अधिकारकी बात नहीं कहता, मैं उसकी आवश्यकताकी बात कहता हूँ। हम इसके अतिरिक्त किसी दूसरे परिणामपर पहुँच ही नहीं सकते। यदि हमें सत्यासत्य विचार करनेका अधिकार है तो हमें अपने विचारके परिणामोंकी घोषणा करनेका भी अधिकार है। ईसाइयोंने किसी हद तक दूसरे धर्मोकी परीक्षा की है, और उन्होंने दूसरे धर्मोके बारेमें अपनी सम्मतिको पूर्ण स्वतन्त्रताके साथ व्यक्त किया है—अर्थात् उन्होंने सभी दूसरे धर्मोको झूठा और बेइमान घोषित किया है, उनके देवताओंको 'बुत' कहा है और कहा है उनके पुरोहितोंको ठग।

ईसाई कुरानको इस योग्य नहीं समझता कि वह उसे पढ़े। हजारमेंसे शायद एक ईसाईने भी कुरानकी कभी कोई प्रति न देखी होगी और, तो भी सभी ईसाई इस बारेमें पूर्णतया निश्चित मत रखते हैं कि कुरान एक ठगकी कृति है। कोई प्रेसबिटेरियन—ईसाई मत--विशेषका अनुयायी—भारतके धर्मोका अध्ययन करनेको कुछ महत्त्व नहीं देता। वह जानता है कि ब्राह्मणं ग़लतीपर हैं और उनके तमाम करिश्मे झूठे हैं। कोई भी मैथाडिस्ट—एक दूसरे ईसाई मत-विशेषका अनुयायी—बुद्धका जीवन-चरित्र पढ़नेकी चिन्ता नहीं करेगा; और कोई भी बैपटिस्ट—एक तीसरे ईसाई मत-विशेषका अनुयायी--कन्फ्यूशियसके नीति-शास्त्रका अध्ययन करनेमें अपना समय खराब नहीं करेगा। सभी तरहके ईसाई यह मानकर चलते हैं कि सच्चा धर्म तो एक उनका ही है, शेष सारे धर्म सर्वथा निराधार हैं। ईसाई-संसारका विश्वास है कि भारतमें की गई किसी भी प्रार्थनाकी ओर कभी ध्यान नहीं दिया गया है; कि मिश्र यूनान ओर रोमकी बलि-वेदियोंपर जो अनन्त बलियाँ चढ़ाई गईं उनमेंसे किसीका कुछ प्रभाव नहीं पड़ा। उनका विश्वास है कि इन सभी शक्ति-शाली जातियोंने अपने अपने देवताओंकी बेकार पूजा की, कि उनके पादरी पुरोहित या तो स्वयं ठग थे, या ठगे गये थे; कि उनके रीति-रिवाज या तो हानिकर थे, या

निरर्थक; कि उनके मन्दिर अज्ञान और धोखेसे बनाये गये थे। उनका विश्वास है कि कभी किसी देवताने न उनकी स्तुति सुनी, न उनकी निराशापूर्ण दुःख-गाथा सुनी और न उनके धन्यवादके दो शब्द सुने। उनका विश्वास है कि इन धर्मोंने कभी किसी महामारीसे किसीकी रक्षा नहीं की; कि भूकम्प, ज्वालामुखी-पर्वत, बाढ़ और तूफानने अपनी मृत्यु-गतिको जारी रखा। इस सारे समयमें जो सच्चा परमात्मा है, वह उनके दुःखोंको देखता रहा, उनपर हँसता रहा और उनका उपहास करता रहा !

हम देखते हैं कि जातियोंका वैभव उनके धर्मोंपर निर्भर न करके, किसी भगवान्की कृपापर निर्भर न करके, उस देशकी मिट्टी, जलवायु, व्यापार, सूझ-बूझ, उद्योग, लोगोंके साहस, उनके मस्तिष्कके विकास, शिक्षाके प्रसार, विचार और कार्यकी स्वतन्त्रतापर निर्भर रहा है। जातीय जीवनके इस शक्तिशाली चित्रको बुद्धिने तो बनाया है और मिथ्या विश्वासोंने उसे चौपट किया है।

यह समझ लेनेके बाद कि सभी लोग जिन बातोंमें विश्वास करते हैं वे उन्हींमें विश्वास कर सकते हैं और कि धर्मोंकी उत्पत्ति स्वाभाविक ढंगपर हुई है, मैं न किसी आदमीकी प्रशंसा करता हूँ और न निन्दा। अच्छे आदमियोंने बुरे मतोंको अपनाये रखा है, और बुरे आदमियोंने अच्छे मतोंको। मानव-जातिके कुछ श्रेष्ठतम पुरुष अनुचित बातोंका पक्ष लेकर लड़े और मर गये। आदमीका दिमाग विरोधी बातोंकी मिलन-भूमि रहा है।

हम जानते हैं कि एक ही हवा अनेक जहाजोंको अनेक तरह आगे बढ़ाती है। इसी प्रकार आदमी एक ही पुस्तकको पढ़कर भी नाना मतोंकी स्थापना करते हैं और स्वर्गके नाना मार्ग सुझाते हैं। मैंने अपनी योग्यताके अनुसार अनेक देशोंके धर्मों और अनेक सम्प्रदायोंके मतोंकी समीक्षा की है। वे बहुत बातोंमें समान हैं, और उनके समर्थनमें जो प्रमाण पेश किये गये हैं वे ऐसे हैं कि जो उनमें विश्वास करते हैं उन्हें सदाकालिक पुरस्कारका आश्वासन दिया गया है। सभी धार्मिक ग्रन्थोंमें, कुछ सच्ची बातें हैं, कुछ प्रकाशकी किरणें हैं, कुछ प्रेम और आशाके शब्द हैं। लेकिन इन्हीं पुस्तकोंमें भय और घृणाके

शब्द भी हैं, और इनके पृष्ठोंमेंसे वे साँप निकलते हैं जो आदमीके सभी रास्तोंपर फुंकार मारते हैं।

जहाँ तक मेरी बात है मैं उन ग्रन्थोंको अधिक पसन्द करता हूँ, जो ईश्वरीय अथवा इलहामी नहीं समझे जाते। मेरे दिमागकी बनावट ही ऐसी है कि मुझे प्राचीन संसारके सभी पैग़म्बरोंकी अपेक्षा शेक्सपीयरके पढ़नेमें अधिक आनन्द आता है। वहाँ ऐसे विचार हैं जो आदमीकी मानसिक-भूखको शान्त करते हैं।

मैं बुद्धिके धर्ममें विश्वास करता हूँ—इस संसारके धर्ममें, मस्तिष्कके विकासमें, बौद्धिक धनके संग्रह करनेमें, ताकि आदमी अपने आपको भय और मिथ्या-विश्वाससे मुक्त कर सके, ताकि वह संसारको भोजन और वस्त्र दे सकनेमें समर्थ होनेके लिये प्राकृतिक शक्तियोंसे फायदा उठा सके।

हमें अपने प्रति ईमानदार होना चाहिये। असंख्य रहस्योंके सम्मुख, तारों-भरे अनन्त आकाशके नीचे खड़े होकर; यह जानते हुए कि बालूका प्रत्येक कण, प्रत्येक पत्ता, घासका प्रत्येक तिनका, हर मस्तिष्कसे ऐसा प्रश्न पूछता है, जिसका उत्तर नहीं है; यह जानते हुए कि सरलतम चीजका भी हमारे पास कोई समाधान नहीं है; यह अनुभव करते हुए कि हम सापेक्ष और ऊपरी संसारके सम्पर्कमें ही आते हैं और कि जो वास्तविक है, जो परमार्थ तत्त्व है वह हमें अपने पास फटकने नहीं देता, हमें चाहिये कि हम मानव-बुद्धिकी सीमाओंको स्वीकार कर लें। हममें साहस होना चाहिये और इतनी स्पष्टवादिता होनी चाहिये कि हम कह सकें—हम नहीं जानते।

ईसाई धर्म करिश्मोंपर निर्भर करता है। विज्ञानके राज्यमें करिश्में नहीं होते। सच्चे दार्शनिकका काम लोगोंमें आश्चर्यकी भावना जगाना नहीं है, किन्तु आश्चर्यकर प्रतीत होनेवाली बातोंको समझाकर सरल बना देना। वह लोगोंको चकित न करके उन्हें ज्ञान देनेका प्रयत्न करता है। वह इस बातमें पूर्ण रूपसे असन्दिग्ध है कि प्रकृतिमें करिश्में नहीं होते। वह जानता है कि संख्याओं आदिके गणितसम्बन्धी प्रकटीकरण वैसे ही रहेंगे। वह जानता है कि रसायनशास्त्रमें कोई करिश्में नहीं हैं, अणुओंके आकर्षण, विकर्षण तथा प्रेम और घृणा वैसे ही बने रहते हैं। उसे निश्चय है कि समान परिस्थि-

तिमें वैसा ही होगा, परिणाम सदा एक जैसा ही रहा है और एक जैसा रहेगा। अणु अथवा कण एक निश्चित मात्रामें आपसमें घुलते-मिलते हैं, एक तरहके इतने कण दूसरी तरहके इतने कणोंके साथ। इसके अपवाद नहीं हैं। पदार्थ सदैव अपनी प्रकृतिके प्रति सत्य रहते हैं। उनमें न कोई ऐसी झक होती है, न पक्षपात होता है, जो उनकी क्रियाओंको बदल सके अथवा उन्हें काबू कर सके। वे आज, कल और सदैवके लिये वैसे ही हैं।

इस पक्केपनमें, इस अपरिवर्तन-शीलतामें, इस सदाकालिक विश्वसनीयतामें समझदार आदमीका पूर्ण विश्वास है। उसको यह बताना बेकार है कि कभी ऐसा समय था जब आग जल सकनेवाले पदार्थोंको जलाती नहीं थी, जब प्राणी पृथ्वीके आकर्षणके नियमानुसार बहता नहीं था, अथवा कभी एक क्षणका कोई एक भी भाग ऐसा हुआ है जब पदार्थमें वज़न न रहा हो।

विश्वास समझके अधीन होना चाहिये। अज्ञ लोगोंमें इतना विश्वास नहीं होता कि वह जो वास्तविक है उसे विश्वसनीय समझ सके, क्यों कि जो वास्तविक है वह उन्हें अपने इन्द्रिय-जन्य ज्ञानसे विरोधी प्रतीत होता है। उन्हें यह स्पष्ट दिखाई देता है कि सूर्य उदय होता है और अस्त होता है, और उनमें इतना विश्वास नहीं कि वह यह विश्वास कर सकें कि पृथ्वी ही सूर्यके इर्द गिर्द घूमती है, अर्थात् उनमें इतनी बुद्धि नहीं है कि उनके अपने विश्वासमें जो बेहूदगी है उसे देख सकें, और साथ ही इस बातको कि जिन बातोंका हमें ज्ञान है उन सभी बातोंका पृथ्वीके भ्रमणके साथ पूरा मेल बैठता है। उन्हें अपनी आँखोंका विश्वास है, किन्तु अपनी बुद्धिका नहीं। ऊपरी दृष्टिसे देखनेसे जैसा प्रतीत होता है अज्ञान सदासे उसके अधीन रहा है और रहेगा। सामान्य तौरपर विश्वासका धर्म है कि वह सत्यके अतिरिक्त अन्य सभी बातोंको सही माने। अर्ध-सभ्य मनुष्य फलित ज्योतिषमें विश्वास करता है। कौन है जो उसे आकाशीय क्षेत्रके विस्तारकी बातमें, प्रकाशकी गतिकी बातमें, सूर्योंके आकार-प्रकार और उनकी संख्याकी बातमें तथा तारा-गुच्छोंकी बातमें विश्वास करा सके ?

जब आदमी मशीन-विज्ञान अथवा मैकनिकस्के बारेमें कुछ नहीं जानते थे, गतिके पारस्परिक सम्बन्ध तथा उसके अविनाशी होनेके बारेमें कुछ नहीं

जानते थे, तब आदमी लगातार स्थायी गतिमें विश्वास करते थे। लगातार स्थायी गति मशीन-विज्ञानका एक करिश्मा होगा, इसी प्रकार एक धातुका दूसरी धातुमें बदल जाना रसायन-शास्त्रका करिश्मा होगा; और यदि हम दोका दोसे गुणा करके परिणाम पाँच निकाल सकें तो यह गणित-शास्त्रका करिश्मा होगा। क्या कोई ऐसे चक्रकी आशा करता है, जिसका व्यास उसकी परिधिका एक चौथाई हिस्सा हो। यदि ऐसा चक्र हो तो वह रेखा-गणितका एक करिश्मा होगा।

दूसरे शब्दोंमें किसी विज्ञानमें कोई करिश्मा नहीं होता। जिस क्षण हमारी समझमें कोई प्रश्न अथवा विषय आ जाता है, उसी क्षण उसकी अलौकिकताका लोप हो जाता है। यदि रसायन-संसारमें कोई अनोखी बात वास्तवमें होती है, तो वैसी ही अवस्थामें वह अन्यत्र भी घटेगी। किसीके लिये भी यह आवश्यक नहीं है कि वह इस घटनाके बारेमें दूसरोंके दिये गये ब्योरोंको विश्वसनीय माने। अपने लिये सभी तजर्बा करके देख सकते हैं। कोई भी समझमें न आ सकनेवाली बात नहीं होती।

अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि करिश्मोंका युग जाता रहा। इस लिये अब अलौकिक बातोंद्वारा अलौकिक बातोंकी स्थापना नहीं हो सकती। अब हम उन्हें उन गवाहोंकी गवाहीसे प्रमाणित करते हैं, जो कुछ लेखकोंके अनुसार अनेक शताब्दिपूर्व हुए हैं। यह गवाही हमें सीधी गवाहोंसे नहीं मिलती, और उन लोगोंसे भी नहीं जो कहते हों कि हमने उन गवाहोंसे बातचीत की है, किन्तु कुछ ऐसे अज्ञात आदमियोंसे जिन्होंने यह नही बताया कि उन्हें यह जानकारी कहाँसे प्राप्त हुई।

प्रश्न उठता है कि क्या अलौकिक बातके अतिरिक्त और किसी भी तरह अलौकिक बातकी स्थापना हो सकती है? यह सम्भव है, लेखकोंसे गलती हुई हो। यह भी असम्भव नहीं है कि उन्होंने यह विवरण स्वयं घड़ लिये हों। सम्भव है, गवाहोंने जिसे स्वयं असत्य जाना वह कहा। सम्भव है गवाहोंने ईमानदारीसे धोखा खाया हो। या, कहानियाँ अपने प्रथम कहे गये रूपमें सत्य हों, कल्पनाने उन्हें बहुत बढ़ा दिया हो और कई शताब्दियाँ बीत जानेपर कोई एकदम सरल सत्य बात किसी अलौकिक बातमें बदल गई हो।

हमें यह स्वीकार करना चाहिये कि जहाँ तक सम्भावनाकी बात है, वहाँ तक अलौकिक बातोंका न होना ही सम्भव है; क्योंकि जो सम्भव है वह किसी भी तरह अलौकिक हो ही नहीं सकता। न तो जिसकी सम्भावना है, वह ही अलौकिक हो सकता है और न जो सम्भव है, वह ही अलौकिक हो सकता है। इस लिये सम्भावना यही है कि अलौकिक बातोंके लेखक या तो स्वयं ग़लतीपर थे, या बेईमान थे।

हमें यह स्वीकार करना चाहिये कि हमने स्वयं कभी कोई करिश्मा नहीं देखा। यदि हम संसारमें घुले-मिले हैं तो हम यह कहनेके लिये मजबूर हैं कि हमने आदमियोंकी एक बड़ी भारी संख्याको जाना है—हम भी उनमें शामिल हैं—जो ग़लतीपर रहे हैं, और अन्य बहुतसे लोग जो पूरी पूरी सत्य बात नहीं कह सके हैं। सारी संभावनायें हमारे अनुभवके पक्षमें और अलौकिकके विपक्षमें हैं; और यह भी एक आवश्यकता है ही कि स्वतन्त्र दिमाग़ कमसे कम बाधाके मार्गको अपनाता है।

गवाहीका प्रभाव, गवाहकी समझ, ईमानदारी और गवाहीको तोलने-वालेकी बुद्धिपर निर्भर करता है। यदि आदमी किसी ऐसे समाजमें रहता है, जहाँ लोग अलौकिक बातोंको सम्भव मानते हैं, जहाँ अलौकिकता लगभग रोज घटनेवाली घटना मानी जाती है, तो वह सामान्यरूपसे यह मान लेगा कि जितनी भी आश्चर्यकर बातें घटती हैं, वे सभी किन्हीं अलौकिक बातोंके कारण। वह दैवी हस्तक्षेपकी आशा करेगा, और इसके परिणामस्वरूप उसका मस्तिष्क कमसे कम बाधाका रास्ता ग्रहण करेगा, जो उसकी समझमें सबसे आसान है। ऐसे आदमी अपने श्रेष्ठतम इरादोंके बावजूद झूठे गवाह सिद्ध होते हैं। उनपर दिखावेका प्रभाव पड़ जाता है और वह धोखे तथा मायाके शिकार हो जाते हैं।

उस युगमें जब पढ़ना और लिखना एक प्रकारसे अज्ञात था, जब इतिहास गोलमोल दन्त-कथाओंके अतिरिक्त कुछ न था, जो आश्चर्यकर था, जो अद्भुत था, केवल उसीको विस्मृतिके गर्तसे बचानेका प्रयत्न होता था। गप्प जितनी ही अधिक अद्भुत रहती, उतनी ही अधिक मात्रामें वह लोगोंकी रुचिको उत्तेजित करती थी। सुनानेवाले और सुननेवाले समानरूपसे अज्ञानी

और ईमानदार थे। उस समय कोई बात (पूर्णरूपसे) ज्ञात न थी, किसी विषयमें कोई शक नहीं करता था। प्राकृतिक घटनाओंकी अखण्डित और अखण्ड्य कार्य-कारणकी सामान्य परम्परा सामान्यरूपसे चालू थी। संसारका काम कैसे चलता है, कुछ समझमें नहीं आता था। हर बात किसी न किसी एक देवता अथवा देवताओंपर निर्भर थी, जो स्वयं उन्हीं उत्तेजनाओंके वशीभूत रहते थे, जो आदमीपर शासन करती थीं। किसी बातके एक टुकड़ेको ही सादी बात मान लिया जाता था, और उनसे जो परिणाम निकाले जाते थे वे ईमानदाराना किन्तु भयानक होते थे।

यह सम्भवतः निश्चित ही है कि संसारके सभी धर्मोंपर विश्वास किया गया है, और लगभग सभी करिश्मोंने असंख्य दिमागोंमें जगह पाई है; अन्यथा उनकी आयु लम्बी न होती। वे सब पर-वञ्चनाकी दृष्टिसे ही नहीं रचे गये थे। करिश्मोंकी बात कहने और सुननेवाले समान रूपसे ईमानदार थे। ऐसा होनेसे कोई भी बात इतनी अधिक बेहूदा नहीं समझी गई कि आदमीने उसे अविश्वसनीय माना हो।

जहाँ तक मैं जानता हूँ सभी धर्म इस बातका दावा करते हैं कि उनकी स्थापना अलौकिक रूपसे हुई है, रक्षा अलौकिक रूपसे हुई है, प्रचार अलौकिक रूपसे हुआ है। सभी धर्मोंके पुरोहितोंने, पादरियोंने इस बातका दावा किया है कि वे ईश्वरके संदेश-वाहक हैं, और उन्हें कुछ विशेष अधिकार प्राप्त हैं, और अपने संदेशों तथा अधिकारोंको बल प्रदान करनेके लिये उन्होंने अलौकिकताकी दुहाई दी है।

यदि आदमी अलौकिकताका विश्वासी है, तो वह प्रत्येक घटनाके सम्बन्धमें अलौकिकताकी दुहाई देगा। हम जानते हैं कि आरम्भमें कुछ थोड़ी-सी ऐसी बातोंको छोड़कर जिनके विषयमें आदमी समझता था कि उसे उनका पूरा ज्ञान है; शेष सारी बातोंकी वह अलोकिक व्याख्या ही करता था। कुछ समयके बाद आदमीने समझा कि समान कारण-सामग्रीका समान परिणाम होता है, और इसलिये उन बातोंके सम्बन्धमें अलौकिकताके हस्तक्षेपकी बात छोड़ दी गई। लेकिन अज्ञात-विषयोंमें अब भी उस अलौकिकताका हाथ माना ही जाता है। दूसरे शब्दोंमें ज्यों ज्यों मनुष्यका ज्ञान बढ़ता गया,

त्यों त्यों अलौकिकताकी रेखा सिमटती गई। उसके लिये ज्ञातकी सीमाके उस पार ही कुछ स्थान रह गया।

कुछ ऐसे भी विश्वासी हैं जिनकी आस्था सर्वव्यापक दैवी-हस्तक्षेपमें है, जो मानते हैं कि एक दैवी-शक्ति है जो निरन्तर हस्तक्षेप करती रहती है—यह हस्तक्षेप या तो दण्ड देनेके लिये होता है या पुरस्कृत करनेके लिये, व्यक्तियों तथा जातियोंके नाश अथवा उनकी सुरक्षाके लिये।

कुछ दूसरे लोगोंने जीवनकी सामान्य बातोंमें दैवी-हस्तक्षेपकी बात छोड़ दी है, लेकिन तो भी वह मानते हैं कि परमात्मा विशेष तथा चिन्तनीय अवसरोंपर हस्तक्षेप करता है; विशेषरूपसे जातियोंके मामलेमें और विशेष अवसरोंपर उसकी सर्वव्यापकता अभिव्यक्त होती है। यह समझौतेकी स्थिति है। इन लोगोंका विश्वास है कि एक अनन्त-शक्तिने संसारका निर्माण किया और उसके लिये नियम बना दिये और तब संसारको उन नियमोंके अनुसार चलते रहनेके लिये छोड़ दिया। उनकी मान्यता है कि सामान्य रूपसे यह व्यवस्था ठीक चलती है। सृष्टिका रचयिता केवल विशेष घटनाके समय ही हस्तक्षेप करता है अथवा जब उसकी मशीनमें कोई ऐसी खराबी पैदा हो जाती है जिससे वह उसकी पूर्व योजनाके अनुसार काम नहीं करती।

कुछ दूसरे लोग ऐसे भी हैं जिनका कहना है कि सभी कुछ प्राकृतिक है; बाहरसे न कभी कोई हस्तक्षेप हुआ है, न होगा और न हो सकता है, क्योंकि प्रकृतिके अन्दर सभीका समावेश हो जाता है तथा उसके बाहर अथवा परे और कुछ हो ही नहीं सकता।

प्रथम श्रेणीके लोग सीधे सादे ईश्वरवादी हैं, दूसरी श्रेणीके लोग अज्ञातके सम्बन्धमें ईश्वरवादी और ज्ञातके सम्बन्धमें प्रकृतिवादी और तीसरी प्रकारके लोग सर्वथा प्रकृतिवादी हैं, जिन्हें मिथ्या-विश्वास छू नहीं गया है।

प्रथम श्रेणीके लोगोंकी गवाहीका क्या मूल्य हो सकता है? इस एक प्रश्नका उत्तर उन जातियोंका इतिहास पढ़नेसे मिल जाता है जो अनन्य-भावसे अलौकितामें विश्वास करती रही हैं। किसी एक भी ऐसी बेहूदगीकी कल्पना नहीं की जा सकती, जिसे इन लोगोंकी गवाहीने स्थापित न किया हो। प्रत्येक प्राकृतिक नियम अथवा प्रत्येक वास्तविक घटनाका उल्लंघन हुआ है। बिना

माता-पिताके बच्चे पैदा कराये गये हैं, आदमियोंको सहस्रों वर्षों तक जीवित रखा है; विना भोजन और विना निद्राके लोग जीवित रहे हैं !

इस प्रकारके मिथ्या-विश्वासोंने सामान्य गँवारोंको अथवा साधु-सन्तोंको ही नहीं घेरे रखा है; लेकिन बड़े बड़े राजा और सरदार भी इन मिथ्या-विश्वासोंका शिकार रहे हैं—वे लोग जो उस समय समझदार और शिक्षित समझे जाते थे। कोई भी इन अलौकिक बातोंसे इनकार नहीं कर सकता था, क्योंकि इनकार करनेका परिणाम प्रायः मृत्यु-दण्ड होता था। समाज, जातियाँकी जातियाँ पगला गईं—अज्ञान, स्वप्न तथा सबसे अधिक भयका शिकार हो गईं। इन अवस्थाओंमें मानव-समाजका न कोई मूल्य है और न हो ही सकता है। अब हम जानते हैं कि संसारका लगभग सारा इतिहास झूठा है, और हम यह इस लिये जानते हैं कि हम मानसिक विकासकी उस अवस्थाको पहुँच गये हैं, जिसमें हम जानते हैं कि प्रत्येक कार्यका कुछ न कुछ कारण अवश्य होना चाहिये, और प्रत्येक वस्तु प्रकृतिके नियमानुसार उत्पन्न होती है, इस लिये कोई भी जाति जिसकी भूमि उर्वरा न हो, लोग बुद्धिमान् न हों और व्यापार श्रेष्ठ न हो कभी महान्, शक्तिशाली और वैभव-सम्पन्न हो ही नहीं सकती। इस तुलापर तोलनेपर लगभग सभी इतिहास गप्पें मालूम देते हैं।

यही बात धर्मोंके बारेमें भी कही जा सकती है। हर समझदार अमरीका-वासीकी यह मान्यता है कि भारत, मिश्र, यूनान और रोमके सभी धर्म मिथ्या थे और हैं। वे सभी आश्चर्य्य जो उन धर्मोंका आधार हैं, असत्य हैं। केवल हमारा अपना धर्म ही अपवाद है। हर समझदार हिन्दू भी अपने धर्मके अतिरिक्त शेष सभी धर्मोंका तिरस्कार करता है। प्रश्न होता है कि वह समय कब आयेगा जब लोग अपनी मान्यताओंके दोषोंको भी उसी प्रकार स्पष्टतासे देख सकेंगे जिस प्रकार अन्य सभीकी मान्यताओंके देखते हैं।

सभी तथाकथित मिथ्या-धर्म ठीक उसी प्रकार अलौकिक तथा आश्चर्य-कर बातोंसे समन्वित हैं जैसे हमारे। न तो हमारी गवाही उनकी गवाहीसे अच्छी है और न हमें अधिक सफलता ही मिली है। यदि उनकी अलौकिक बातें सत्य नहीं रहीं, तो हमारी भी सत्य नहीं हो सकतीं। भारत और फिलस्तीनमें प्रकृति समान ही रही है।

ईसाइयतकी एक आधारशिला अपौरुषेयता है, और यह अपौरुषेयता अथवा इलहाम सभी धर्मोंकी जड़में है। यह इलहाम होनेकी बात किस आधारपर ठीक मानी जाय? जिस आदमीको इलहाम हुआ, उसे भी कैसे मालूम हुआ कि उसे इलहाम हुआ? यदि उसपर कुछ ऐसा प्रभाव पड़ा कि उसने कुछ ऐसी बातें लिखीं जो उसके लिये सर्वथा नई थीं, तो भी वह यह बात कैसे जान सकता था कि उसे वह प्रेरणा किसी परमात्मासे मिली? यदि वह किसी तरह यह बात जान भी लेता, तो वह दूसरोंको इसका विश्वास कैसे करा सकता था?

इलहामका मतलब क्या है? क्या जिस आदमीको इलहाम हुआ उसने केवल परमात्माके ही विचारोंको लिपि-बद्ध किया? क्या वह केवल एक माध्यम ही था, अथवा उसके व्यक्तित्वका भी दैवी-संदेशपर असर पड़ा? क्या उसने दैवी-ज्ञानके साथ अपने निजी-अज्ञानको भी मिला दिया? परमात्माके प्रेम और न्यायके साथ अपनी द्वेष और घृणाकी भावनाओंको भी जोड़ दिया? यदि परमात्माने उसे यह कहा कि वह अपनेसे मरे हुए किसी जानवरका मांस न खाए तो क्या उसी परमात्माने उसे यह भी कहा कि वह अपने पड़ौसीको वह मांस बेच दे?

एक आदमी कहता है, उसे इलहाम हुआ है, उसे स्वप्नमें परमात्मा दिखाई दिया और उसने उसे कुछ खास खास बातें बताईं। सम्भव है कि जो बातें वह कहता है कि उसे परमात्माने बताई हैं, वे बातें भली हों और समझदारीकी हों, लेकिन उन बातोंके भले और बुरे होनेसे क्या इलहामकी स्थापना हो जाएगी? यदि वे बातें बेहूदा और शरारत-पूर्ण हों, तो क्या उससे यह निश्चयात्मक रूपसे सिद्ध हो जायगा कि उस आदमीको इलहाम नहीं हुआ? क्या हमें उस संदेशके अनुसार अपना मत बनाना पड़ेगा? दूसरे शब्दोंमें क्या हमारा तर्क अन्तिम-निर्णायक सिद्ध होगा?

जिस आदमीको इलहाम हुआ है वह यह कैसे जान सकता है कि उसे परमात्मासे इलहाम हुआ है? यदि कहीं परमात्मा सचमुच किसी आदमीके सामने प्रकट हो जाय तो वह आदमी यह बात कैसे जानेगा कि उसके सामने परमात्मा आकर खड़ा हुआ है? वह परमात्माको किस माप-दण्डसे मापेगा?

इस सम्बन्धमें मानव निपट अनाड़ी है। उसका परलोकसे ऐसा कुछ भी परि-चय नहीं है, कि यदि देवता-गण वास्तवमें हों भी, तो वह उनको पहचान सके।

यद्यपि हजारों आदमियोंने इलहामका दावा किया है, किन्तु उनके द्वारा जो दैवी-संदेश मिले उनमें एक भी ऐसा नहीं जो मानव-ज्ञानसे परेकी चीज हो। जो पुस्तकें इलहामी नहीं हैं उनमें भी उतनी ही असाधारण बातें हैं जितनी इलहामी किताबोंमें। यदि जिस आदमीको इलहाम होता है, वह भी यह नहीं जान सकता कि वह इलहामी आदमी है, तो वह अपने इलहामी होनेकी बात दूसरोंको कैसे मनवा सकता है? इस समस्याका अंतिम समाधान यही है कि इलहाम एक ऐसा करिश्मा है कि जिसे इलहाम होता है उसे ही इसका कुछ थोड़ा बहुत ज्ञान हो सकता है और वह ज्ञान इतना कम होता है कि जिसे इलहाम होता है, वह भी उस ज्ञानसे पूर्णतया संतुष्ट नहीं होता।

क्या परमात्माकी कृतिको एक सामान्य आदमीकी कृतिसे बहुत ही श्रेष्ठ नहीं होना चाहिये? यदि बाइबलके लेखकोंको वास्तवमें इलहाम होता था, तो क्या वह ग्रन्थ अन्य सभी ग्रन्थोंकी अपेक्षा महान् नहीं होना चाहिये? उदाहरणके लिये यदि कुछ मूर्तियोंके बारेमें यह कहा जाय कि इन मूर्तियोंके शिल्पियोंको इलहाम होता था तो निश्चयसे उनकी बनाई मूर्तियाँ उन शिल्पियोंकी मूर्तियोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ होनी ही चाहिये जिन्हें किसी ऐसे आदमीने बनाया है जिसे इलहाम नहीं होता। इसी प्रकार चित्रकलाके बारेमें यदि कोई कहे कि अमुक चित्रकार परमात्माका माध्यम था, तो उसके बनाये चित्र अन्य सभी चित्रकारोंके चित्रोंसे बढ़ने ही चाहिये।

यह सम्भव नहीं प्रतीत होता कि किसी भी आदमीने कभी किसी भी सत्यका आधार—किसी भी ऐसी घटनाका आधार जो वास्तवमें घटी हो—किसी करिश्मे अथवा किसी अलौकिक घटनाको बनाया हो। यह बात समझनेमें आसान है कि जो सामान्य था, वह मिलावट मिल जानेसे आश्चर्यकर हो गया; और यह भी समझना आसान है कि जो आश्चर्यकर था वह और मिलावट मिल जानेसे अलौकिक हो गया। लेकिन यह सम्भव प्रतीत नहीं होता कि किसी समझदार, ईमानदार आदमीने कभी करिश्मेद्वारा किसी बातको सिद्ध करनेका प्रयत्न किया हो।

बात यह है कि करिश्मोंसे उन्हीं आदमियोंको सन्तोष हो जाता था जिन्हें किसी प्रमाणकी आवश्यकता न होती थी; अन्यथा वे करिश्मोंमें कैसे विश्वास कर सकते थे? यह भी निश्चित प्रतीत होता है कि यदि किसीके द्वारा करिश्में हुए भी हों तो उनके होनेका कोई मानवीय प्रमाण दिया ही नही जा सकता। दूसरे शब्दोंमें करिश्मोंका प्रमाण करिश्मे ही हो सकते हैं; और उपस्थित जनोंके अतिरिक्त अन्य किसीके लिये भी करिश्में प्रमाण हो ही नहीं सकते; और करिश्मोंका यदि कुछ मूल्य हो सकता है तो तभी जब वह स्थायी हों। यह भी याद रखनेकी बात है कि कोई भी करिश्मा जो वास्तवमें हुआ भी हो, वह न किसी नैतिक सत्यपर कोई नया प्रकाश डाल सकता है और न आदमीको ही उसके कर्तव्यका कोई नया भान करा सकता है।

यदि कभी किसी आदमीको इलहाम हुआ है, तो यह एक ऐसा रहस्य है जिसका किसीको ज्ञान नहीं और केवल वही आदमी समझता है कि उसे इलहाम हुआ है जो कहता है कि उसे इलहाम हुआ है। जिसे इलहाम हुआ है, यह उसके सामर्थ्यसे बाहरकी बात है कि वह दूसरेको उसका सन्तोषजनक प्रमाण दे सके।

अलौकिककी स्थापनाके लिये मानवीय गवाही अपर्य्याप्त है। यदि संसारके समझदार लोगोंका अनुभव सर्वथा विपरीत है तो एक या बारह आदमियोंकी गवाहीका भी कोई मूल्य नहीं। यदि कोई पुस्तक जिसे करिश्मोंके बलपर प्रमाणित किया जाता है, सच्ची है, तो उसके इलहामी होने और न होनेसे कुछ अन्तर नहीं पड़ता; और यदि वह सत्य नहीं है, तो इलहाम उसके मूल्यमें कुछ भी वृद्धि नहीं कर सकता।

सच्ची बात यह है कि ईसाइयतने संभव है अनजानमें—असत्यको पुरस्कृत किया है। इसका आधार था अलौकिकता और अद्‌भुत-घटनाएँ। इसने तमाम ऐसे कथनोंका स्वागत किया जो इसके आधारको मजबूत बनानेके लिये उपयोगी हों। इसने उन इतिहास-लेखकोंपर सम्मानोंकी वर्षा कर दी जिन्होंने बदलेमें पन्नेके पन्ने बेहूदा और असंभव बातोंसे रँग डाले। इसके अपने भू-शास्त्री और ज्योतिषी रहे हैं, जिन्होंने बाईबलके अनुसार पृथ्वी और ग्रह-नक्षत्रोंकी रचना कर डाली। तलवार और आगके सहारे इसने

शब्द भी हैं, और इनके पृष्ठोंमेंसे वे साँप निकलते हैं जो आदमीके सभी रास्तोंपर फुंकार मारते हैं।

जहाँ तक मेरी बात है मैं उन ग्रन्थोंको अधिक पसन्द करता हूँ, जो ईश्वरीय अथवा इलहामी नहीं समझे जाते। मेरे दिमागकी बनावट ही ऐसी है कि मुझे प्राचीन संसारके सभी पैगम्बरोंकी अपेक्षा शेक्सपीयरके पढ़नेमें अधिक आनन्द आता है। वहाँ ऐसे विचार हैं जो आदमीकी मानसिक-भूखको शान्त करते हैं।

मैं बुद्धिके धर्ममें विश्वास करता हूँ—इस संसारके धर्ममें, मस्तिष्कके विकासमें, बौद्धिक धनके संग्रह करनेमें, ताकि आदमी अपने आपको भय और मिथ्या-विश्वाससे मुक्त कर सके, ताकि वह संसारको भोजन और वस्त्र दे सकनेमें समर्थ होनेके लिये प्राकृतिक शक्तियोंसे फायदा उठा सके।

हमें अपने प्रति ईमानदार होना चाहिये। असंख्य रहस्योंके सम्मुख, तारों-भरे अनन्त आकाशके नीचे खड़े होकर; यह जानते हुए कि बालूका प्रत्येक कण, प्रत्येक पत्ता, घासका प्रत्येक तिनका, हर मस्तिष्कसे ऐसा प्रश्न पूछता है, जिसका उत्तर नहीं है; यह जानते हुए कि सरलतम चीजका भी हमारे पास कोई समाधान नहीं है; यह अनुभव करते हुए कि हम सापेक्ष और ऊपरी संसारके सम्पर्कमें ही आते हैं और कि जो वास्तविक है, जो परमार्थ तत्त्व है वह हमें अपने पास फटकने नहीं देता, हमें चाहिये कि हम मानव-बुद्धिकी सीमाओंको स्वीकार कर लें। हममें साहस होना चाहिये और इतनी स्पष्टवादिता होनी चाहिये कि हम कह सकें—हम नहीं जानते।

ईसाई धर्म करिश्मोंपर निर्भर करता है। विज्ञानके राज्यमें करिश्में नहीं होते। सच्चे दार्शनिकका काम लोगोंमें आश्चर्यकी भावना जगाना नहीं है, किन्तु आश्चर्यकर प्रतीत होनेवाली बातोंको समझाकर सरल बना देना। वह लोगोंको चकित न करके उन्हें ज्ञान देनेका प्रयत्न करता है। वह इस बातमें पूर्ण रूपसे असन्दिग्ध है कि प्रकृतिमें करिश्में नहीं होते। वह जानता है कि संख्याओं आदिके गणितसम्बन्धी प्रकटीकरण वैसे ही रहेंगे। वह जानता है कि रसायनशास्त्रमें कोई करिश्में नहीं हैं; अणुओंके आकर्षण, विकर्षण तथा प्रेम और घृणा वैसे ही बने रहते हैं। उसे निश्चय है कि समान परिस्थि-

तिमें वैसा ही होगा, परिणाम सदा एक जैसा ही रहा है और एक जैसा रहेगा। अणु अथवा कण एक निश्चित मात्रामें आपसमें घुलते-मिलते हैं, एक तरहके इतने कण दूसरी तरहके इतने कणोंके साथ। इसके अपवाद नहीं हैं। पदार्थ सदैव अपनी प्रकृतिके प्रति सत्य रहते हैं। उनमें न कोई ऐसी झक होती है, न पक्षपात होता है, जो उनकी क्रियाओंको बदल सके अथवा उन्हें काबू कर सके। वे आज, कल और सदैवके लिये वैसे ही हैं।

इस पक्केपनमें, इस अपरिवर्तन-शीलतामें, इस सदाकालिक विश्वसनीयतामें समझदार आदमीका पूर्ण विश्वास है। उसको यह बताना बेकार है कि कभी ऐसा समय था जब आग जल सकनेवाले पदार्थोंको जलाती नहीं थी, जब प्राणी पृथ्वीके आकर्षणके नियमानुसार बहता नहीं था, अथवा कभी एक क्षणका कोई एक भी भाग ऐसा हुआ है जब पदार्थमें वज़न न रहा हो।

विश्वास समझके अधीन होना चाहिये। अज्ञ लोगोंमें इतना विश्वास नहीं होता कि वह जो वास्तविक है उसे विश्वसनीय समझ सके, क्यों कि जो वास्तविक है वह उन्हें अपने इन्द्रिय-जन्य ज्ञानसे विरोधी प्रतीत होता है। उन्हें यह स्पष्ट दिखाई देता है कि सूर्य उदय होता है और अस्त होता है, और उनमें इतना विश्वास नहीं कि वह यह विश्वास कर सकें कि पृथ्वी ही सूर्यके इर्द गिर्द घूमती है, अर्थात् उनमें इतनी बुद्धि नहीं है कि उनके अपने विश्वासमें जो बेहूदगी है उसे देख सकें, और साथ ही इस बातको कि जिन बातोंका हमें ज्ञान है उन सभी बातोंका पृथ्वीके भ्रमणके साथ पूरा मेल बैठता है। उन्हें अपनी आँखोंका विश्वास है, किन्तु अपनी बुद्धिका नहीं। ऊपरी दृष्टिसे देखनेसे जैसा प्रतीत होता है अज्ञान सदासे उसके अधीन रहा है और रहेगा। सामान्य तौरपर विश्वासका धर्म है कि वह सत्यके अतिरिक्त अन्य सभी बातोंको सही माने। अर्ध-सभ्य मनुष्य फलित ज्योतिषमें विश्वास करता है। कौन है जो उसे आकाशीय क्षेत्रके विस्तारकी बातमें, प्रकाशकी गतिकी बातमें, सूर्योंके आकार-प्रकार और उनकी संख्याकी बातमें तथा तारा-गुच्छोंकी बातमें विश्वास करा सके?

जब आदमी मशीन-विज्ञान अथवा मैकनिक्सके बारेमें कुछ नहीं जानते थे, गतिके पारस्परिक सम्बन्ध तथा उसके अविनाशी होनेके बारेमें कुछ नहीं

जानते थे, तब आदमी लगातार स्थायी गतिमें विश्वास करते थे। लगातार स्थायी गति मशीन-विज्ञानका एक करिश्मा होगा, इसी प्रकार एक धातुका दूसरी धातुमें बदल जाना रसायन-शास्त्रका करिश्मा होगा; और यदि हम दोका दोसे गुणा करके परिणाम पाँच निकाल सकें तो यह गणित-शास्त्रका करिश्मा होगा। क्या कोई ऐसे चक्रकी आशा करता है, जिसका व्यास उसकी परिधिका एक चौथाई हिस्सा हो। यदि ऐसा चक्र हो तो वह रेखा-गणितका एक करिश्मा होगा।

दूसरे शब्दोंमें किसी विज्ञानमें कोई करिश्मा नहीं होता। जिस क्षण हमारी समझमें कोई प्रश्न अथवा विषय आ जाता है, उसी क्षण उसकी अलौकिकताका लोप हो जाता है। यदि रसायन-संसारमें कोई अनोखी बात वास्तवमें होती है, तो वैसी ही अवस्थामें वह अन्यत्र भी घटेगी। किसीके लिये भी यह आवश्यक नहीं है कि वह इस घटनाके बारेमें दूसरोंके दिये गये ब्योरोंको विश्वसनीय माने। अपने लिये सभी तजर्बा करके देख सकते हैं। कोई भी समझमें न आ सकनेवाली बात नहीं होती।

अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि करिश्मोंका युग जाता रहा। इस लिये अब अलौकिक बातोंद्वारा अलौकिक बातोंकी स्थापना नहीं हो सकती। अब हम उन्हें उन गवाहोंकी गवाहीसे प्रमाणित करते हैं, जो कुछ लेखकोंके अनुसार अनेक शताब्दिपूर्व हुए हैं। यह गवाही हमें सीधी गवाहोंसे नहीं मिलती, और उन लोगोंसे भी नहीं जो कहते हों कि हमने उन गवाहोंसे बातचीत की है, किन्तु कुछ ऐसे अज्ञात आदमियोंसे जिन्होंने यह नही बताया कि उन्हें यह जानकारी कहाँसे प्राप्त हुई।

प्रश्न उठता है कि क्या अलौकिक बातके अतिरिक्त और किसी भी तरह अलौकिक बातकी स्थापना हो सकती है? यह सम्भव है, लेखकोंसे गलती हुई हो। यह भी असम्भव नहीं है कि उन्होंने यह विवरण स्वयं घड़ लिये हों। सम्भव है, गवाहोंने जिसे स्वयं असत्य जाना वह कहा। सम्भव है गवाहोंने ईमानदारीसे धोखा खाया हो। या, कहानियाँ अपने प्रथम कहे गये रूपमें सत्य हों, कल्पनाने उन्हें बहुत बढ़ा दिया हो और कई शताब्दियाँ बीत जानेपर कोई एकदम सरल सत्य बात किसी अलौकिक बातमें बदल गई हो।

हमें यह स्वीकार करना चाहिये कि जहाँ तक सम्भावनाकी बात है, वहाँ तक अलौकिक बातोंका न होना ही सम्भव है; क्योंकि जो सम्भव है वह किसी भी तरह अलौकिक हो ही नहीं सकता। न तो जिसकी सम्भावना है, वह ही अलौकिक हो सकता है और न जो सम्भव है, वह ही अलौकिक हो सकता है। इस लिये सम्भावना यही है कि अलौकिक बातोंके लेखक या तो स्वयं ग़लतीपर थे, या बेईमान थे।

हमें यह स्वीकार करना चाहिये कि हमने स्वयं कभी कोई करिश्मा नहीं देखा। यदि हम संसारमें घुले-मिले हैं तो हम यह कहनेके लिये मजबूर हैं कि हमने आदमियोंकी एक बड़ी भारी संख्याको जाना है—हम भी उनमें शामिल हैं—जो ग़लतीपर रहे हैं, और अन्य बहुतसे लोग जो पूरी पूरी सत्य बात नहीं कह सके हैं। सारी संभावनायें हमारे अनुभवके पक्षमें और अलौकिकके विपक्षमें हैं; और यह भी एक आवश्यकता है ही कि स्वतन्त्र दिमाग़ कमसे कम बाधाके मार्गको अपनाता है।

गवाहीका प्रभाव, गवाहकी समझ, ईमानदारी और गवाहीको तोलने-वालेकी बुद्धिपर निर्भर करता है। यदि आदमी किसी ऐसे समाजमें रहता है, जहाँ लोग अलौकिक बातोंको सम्भव मानते हैं, जहाँ अलौकिकता लगभग रोज घटनेवाली घटना मानी जाती है, तो वह सामान्यरूपसे यह मान लेगा कि जितनी भी आश्चर्यकर बातें घटती हैं, वे सभी किन्हीं अलौकिक बातोंके कारण। वह दैवी हस्तक्षेपकी आशा करेगा, और इसके परिणामस्वरूप उसका मस्तिष्क कमसे कम बाधाका रास्ता ग्रहण करेगा, जो उसकी समझमें सबसे आसान है। ऐसे आदमी अपने श्रेष्ठतम इरादोंके बावजूद झूठे गवाह सिद्ध होते हैं। उनपर दिखावेका प्रभाव पड़ जाता है और वह धोखे तथा मायाके शिकार हो जाते हैं।

उस युगमें जब पढ़ना और लिखना एक प्रकारसे अज्ञात था, जब इतिहास गोलमोल दन्त-कथाओंके अतिरिक्त कुछ न था, जो आश्चर्यकर था, जो अद्भुत था, केवल उसीको विस्मृतिके गर्तसे बचानेका प्रयत्न होता था। गप्प जितनी ही अधिक अद्भुत रहती, उतनी ही अधिक मात्रामें वह लोगोंकी रुचिको उत्तेजित करती थी। सुनानेवाले और सुननेवाले समानरूपसे अज्ञानी

और ईमानदार थे। उस समय कोई बात (पूर्णरूपसे) ज्ञात न थी, किसी विषयमें कोई शक नहीं करता था। प्राकृतिक घटनाओंकी अखण्डित और अखण्ड्य कार्य-कारणकी सामान्य परम्परा सामान्यरूपसे चालू थी। संसारका काम कैसे चलता है, कुछ समझमें नहीं आता था। हर बात किसी न किसी एक देवता अथवा देवताओंपर निर्भर थी, जो स्वयं उन्हीं उत्तेजनाओंके वशीभूत रहते थे, जो आदमीपर शासन करती थीं। किसी बातके एक टुकड़ेको ही सादी बात मान लिया जाता था, और उनसे जो परिणाम निकाले जाते थे वे ईमानदाराना किन्तु भयानक होते थे।

यह सम्भवतः निश्चित ही है कि संसारके सभी धर्मोंपर विश्वास किया गया है, और लगभग सभी करिश्मोंने असंख्य दिमागोंमें जगह पाई है; अन्यथा उनकी आयु लम्बी न होती। वे सब पर-वञ्चनाकी दृष्टिसे ही नहीं रचे गये थे। करिश्मोंकी बात कहने और सुननेवाले समान रूपसे ईमानदार थे। ऐसा होनेसे कोई भी बात इतनी अधिक बेहूदा नहीं समझी गई कि आदमीने उसे अविश्वसनीय माना हो।

जहाँ तक मैं जानता हूँ सभी धर्म इस बातका दावा करते हैं कि उनकी स्थापना अलौकिक रूपसे हुई है, रक्षा अलौकिक रूपसे हुई है, प्रचार अलौकिक रूपसे हुआ है। सभी धर्मोंके पुरोहितोंने, पादरियोंने इस बातका दावा किया है कि वे ईश्वरके संदेश-वाहक हैं, और उन्हें कुछ विशेष अधिकार प्राप्त हैं, और अपने संदेशों तथा अधिकारोंको बल प्रदान करनेके लिये उन्होंने अलौकिकताकी दुहाई दी है।

यदि आदमी अलौकिकताका विश्वासी है, तो वह प्रत्येक घटनाके सम्बन्धमें अलौकिकताकी दुहाई देगा। हम जानते हैं कि आरम्भमें कुछ थोड़ी-सी ऐसी बातोंको छोड़कर जिनके विषयमें आदमी समझता था कि उसे उनका पूरा ज्ञान है; शेष सारी बातोंकी वह अलौकिक व्याख्या ही करता था। कुछ समयके बाद आदमीने समझा कि समान कारण-सामग्रीका समान परिणाम होता है, और इसलिये उन बातोंके सम्बन्धमें अलौकिकताके हस्तक्षेपकी बात छोड़ दी गई। लेकिन अज्ञात-विषयोंमें अब भी उस अलौकिकताका हाथ माना ही जाता है। दूसरे शब्दोंमें ज्यों ज्यों मनुष्यका ज्ञान बढ़ता गया,

त्यों त्यों अलौकिकताकी रेखा सिमटती गई। उसके लिये ज्ञातकी सीमाके उस पार ही कुछ स्थान रह गया।

कुछ ऐसे भी विश्वासी हैं जिनकी आस्था सर्वव्यापक दैवी-हस्तक्षेपमें है, जो मानते हैं कि एक दैवी-शक्ति है जो निरन्तर हस्तक्षेप करती रहती है—यह हस्तक्षेप या तो दण्ड देनेके लिये होता है या पुरस्कृत करनेके लिये, व्यक्तियों तथा जातियोंके नाश अथवा उनकी सुरक्षाके लिये।

कुछ दूसरे लोगोंने जीवनकी सामान्य बातोंमें दैवी-हस्तक्षेपकी बात छोड़ दी है, लेकिन तो भी वह मानते हैं कि परमात्मा विशेष तथा चिन्तनीय अवसरों-पर हस्तक्षेप करता है; विशेषरूपसे जातियोंके मामलेमें और विशेष अवसरोंपर उसकी सर्वव्यापकता अभिव्यक्त होती है। यह समझौतेकी स्थिति है। इन लोगोंका विश्वास है कि एक अनन्त-शक्तिने संसारका निर्माण किया और उसके लिये नियम बना दिये और तब संसारको उन नियमोंके अनुसार चलते रहनेके लिये छोड़ दिया। उनकी मान्यता है कि सामान्य रूपसे यह व्यवस्था ठीक चलती है। सृष्टिका रचयिता केवल विशेष घटनाके समय ही हस्तक्षेप करता है अथवा जब उसकी मशीनमें कोई ऐसी खराबी पैदा हो जाती है जिससे वह उसकी पूर्व योजनाके अनुसार काम नहीं करती।

कुछ दूसरे लोग ऐसे भी हैं जिनका कहना है कि सभी कुछ प्राकृतिक है; बाहरसे न कभी कोई हस्तक्षेप हुआ है, न होगा और न हो सकता है, क्योंकि प्रकृतिके अन्दर सभीका समावेश हो जाता है तथा उसके बाहर अथवा परे और कुछ हो ही नहीं सकता।

प्रथम श्रेणीके लोग सीधे सादे ईश्वरवादी हैं, दूसरी श्रेणीके लोग अज्ञातके सम्बन्धमें ईश्वरवादी और ज्ञातके सम्बन्धमें प्रकृतिवादी और तीसरी प्रकारके लोग सर्वथा प्रकृतिवादी हैं, जिन्हें मिथ्या-विश्वास छू नहीं गया है।

प्रथम श्रेणीके लोगोंकी गवाहीका क्या मूल्य हो सकता है? इस एक प्रश्नका उत्तर उन जातियोंका इतिहास पढ़नेसे मिल जाता है जो अनन्य-भावसे अलौकितामें विश्वास करती रही हैं। किसी एक भी ऐसी बेहूदगीकी कल्पना नहीं की जा सकती, जिसे इन लोगोंकी गवाहीने स्थापित न किया हो। प्रत्येक प्राकृतिक नियम अथवा प्रत्येक वास्तविक घटनाका उल्लंघन हुआ है। बिना

माता-पिताके बच्चे पैदा कराये गये हैं, आदमियोंको सहस्रों वर्षों तक जीवित रखा है; विना भोजन और विना निद्राके लोग जीवित रहे हैं !

इस प्रकारके मिथ्या-विश्वासोंने सामान्य गँवारोंको अथवा साधु-सन्तोंको ही नहीं घेरे रखा है; लेकिन बड़े बड़े राजा और सरदार भी इन मिथ्या-विश्वासोंका शिकार रहे हैं—वे लोग जो उस समय समझदार और शिक्षित समझे जाते थे। कोई भी इन अलौकिक बातोंसे इनकार नहीं कर सकता था, क्योंकि इनकार करनेका परिणाम प्रायः मृत्यु-दण्ड होता था। समाज, जातियाँकी जातियाँ पगला गईं—अज्ञान, स्वप्न तथा सबसे अधिक भयका शिकार हो गईं। इन अवस्थाओंमें मानव-समाजका न कोई मूल्य है और न हो ही सकता है। अब हम जानते हैं कि संसारका लगभग सारा इतिहास झूठा है, और हम यह इस लिये जानते हैं कि हम मानसिक विकासकी उस अवस्थाको पहुँच गये हैं, जिसमें हम जानते हैं कि प्रत्येक कार्यका कुछ न कुछ कारण अवश्य होना चाहिये, और प्रत्येक वस्तु प्रकृतिके नियमानुसार उत्पन्न होती है, इस लिये कोई भी जाति जिसकी भूमि उर्वरा न हो, लोग बुद्धिमान् न हों और व्यापार श्रेष्ठ न हो कभी महान्, शक्तिशाली और वैभव-सम्पन्न हो ही नहीं सकती। इस तुलापर तोलनेपर लगभग सभी इतिहास गप्पें मालूम देते हैं।

यही बात धर्मोंके बारेमें भी कही जा सकती है। हर समझदार अमरीका-वासीकी यह मान्यता है कि भारत, मिश्र, यूनान और रोमके सभी धर्म मिथ्या थे और हैं। वे सभी आश्चर्य्य जो उन धर्मोंका आधार हैं, असत्य हैं। केवल हमारा अपना धर्म ही अपवाद है। हर समझदार हिन्दू भी अपने धर्मके अतिरिक्त शेष सभी धर्मोंका तिरस्कार करता है। प्रश्न होता है कि वह समय कब आयेगा जब लोग अपनी मान्यताओंके दोषोंको भी उसी प्रकार स्पष्टतासे देख सकेंगे जिस प्रकार अन्य सभीकी मान्यताओंके देखते हैं।

सभी तथाकथित मिथ्या-धर्म ठीक उसी प्रकार अलौकिक तथा आश्चर्य-कर बातोंसे समन्वित हैं जैसे हमारे। न तो हमारी गवाही उनकी गवाहीसे अच्छी है और न हमें अधिक सफलता ही मिली है। यदि उनकी अलौकिक बातें सत्य नहीं रहीं, तो हमारी भी सत्य नहीं हो सकतीं। भारत और फिलस्तीनमें प्रकृति समान ही रही है।

ईसाइयतकी एक आधारशिला अपौरुषेयता है, और यह अपौरुषेयता अथवा इलहाम सभी धर्मोंकी जड़में है। यह इलहाम होनेकी बात किस आधारपर ठीक मानी जाय? जिस आदमीको इलहाम हुआ, उसे भी कैसे मालूम हुआ कि उसे इलहाम हुआ? यदि उसपर कुछ ऐसा प्रभाव पड़ा कि उसने कुछ ऐसी बातें लिखीं जो उसके लिये सर्वथा नई थीं, तो भी वह यह बात कैसे जान सकता था कि उसे वह प्रेरणा किसी परमात्मासे मिली? यदि वह किसी तरह यह बात जान भी लेता, तो वह दूसरोंको इसका विश्वास कैसे करा सकता था?

इलहामका मतलब क्या है? क्या जिस आदमीको इलहाम हुआ उसने केवल परमात्माके ही विचारोंको लिपि-बद्ध किया? क्या वह केवल एक माध्यम ही था, अथवा उसके व्यक्तित्वका भी दैवी-संदेशपर असर पड़ा? क्या उसने दैवी-ज्ञानके साथ अपने निजी-अज्ञानको भी मिला दिया? परमात्माके प्रेम और न्यायके साथ अपनी द्वेष और घृणाकी भावनाओंको भी जोड़ दिया? यदि परमात्माने उसे यह कहा कि वह अपनेसे मरे हुए किसी जानवरका मांस न खाए तो क्या उसी परमात्माने उसे यह भी कहा कि वह अपने पड़ौसीको वह मांस बेच दे?

एक आदमी कहता है, उसे इल्हाम हुआ है, उसे स्वप्नमें परमात्मा दिखाई दिया और उसने उसे कुछ खास खास बातें बताईं। सम्भव है कि जो बातें वह कहता है कि उसे परमात्माने बताई हैं, वे बातें भली हों और समझदारीकी हों, लेकिन उन बातोंके भले और बुरे होनेसे क्या इलहामकी स्थापना हो जाएगी? यदि वे बातें बेहूदा और शरारत-पूर्ण हों, तो क्या उससे यह निश्चयात्मक रूपसे सिद्ध हो जायगा कि उस आदमीको इलहाम नहीं हुआ? क्या हमें उस संदेशके अनुसार अपना मत बनाना पड़ेगा? दूसरे शब्दोंमें क्या हमारा तर्क अन्तिम-निर्णायक सिद्ध होगा?

जिस आदमीको इलहाम हुआ है वह यह कैसे जान सकता है कि उसे परमात्मासे इलहाम हुआ है? यदि कहीं परमात्मा सचमुच किसी आदमीके सामने प्रकट हो जाय तो वह आदमी यह बात कैसे जानेगा कि उसके सामने परमात्मा आकर खड़ा हुआ है? वह परमात्माको किस माप-दण्डसे मापेगा?

इस सम्बन्धमें मानव निपट अनाड़ी है। उसका परलोकसे ऐसा कुछ भी परिचय नहीं है, कि यदि देवता-गण वास्तवमें हों भी, तो वह उनको पहचान सके।

यद्यपि हजारों आदमियोंने इलहामका दावा किया है, किन्तु उनके द्वारा जो दैवी-संदेश मिले उनमें एक भी ऐसा नहीं जो मानव-ज्ञानसे परेकी चीज हो। जो पुस्तकें इलहामी नहीं हैं उनमें भी उतनी ही असाधारण बातें हैं जितनी इलहामी किताबोंमें। यदि जिस आदमीको इलहाम होता है, वह भी यह नहीं जान सकता कि वह इलहामी आदमी है, तो वह अपने इलहामी होनेकी बात दूसरोंको कैसे मनवा सकता है? इस समस्याका अंतिम समाधान यही है कि इलहाम एक ऐसा करिश्मा है कि जिसे इलहाम होता है उसे ही इसका कुछ थोड़ा बहुत ज्ञान हो सकता है और वह ज्ञान इतना कम होता है कि जिसे इलहाम होता है, वह भी उस ज्ञानसे पूर्णतया संतुष्ट नहीं होता।

क्या परमात्माकी कृतिको एक सामान्य आदमीकी कृतिसे बहुत ही श्रेष्ठ नहीं होना चाहिये? यदि बाइबलके लेखकोंको वास्तवमें इलहाम होता था, तो क्या वह ग्रन्थ अन्य सभी ग्रन्थोंकी अपेक्षा महान् नहीं होना चाहिये? उदाहरणके लिये यदि कुछ मूर्तियोंके बारेमें यह कहा जाय कि इन मूर्तियोंके शिल्पियोंको इलहाम होता था तो निश्चयसे उनकी बनाई मूर्तियाँ उन शिल्पियोंकी मूर्तियोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ होनी ही चाहिये जिन्हें किसी ऐसे आदमीने बनाया है जिसे इलहाम नहीं होता। इसी प्रकार चित्रकलाके बारेमें यदि कोई कहे कि अमुक चित्रकार परमात्माका माध्यम था, तो उसके बनाये चित्र अन्य सभी चित्रकारोंके चित्रोंसे बढ़ने ही चाहिये।

यह सम्भव नहीं प्रतीत होता कि किसी भी आदमीने कभी किसी भी सत्यका आधार—किसी भी ऐसी घटनाका आधार जो वास्तवमें घटी हो—किसी करिश्मे अथवा किसी अलौकिक घटनाको बनाया हो। यह बात समझनेमें आसान है कि जो सामान्य था, वह मिलावट मिल जानेसे आश्चर्यकर हो गया; और यह भी समझना आसान है कि जो आश्चर्यकर था वह और मिलावट मिल जानेसे अलौकिक हो गया। लेकिन यह सम्भव प्रतीत नहीं होता कि किसी समझदार, ईमानदार आदमीने कभी करिश्मेद्वारा किसी बातको सिद्ध करनेका प्रयत्न किया हो।

बात यह है कि करिश्मोंसे उन्हीं आदमियोंको सन्तोष हो जाता था जिन्हें किसी प्रमाणकी आवश्यकता न होती थी; अन्यथा वे करिश्मोंमें कैसे विश्वास कर सकते थे ? यह भी निश्चित प्रतीत होता है कि यदि किसीके द्वारा करिश्में हुए भी हों तो उनके होनेका कोई मानवीय प्रमाण दिया ही नही जा सकता। दूसरे शब्दोंमें करिश्मोंका प्रमाण करिश्मे ही हो सकते हैं; और उपस्थित जनोंके अतिरिक्त अन्य किसीके लिये भी करिश्में प्रमाण हो ही नहीं सकते; और करिश्मोंका यदि कुछ मूल्य हो सकता है तो तभी जब वह स्थायी हों। यह भी याद रखनेकी बात है कि कोई भी करिश्मा जो वास्तवमें हुआ भी हो, वह न किसी नैतिक सत्यपर कोई नया प्रकाश डाल सकता है और न आदमीको ही उसके कर्तव्यका कोई नया भान करा सकता है।

यदि कभी किसी आदमीको इलहाम हुआ है, तो यह एक ऐसा रहस्य है जिसका किसीको ज्ञान नहीं और केवल वही आदमी समझता है कि उसे इलहाम हुआ है जो कहता है कि उसे इलहाम हुआ है। जिसे इलहाम हुआ है, यह उसके सामर्थ्यसे बाहरकी बात है कि वह दूसरेको उसका सन्तोषजनक प्रमाण दे सके।

अलौकिककी स्थापनाके लिये मानवीय गवाही अपर्य्याप्त है। यदि संसारके समझदार लोगोंका अनुभव सर्वथा विपरीत है तो एक या बारह आदमियोंकी गवाहीका भी कोई मूल्य नहीं। यदि कोई पुस्तक जिसे करिश्मोंके बलपर प्रमाणित किया जाता है, सच्ची है, तो उसके इलहामी होने और न होनेसे कुछ अन्तर नहीं पड़ता; और यदि वह सत्य नहीं है, तो इलहाम उसके मूल्यमें कुछ भी वृद्धि नहीं कर सकता।

सच्ची बात यह है कि ईसाइयतने संभव है अनजानमें—असत्यको पुरस्कृत किया है। इसका आधार था अलौकिकता और अद्भुत-घटनाएँ। इसने तमाम ऐसे कथनोंका स्वागत किया जो इसके आधारको मजबूत बनानेके लिये उपयोगी हों। इसने उन इतिहास-लेखकोंपर सम्मानोंकी वर्षा कर दी जिन्होंने बदलेमें पन्नेके पन्ने बेहूदा और असंभव बातोंसे रँग डाले। इसके अपने भू-शास्त्री और ज्योतिषी रहे हैं, जिन्होंने बाईबलके अनुसार पृथ्वी और गृह-नक्षत्रोंकी रचना कर डाली। तलवार और आगके सहारे इसने

उन बहादुर और विचारवान् आदमियोंका विनाश कर दिया, जिन्होंने सच-सच कहा। यह खोज और तर्कका शत्रु रही है।

आज संसारकी बुद्धि करिश्मोंको माननेसे इन्कार करती है। अज्ञानकी भूमिमेंसे ही अलौकिकता जन्म ग्रहण करती है। ईसायइतकी नींव गड़बड़ा गई है। सारे भवनको गिरना ही चाहिये। जो कुछ प्रकृतिके अनुसार है वही सत्य हैं, करिश्में झूठ हैं।

मिथ्या विश्वास

मिथ्या विश्वास किसे कहते हैं?

प्रमाणके बावजूद अथवा बिना किसी प्रमाणके विश्वास करना। एक रहस्यको दूसरे रहस्यसे समझाना। यह विश्वास करना कि संसारमें जो कुछ होता है वह यों ही अकस्मात् होता है। कार्य और कारणके वास्तविक सम्बन्धकी अवहेलना करना। यह मानना कि प्रकृति किसी विचार, उद्देश्य अथवा योजनाके अनुसार कार्य करती है। यह मानना कि चेतनसे जड़की उत्पत्ति हुई है और उसीका उसपर अधिकार है। पदार्थसे पृथक् शक्तिमें अथवा शक्तिविरहित पदार्थमें विश्वास करना। चमत्कारों, मन्त्रों, जादू-टोनों, स्वप्नों और भविष्यद्-वाणियोंमें विश्वास करना। प्रकृतिसे परे किसी शक्तिमें विश्वास करना।

मिथ्या-विश्वासकी नींवमें अज्ञान है। उसकी दीवारें अन्ध-श्रद्धासे बनी हैं; और उसका गुम्बद व्यर्थ आशासे। मिथ्या-विश्वास अज्ञानकी सन्तान और दुःख-दर्दकी माँ है।

लगभग हर मस्तिष्कको मिथ्या-विश्वास कुछ न कुछ मेघाच्छन्न अवश्य किए रहता है।

एक स्त्रीके हाथसे बरतन साफ करनेका कपड़ा गिर जाता है। वह बोल उठती है—कोई आ रहा है।

अधिकांश लोग स्वीकार करेंगे कि कपड़ेके गिरने और अतिथियोंके आनेमें

संबंध नहीं। जो कपड़ा गिरा है वह किसी अनुपस्थित व्यक्तिके मनमें यह इच्छा पैदा नहीं कर सकता कि उसे यात्रा करनी चाहिये और विशेष रूपसे उसी घरमें आना चाहिये जिस घरमें कपड़ा गिरा है। कपड़ेके गिरने और घटनामें किसी प्रकारका भी तो संबंध नहीं!

आदमी अपनी बाईं ओर नये चन्द्रमाको देखता है, और कह उठता है—यह अपशकुन है।

चन्द्रमाको दाईं या बाईं ओर देखना अथवा न देखना चन्द्रमापर किसी प्रकारका प्रभाव नहीं डाल सकता और उसके दिखाई देने अथवा न दिखाई देनेका पृथ्वीकी किसी चीजपर कोई असर नहीं पड़ सकता। निश्चयसे बाईं ओर दिखाई देनेका किसी चीजपर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ेगा। यदि चन्द्रमा दाईं ओर दिखाई दिया होता, तो भी प्रकृतिकी सभी वस्तुयें जैसीकी तैसी ही रहतीं। हम चन्द्रमाके बाईं ओर दिखाई देनेका देखनेवालेपर कोई बुरा प्रभाव पड़ता नहीं देखते।

एक लड़की एक फूलके पत्तोंको गिनती है—एक, वह आता है; दो, वह ठहरता है; तीन, वह चाहता है; चार, वह विवाह करता है; पाँच, वह चला जाता है।

निश्चयसे फूलके उगने और उसके पत्तोंकी संख्याको इस लड़कीके विवाहसे कुछ लेना-देना नहीं; और न कोई ऐसी प्रेरक शक्ति ही हो सकती है जिसने उस लड़कीसे वही पुष्प-विशेष चुनवाया। इसी प्रकार किसी सेबके बीजोंकी गिनतीसे किसी भी तरह यह निर्णय नहीं निकाला जा सकता कि किसी व्यक्तिका भविष्य सुख-पूर्ण होगा अथवा दुःख-पूर्ण।

हजारों लोग अच्छे-बुरे दिनोंमें, संख्याओंमें, चिह्नोंमें, तथा नगीनोंमें विश्वास करते हैं।

बहुत-से लोग शुक्रको एक खराब दिन समझते हैं—यात्रा आरम्भ करनेके लिये, शादी करनेके लिये, अथवा किसी काममें रुपया लगानेके लिये। इसका जो कारण बताया जाता है वह इतना ही कि शुक्र खराब दिन है।

यदि शुक्रके दिन समुद्र-यात्रा की जाय तो किसी दूसरे दिन यात्रा करनेकी अपेक्षा उसका समुद्री हवाओं अथवा लहरोंपर कोई खास असर नहीं

पड़ेगा। शुक्रके दिनको खराब दिन माननेका एक मात्र कारण यही है कि वह खराब दिन माना जाता है।

इसी प्रकार बहुत-से लोग यह मानते हैं कि तेरह जनोंका एक साथ मिलकर खाना खतरनाक है। यदि तेरह संख्या खतरनाक है, तो छब्बीस दुगुनी खतरनाक होनी चाहिये और बावन चौगुनी।

कहा जाता है कि तेरहमेंसे एक आदमी सालके अन्दर अवश्य मर जायगा। तेरह और प्रत्येक आदमीके ह्रासमें अथवा तेरह और प्रत्येक आदमीके रोगमें क्या सम्बन्ध है? यदि हम संख्याका ही ख्याल करें तो तेरहकी बजाय यदि चौदह आदमी एक साथ खायें तो इस बातकी अधिक सम्भावना है कि उनमेंसे एक एक सालमें मर जाय।

यदि नमककी बोतल गिर पड़े तो बहुत खराब है, किन्तु यदि सिरकेकी बोतल ढुलक जाय तो कुछ हर्ज नहीं! नमक इतना निष्ठुर और सिरका इतना क्षमा-शील क्यों है?

यदि सिनेमा-गृहमें प्रवेश करनेवाला पहला आदमी आँखका बैहंगा है, तो दर्शकोंकी संख्या कम रहेगी और तमाशा असफल रहेगा। किसी आदमीकी आँखका जनवरी फरवरी होना सिनेमा जानेवाले लोगोंकी इच्छामें परिवर्तन कैसे ले आता है, अथवा सिनेमा जानेवालोंकी संख्या बैहंगी आँखवालेको ही सर्वप्रथम कैसे भेज देती है? जहाँ तक हम देख सकते हैं इस तथाकथित कार्य-कारणमें किसी प्रकारका सम्बन्ध नहीं।

एक खास किसमका नगीना अँगूठीमें लगा रहनेसे आदमीके दुर्भाग्यका कारण होता है और दूसरा ख़ास किसमका आदमीके सौभाग्यका। ये पत्थर किस प्रकार आदमीके भविष्यको प्रभावित करते हैं और इनके कारण किस प्रकार आदमीके प्रयत्न विफल हो जा सकते हैं, कोई नहीं बता सकता।

इस प्रकार हज़ारों शकुन और अपशकुन हैं, भाग्य और दुर्भाग्यकी बातें हैं, किन्तु जो बुद्धिमान् हैं, जो विचारवान् हैं वे जानते हैं कि ये सभी बेहूदा मिथ्या-विश्वासके अतिरिक्त और कुछ नहीं।

अब हम दूसरी बात लें—

शताब्दियों तक यह विश्वास किया जाता रहा है कि सूर्य-ग्रहण और

चन्द्र-ग्रहण बीमारी और अकालके अग्र-सूचक हैं, और पुच्छल-तारे राजाओंकी मृत्यु, जातियोंके विनाश तथा युद्ध या प्लेगकी पूर्व-सूचना दे देते हैं। आकाशके दृश्य-विशेष हमारे पूर्वजोंके मनमें भयका संचार कर देते थे। वे अपने घुटनोंके बल झुककर प्रार्थनाओं और बलिदानोंके द्वारा उन खतरोंसे बचनेका भरसक प्रयत्न करते थे। जब वे आँखें बन्द करके दैवी सहायताके लिये प्रार्थना करते थे तो उनके चेहरे भयसे सफेद हो जाते थे। पादरी, जो परमात्मासे उतने ही कम या अधिक परिचित थे, जितने कि वे अब हैं, जानते थे कि सूर्य-ग्रहण तथा चन्द्र-ग्रहणका असली अर्थ क्या है, वे जानते थे कि परमात्माकी क्षमा-शीलता समाप्त-प्राय है, वे जानते थे कि अब परमात्मा अपनी क्रोधकी तलवारको तेज़ कर रहा है, और यदि लोग उससे अपनी रक्षा करना चाहते हैं, तो उसका केवल एक ही उपाय है कि वे पादरीकी आज्ञाओंका पालन करें, माला जपें और अपनी दक्षिणाको दुगुना कर दें।

भूकम्पों और झँझावातोंने पादरियोंकी पेटियोंको भर दिया। विपत्तियोंके बीच जो परम कंजूस था उसने भी अपने बटुवेको खोला। सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहणोंके अन्धकारमें चोरों और डाकुओंने अपनी लूटमें भगवानको हिस्सेदार बनाया। गरीब, ईमानदार तथा भोली लड़कियोंने, जब उन्हें याद आया कि वह प्रार्थना करना भूल गई थीं तो भगवानके हृदयको कठोर होनेसे बचानेके लिये अपनी थोड़ी-सी कमाई भी दे डाली।

अब हम जानते हैं कि आकाशके इन चिह्नोंको भी जातियों और व्यक्तियोंके भविष्यसे कुछ लेना देना नहीं। उन्हें जिस प्रकार दीमककी बाँबी, शहदकी मक्खियोंके छत्तों और कीड़े-मकोड़ोंके अण्डोंसे कुछ लेना देना नहीं, उसी प्रकार उन्हें आदमियोंसे भी कुछ लेना देना नहीं। अब हम जानते हैं कि यदि पृथिवीपर एक भी आदमी न होता, तो भी आकाशके वे चिह्न, ग्रहण और पुच्छल-तारे और गिरनेवाले तारोंका यही बरताव होता। अब हम जानते हैं कि ग्रहण निश्चित समयपर लगता है और ग्रहण लगनेका निश्चित समय पहलेसे जाना जा सकता है।

कुछ ही समय पहले यह विश्वास था कि कुछ बेजान वस्तुएँ

रोगियोंके रोग दूर करनेका काम करती हैं—धर्मात्माओंकी हड्डियाँ, गन्दे रहनेवाले महात्माओंके गन्दे कपड़ोंसे फाड़ गये चीथड़े, शहीदोंके बाल, ईसाको जिस सूलीपर चढ़ाया गया था उस सूलीके जीर्ण-शीर्ण लकड़ीके टुकड़े और जंग लगे हुए लोहेकी मेखें, महात्माओंके दाँत और नाखून और दूसरी हजार पवित्र चीजें।

एक पेटीको जिसमें हड्डियाँ, चीथड़े, लकड़ीका टुकड़ा अथवा कुछ पवित्र बाल रखे हों, चूमनेसे रोगियोंके रोग दूर हो जाते थे, शर्त यह कि चुम्बनके पहले या बाद उस पेटीमें 'चर्च' के लिये कुछ डाल अवश्य दिया जाय।

किसी रहस्यपूर्ण ढंगसे हड्डी, चीथड़े अथवा लकड़ीके टुकड़ेका गुण बक्समेंसे निकल कर श्रद्धावान् रोगीके शरीरमें पहुँच जाता था और भगवान्के नामपर भूत-प्रेतोंको भगा देता था जो कि वास्तविक बीमारी थे।

यह हड्डियों, चीथड़ों और पवित्र बातोंके सामर्थ्यमें विश्वास एक दूसरे विश्वासमेंसे पैदा हुआ था—भूत-प्रेतोंको ही तमाम रोगोंका जनक माननेके विश्वासमेंसे। पागलोंके सिर भूत-प्रेत आये हैं, ऐसा समझा जाता था और दिमागके रोगियोंके सिरपर शैतान चढ़ा है, समझा जाता था। संक्षेपमें हर मानवी-रोग नरककी शक्तियोंके द्वेषका परिणाम था। यह विश्वास लगभग सर्व-व्यापक था। हमारे समयमें भी करोड़ों आदमी पवित्र हड्डियोंमें विश्वास करते हैं!

लेकिन आज कोई भी समझदार आदमी भूत-प्रेतके अस्तित्वमें विश्वास नहीं करता और कोई समझदार आदमी यह नहीं मानता कि भूत-प्रेत बीमारी ला सकते हैं। इसीके परिणामस्वरूप कोई समझदार आदमी यह विश्वास भी नहीं करता कि पवित्र हड्डियाँ या चीथड़े, पवित्र बाल या लकड़ीके टुकड़े रोगको भगा सकते हैं अथवा रोगीके पीले चेहरेपर स्वास्थ्यकी सुर्खी ला सकते हैं।

आजका समझदार आदमी जानता है कि एक महात्माकी हड्डीमें एक पशुकी हड्डीकी अपेक्षा कुछ विशेषता नहीं होती, एक भीख माँगनेवालेसे प्राप्त चीथड़ेमें और एक महात्माके वस्त्र-खण्डमें कुछ अन्तर नहीं और एक घोड़ेका बाल किसी रोगीके रोगको उतनी ही जल्दी दूर कर सकता है जितनी ज़ल्दी एक धार्मिक शहीदका बाल। अब हम जानते हैं कि जितने भी धार्मिक अवशेष हैं, वे सभी धार्मिक बेहूदगियाँ हैं, और जो लोग उनका

उपयोग करते हैं, वे प्रायः बेईमान हैं और जो उनपर विश्वास करते हैं वे लगभग जड़-भरत हैं।

यह तावीज़ों, मन्त्रों-तन्त्रों तथा भूतों-प्रेतोंमें विश्वास सीधा सादा मिथ्या-विश्वास है।

हमारे पूर्वज इन धार्मिक अवशेषोंको रोगोंको भगा सकनेवाली ओषधियाँ नहीं मानते थे। वे मानते थे कि भूत-प्रेत आदि पवित्र-वस्तुओंसे भयभीत रहते हैं। एक महात्माकी हड्डी उन्हें भगा देती है, वास्तविक क्रासका एक टुकड़ा उन्हें डरा देता है और जब किसी आदमीपर पवित्र अभिमन्त्रित जलका सिंचन कर दिया जाता है तो वे तुरन्त उसके घरकी सीमासे बाहर चले जाते हैं। इस प्रकार ये भूत-प्रेत धार्मिक घंटियोंकी आवाज़से, पवित्र मोम-बत्तियोंके प्रकाशसे और सबसे बढ़ कर पवित्र ' क्रास ' से भीयभीत होते हैं।

उन दिनों पुरोहित-पादरी रुपयेके लिये मछुए थे और इन ' पवित्र ' अवशेषोंको वे मछली पकड़नेके काँटेपर लगाये गये मांसके टुकड़ेकी तरह उपयोगमें लाते थे।

२

अब एक कदम आगे चलें—

यह भूत-प्रेत और शैतानके अस्तित्वमें विश्वास एक दूसरे मिथ्या-विश्वासका आधार बन गया—जादू-टोनेमें विश्वास।

लोगोंका यह विश्वास था कि शैतान किसीकी जानके बदलेमें कुछ चीज़ें दे सकता है—बूढ़ेको तरुणाई, शत्रुसे बदला, धन और पद। जीवनकी सभी अच्छी चीजोंपर शैतानका अधिकार है। यदि कोई शैतानके आकर्षणोंसे बचा रहे तो उसे परलोकमें लाभ होता था, किन्तु शैतान इसी लोकमें पुरस्कृत करता था। इस जादू-टोनेमें विश्वासके कारण संसारको कितना कष्ट भुगतना पड़ा, इसे कोई भी अपनी कल्पनाद्वारा चित्रित नहीं कर सकता।

ज़रा उन दिनोंकी कल्पना करो जब प्रत्येक घर मिथ्या-विश्वास और भयसे भरा था, जब दोषारोपणका मतलब निश्चित रूपसे दण्डित होना होता था,

जब निरपराधी बननेके प्रयत्नका मतलब अपराधकी स्वीकृति लिया जाता था, और जब ईसाइयतका दिमाग ही खराब था।

अब हम ये जानते हैं कि जितने भी कष्ट सहे गये वे सभी मिथ्या-विश्वासका परिणाम थे। अब हम जानते हैं कि जितना भी दुःख-दर्द झेला गया वह अज्ञानसे ही पैदा हुआ।

एक कदम आगे चलें—

हमारे पूर्वज चमत्कारोंमें विश्वास करते थे। घटनाओंके कोई प्राकृतिक कारण नहीं होते थे। एक शैतानने कुछ चाहा और वह हो गया। जिस आदमीने अपने सिरपर शैतानको उठा लिया, उसके कुछ हाथ पैर हिलानेसे, चन्द विचित्र शब्द उच्चारण करने मात्रसे ही कोई घटना घट जाती थी। प्रकृतिक कारणोंमें किसीका विश्वास ही नहीं था। आधार ही नहीं था—तर्कने तख्त खाली कर दिया था। अन्ध विश्वासने झूठको वाणी और पर दे दिये थे, जब कि गूँगी और लँगड़ी वास्तविक सचाइयाँ पीछे रह गईं—न उनकी ओर किसीने ध्यान दिया, न उनका किसीने लेखा-जोखा रखा।

चमत्कार क्या है ?

प्रकृतिके स्वामी द्वारा प्रकृति-नियमसे असम्बन्धित किसी भी बातका किया जाना। यही चमत्कारकी एकमात्र सच्ची परिभाषा है।

यदि कोई आदमी एक ऐसा संपूर्ण वृत्त खींच सके जिसका व्यास उसकी परिधिका ठीक आधा हो तो यह रेखा-गणित शास्त्रका एक चमत्कार होगा। यदि कोई आदमी चार दूना नव कर सके तो यह गणितका चमत्कार होगा।

यदि कोई आदमी ऐसा कर सके कि एक पत्थर जब हवामें गिरे तो वह पहले सेकंडमें दस फुट, दूसरे सेकंडमें पच्चीस फुट और फिर तीसरे सेकंडमें पाँच फुट गिरे, तो यह भौतिक-विज्ञानका चमत्कार होगा। यदि कोई आदमी हैड्रोजन, ऑक्सिजन, तथा नैट्रोजन गैसको मिलाकर सोना पैदा कर सके, तो यह रसायन-शास्त्रका चमत्कार होगा। यदि कोई पादरी-पुरोहित अपने मत अथवा सिद्धांतको प्रमाणित कर सके तो यह धार्मिकताके संसारमें चमत्कार होगा। यदि देशकी पार्लियामेंट पचास सेंट चाँदीकी कीमत कानूनके बलपर एक डालर घोषित कर दे, तो यह एक आर्थिक चमत्कार होगा। एक ऐसा त्रिकोण

बनाना जिसकी चार रेखाएँ हों, एक बहुत ही अद्भुत चमत्कार होगा। यदि दर्पणके सामने खड़े होनेवाले मनुष्योंके चेहरे तो दर्पणमें दिखाई न दें और पीछे खड़े होनेवालोंके चेहरे दिखाई दें तो यह भी एक चमत्कार होगा। ऐसा करना कि मनुष्यकी प्रतिध्वनि उसके प्रश्नका उत्तर दे दे, तो यह भी एक चमत्कार होगा। दूसरे शब्दोंमें प्रकृति-नियमके विरुद्ध अथवा उसकी उपेक्षा करके किसी भी बातका करना एक चमत्कार दिखाना है।

अब, प्रकृतिकी एकरूपतामें हमारा विश्वास है। सभी चीजोंमें जो क्रिया या प्रतिक्रिया होती है वह प्रकृतिके नियमके अनुसार होती है। एक जैसी परिस्थितिके बहुत करके एक जैसे ही परिणाम होते हैं। समान अवस्थाओंने हमेशा एक ही तरहकी चीज़ोंको जन्म दिया है, और वे आगे भी जन्म देंगी। हमारा विश्वास है कि सभी घटनाएँ प्रकृतिकी संतान हैं और उनमेंसे कोई भी संतानरहित नहीं मरती।

चमत्कार न केवल असंभव हैं किन्तु कोई भी विचारवान् उनके बारेमें विचार तक नहीं कर सकता।

अब कोई भी बुद्धिमान् आदमी इस बातमें विश्वास नहीं कर सकता कि कभी कोई चमत्कार किया गया है या भविष्यमें किया जा सकेगा।

चमत्कारोंमें विश्वासका पौधा अज्ञानकी भूमिमें ही पनपता है।

३

एक कदम और आगे चलें—

जब कि हमारे पूर्वजोंने मानवताके शत्रु असुरोंसे अन्धकारको पाट दिया, वे सुरों अर्थात् देवताओंमें भी विश्वास रखते थे। इन देवताओंका परमात्मासे वही सम्बन्ध था, जो दैत्योंका शैतानसे। ये देवता श्रद्धालुओंको मारके फन्दोंसे बचाते थे। जो मंत्र-तंत्र धारण करते थे, जो मालाओंका जप करते थे, जो व्रत रखते थे, ये देवता-गण उनकी सुरक्षाकी जिम्मेदारी अपने सिर लेते थे।

इन देवताओंकी कई श्रेणियाँ थी। कुछ कभी पुरुष या स्त्री रहे थे, कुछ कभी इस संसारमें नहीं रहे, कुछ आरम्भसे ही देवता रहे थे। कोई भी यह जाननेका दावा नहीं कर सकता कि ये देवतागण ठीक-ठीक क्या थे, किस

प्रकार एक स्थानसे दूसरे स्थानपर जाते थे और वे आदमियोंके दिमाग़को किस प्रकार प्रभावित करते अथवा उसपर अधिकार प्राप्त करते थे।

यह विश्वास किया जाता था कि सभी दुष्टात्माएँ शैतानके अधीन थीं और सभी देवगण परमात्माके अधीन। यह भी विश्वास किया जाता था कि वास्तवमें परमात्माका राज्य तो सभीपर है। स्वयं शैतान भी परमात्माके पुत्रोंमेंसे एक है।

हमारे पूर्वजोंका विश्वास था कि वे प्रार्थना, यज्ञ और व्रतोंके द्वारा इस परमात्मा और इन देवताओंकी सहायता प्राप्त कर सकते हैं। वे हर विषयमें तर्कसंगत नहीं थे। वे यह नहीं मानते थे कि शैतान ही सभी बुराइयोंकी जड़ है। वे समझते थे कि परमात्मा कभी कभी बाढ़, अकाल, प्लेग और भूकम्प आदि भेजकर उन्हें उनके अविश्वासके लिये दण्ड देता है। वे घुटने टेककर परमात्मासे प्रार्थना करते थे कि वह उनपर दया दिखाये। उनकी प्रार्थनाओंका कहीं कुछ असर न होता था। वे शून्य आकाशमें विलीन हो जाती थीं। बेचारे हमारे पूर्वज किसी विज्ञानके बारेमें कुछ भी न जानते थे। सभी घटनाओंकी तहमें सुरों अथवा असुरोंका हाथ था। उनके लिए किसी ऐसी चीज़का जिसे हम प्राकृतिक कारण कह सकते हैं कुछ अर्थ न था। सारा संसार एक युद्ध-क्षेत्र था, जिसमें स्वर्ग और नरककी सेनाएँ आपसमें लड़ती रहती थीं।

४

जो विचारवान् है, जो बुद्धिमान् है, वह शैतानके अस्तित्वमें विश्वास नहीं करता। वह इस बातका अनुभव करता है कि भूत-प्रेत और दुष्ट-आत्माएँ केवल अज्ञानी और भयभीत मनुष्योंके मानस-पुत्र हैं। वह जानता है कि किस प्रकार इन हानिकर कपोल-कल्पनाओंकी रचना हुई है। वह जानता है कि सभी धर्मोंमें इनका क्या स्थान रहा है। वह जानता है कि शताब्दियों-तक इन भूत-प्रेतों, इन दुष्ट-आत्माओंमें विश्वास करना सर्वव्यापक बात थी। वह जानता है कि इन बातोंमें पुरोहितका भी उतना पक्का विश्वास था, जितना किसानका। उन दिनों अत्यंत शिक्षित और अत्यन्त अशिक्षित मनुष्य समान रूपसे मूर्ख थे।

इन विश्वासोंके पीछे न कोई प्रमाण है और न रहा है। इस तरहके विश्वासोंका कोई आधार नहीं है। ग़लती, अतिशयोक्ति, और झूठ ही इस प्रकारके विश्वासोंके एकमात्र आधार रहे हैं। ग़लतियाँ स्वाभाविक थीं, अतिशयोक्तियाँ प्रायः अनजानेमें हुई थीं और जो मिथ्या-कथन थे वे सामान्यतया ईमानदारीसे बोले गये थे। इन ग़लतियों, इन अतिशयोक्तियों, इन झूठोंके पीछे चमत्कारका प्रेम था। इन्हें सुननेके लिये आश्चर्यके कान और आँखें खुली थीं और खुला था अज्ञानका मुँह।

५

पुराने धर्म-प्रधान दिनोंमें पृथ्वी चपटी मानी जाती थी—एक थालीकी तरह। ऊपर भगवानका घर था और ठीक नीचे शैतानका निवास। परमात्मा और उसके देवता मकानके ऊपरके तल्लेपर रहते थे, भूत, प्रेत और शैतान नीचेके तल्लेमें और मनुष्य बीचके दूसरे तल्लेपर।

उस समय वे जानते थे कि स्वर्ग ठीक कहाँपर है? उन्हें स्वर्गकी हा हा हू हू लगभग सुनाई देती थी। वे यह भी जानते थे कि नरक कहाँ है? उन्हें नरकका चीत्कार लगभग सुनाई देता था और गंधककी आगकी लपटोंकी गंध आती थी। ज्वालामुखी-पर्वतोंको वे धुआँ निकलनेकी चिमनियाँ समझते थे।

उन सुनहरे दिनोंमें पादरी पुरोहितोंको स्वर्ग-नरकके बारेमें पूरा पूरा ज्ञान था। वे जानते थे कि परमात्मा संसारके लोगोंको आशा दिलाकर, भय दिखाकर तथा पुरस्कार और दण्ड देकर उनपर शासन करता है। उसका पुरस्कार अनन्त होता है और उसी प्रकार दण्ड भी। परमात्माकी यह मंशा नहीं थी कि आदमीके दिमागका ऐसा विकास हो जाय कि वह उचित और अनुचितके भेदको समझ सके। उसने आदमीको केवल अज्ञानी बने रहने और आज्ञा-पालक बने रहनेकी शिक्षा दी। आज्ञा-पालनके बदलेमें उसने उन्हें अनन्त सुख देनेकी बात कही। उसे नम्र लोग—घुटने टेकनेवाले और रेंगनेवाले—प्रिय लगते थे। संदेह करनेवालों, विचारकों और दार्शनिकोंसे उसे घृणा थी। उनके लिये उसने सदाकालिक कारागृह बनाया जहाँ वह हमेशाके लिये अपनी घृणारूप क्षुधाको संतुष्ट कर सकें।

लेकिन वह स्वर्ग और नरक कहाँ है? अब हम जान गये हैं कि न तो स्वर्ग ही पृथ्वीके ठीक ऊपर है और न नरक ही पृथ्वीके ठीक नीचे। दूरवीक्षण यंत्रने प्राचीन स्वर्गको समाप्त कर दिया है और अपनी धुरीके गिर्द घूमनेवाली पृथ्वीने प्राचीन नरककी लपटोंको शांत कर दिया है। धार्मिकोंके यह देश, यह काल्पनिक संसार अदृश्य हो गये हैं। न तो कोई जानता है और न कोई यह जाननेका दावा ही करता है कि स्वर्ग कहाँ है? न तो कोई जानता है और न कोई यह जाननेका दावा ही करता है कि नरक कहाँ है? अब धार्मिक लोगोंने कहना आरंभ किया है कि नरक और स्वर्ग स्थानोंके नाम नहीं हैं; किन्तु वे मनकी अवस्थाओंके नाम हैं।

सुरों और असुरोंमें विश्वास लगभग हर जगह विद्यमान् रहा है। भलाईके पीछे आदमीने एक देवताकी कल्पना की, बुराईके पीछे एक दैत्यकी। स्वास्थ्य, सुदिन और अच्छी पैदावारके पीछे एक भला देवता था; रोग, दुर्भाग्य और मृत्युके पीछे एक दुष्ट दैत्य।

क्या सुरों और असुरोंके अस्तित्वका कोई प्रमाण है? परमात्मा और शैतान दोनोंके अस्तित्वका जो प्रमाण दिया जाता है, वह लगभग एक ही है। दोनोंका अस्तित्व ही एक अनुमान मात्र है, दोनों एक 'शायद' मात्र हैं। वे कभी किसीको दिखाई नहीं दिये, वे अदृश्य हैं; और उन्होंने किसी मनुष्यके इन्द्रिय-गोचर होनेका साहस नहीं किया। एक बुढ़ियाका यह कहना कि 'कोई न कोई शैतान होगा ही, क्यों कि जो तसवीरें शैतानकी शकल की बनाई जाती हैं वे ठीक उसीकी शकलकी होती हैं' जितना तर्क-पूर्ण है उतना ही तर्क-पूर्ण हमारे धर्मा-चार्योंका कथन होता है।

अब कोई समझदार आदमी किसी शैतानके अस्तित्वमें विश्वास नहीं करता, कोई उससे डरता नहीं। बहुत-से लोगोंने जो कुछ विचार करते हैं, अब साकार परमात्माकी बात कहनी छोड़ दी है और ईश्वरके कर्तृवादकी भी। अब वे अज्ञात और अनन्त-शक्ति शब्दोंका उपयोग करने लगे हैं!

जो पुरुष और स्त्रियाँ प्रमाणकी चिन्ता करती हैं, जो सत्य बात जानना चाहती हैं, उन्हें शकुनोंकी परवाह नहीं होती, चमत्कारोंकी परवाह नहीं होती, अच्छे तथा बुरे-दिनोंकी परवाह नहीं होती, जन्त्रों-मन्त्रोंकी परवाह नहीं होती,

चन्द्रग्रहण तथा सूर्यग्रहण आदिकी परवाह नही होती, अच्छी बुरी आत्माओंकी नहीं होती, शैतान और परमात्माकी परवाह नहीं होती। ऐसे लोग किसी सामान्य अथवा विशेष दैवी शक्तिमें विश्वास नहीं करते, जो अच्छे आदमियोंको बचाती है, रक्षा करती है और उनका पालन करती है तथा दुष्टोंको दण्ड देती है। वे यह विश्वास नहीं करते कि समस्त मानव-जातिके इतिहासमें कभी एक भी प्रार्थना स्वीकृत हुई है। वे मानते हैं कि जितने भी बलिदान दिये गये हैं सब व्यर्थ दिये गये हैं और जितनी भी सुगंधि जलाई गई है सब आकाशमें व्यर्थ उड़ गई है। वे यह नहीं मानते कि संसारकी उत्पत्ति और रचना आदमीके लिये हुई थी, ठीक वैसे ही जैसे वे यह नहीं मानते कि संसारकी उत्पत्ति और रचना कीड़ों-मकोड़ोंके लिये हुई थी। हर ओर एक योजना दिखाई देती है—भलाईके लिए योजना, बुराईके लिए योजना। हर ओर उपकार भी है, अपकार भी है—कोई किसीको बनाए रखनेके लिये प्रयत्नशील है, कोई किसीके विनाशमें रत है। प्रत्येक वस्तु मैत्री और शत्रुतासे घिरी हुई है—उस प्रेमसे जो रक्षा करता है और उस घृणासे जो मार डालती है। योजना, विकास, और विनाशमें समान रूपसे दिखाई देती है और दिखाई देती है सुख तथा दुःखमें। प्रकृति एक हाथसे निर्माण करती है, दूसरे हाथसे विनाश। उसके हाथमें तलवार और ढाल दोनों हैं। तमाम जीवन मृत्युकी ओर अग्रसर हो रहा है और तमाम मृत्यु वापिस जीवनकी ओर।

हम जीवन और मृत्युकी लहर और प्रवाहपर दृष्टि डालते हैं। यह वह महान् नाटक है जो हमेशा होता रहता है, जहाँ पात्र अपना अपना पार्ट करके अदृश्य हो जाते हैं; वह महान् नाटक, जिसमें ज्ञानी-अज्ञानी सभीको अपना पार्ट करना होता है, बिना किसी पूर्व अभ्यासके और विना नाटकके किसी कथानक अथवा उसके किसी उद्देश्यके ज्ञानके। दृश्य बदलता है, कुछ पात्र चले जाते हैं और दूसरे चले आते हैं। चारों ओर रहस्य ही रहस्य है। हम समझनेका प्रयत्न करते हैं तो देखते हैं कि एक बातकी व्याख्या दूसरीका खंडन करती है। एक परदा हटता है, उसीके ठीक पीछे दूसरा परदा है। सभी चीजें समान रूपसे आश्चर्य-कर हैं। पानीकी एक बूँद तमाम समुद्रों जैसी आश्चर्यकर है, बालूका एक कण समस्त संसारकी तरह; चित्रित परोंवाली एक तितली समस्त प्राणियोंकी तरह और एक अण्डा जिसमेंसे

जीवन विकसित हो जाता है आकाश-मण्डलके सारे तारोंके समान आश्चर्य-कर है।

मिट्टीमें लिपटा हुआ छोटेसे छोटा बीज बुद्धिमानसे बुद्धिमान् आदमीसे भी अपना रहस्य छिपाये रखता है। सारे संसारका ज्ञान घासके एक तिनकेकी व्याख्या नहीं कर सकता, छोटेसे छोटे पत्तेके जरासे हिलनेकी भी। इतना सब होनेपर भी पादरी, पोप और पुरोहित लोग, जो छोटीसे छोटी वस्तुके सामने गूँगे बने खड़े रहते हैं, संसारकी उत्पत्ति और विनाशके बारेमें सभी कुछ जानते हैं! वे उस परमात्माके बारेमें जिसने एक इच्छा मात्रसे सबको पैदा कर दिया सभी कुछ जानते हैं! वे उसकी योजना, उसके साधन और उसके अन्तिम उद्देश्यके बारेमें भी सब कुछ जानते हैं! उनपर सभी रहस्य प्रकट हैं! यदि प्रकट नहीं है तो केवल उन वस्तुओंका रहस्य जो सीधे इन्द्रियोंके स्पर्शमें आती हैं!

लेकिन ईमानदार आदमी जानकारीका झूठा दावा नहीं करते। वे खुले और सच्चे होते हैं। वे अपने अज्ञानको स्वीकार करते हैं और कहते हैं—हम नहीं जानते।

आखिर हम अपने अज्ञानको पूजें ही क्यों? हम अज्ञानके सामने घुटने क्यों टेकें? हम केवल एक अनुमानको दण्डवत् क्यों करें?

यदि परमात्मा है, तो हम यह कैसे जानते हैं कि वह शिव है और वह हमारी देख-भाल करता है? ईसाई कहते हैं कि उनका परमात्मा सदासे चला आया है, वह सदासे अनन्त, बुद्धिमान् और शिव रहा है तथा सदा रहेगा। यदि यह परमात्मा चाहता कि वह परमात्मा न बने तो क्या वह इससे बच सकता था? यदि वह शिव न होना चाहता, तो क्या शिव होनेसे बच सकता था? क्या वह बिना अपनी इच्छाके बुद्धिमान् और शिव था?

क्योंकि वह सदैवसे चला आया है, इसलिये उसकी उत्पत्ति नहीं हुई है। वह सभी कारणोंके मूलमें है। वह जो कुछ है, वही था, वही रहेगा, अपरि-वर्तित, अपरिवर्तनीय। उसे अपने चरित्रके निर्माण या विकासके लिये कुछ नहीं करना पड़ा, अपने मनके विकासके लिये भी। जो कुछ वह था, वही है, उसने कुछ भी प्रगति नहीं की। जो कुछ वह है, वही रहेगा, उसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। तो मैं जानना चाहता हूँ कि हम क्यों उसकी स्तुति

करें ? जो कुछ वह था और है, वह उससे भिन्न हो ही नहीं सकता, तब हम उससे प्रार्थना किस लिये करें ? वह बदल तो सकता ही नहीं।

इतना सब होनेपर भी ईसाई लोग परमात्मासे प्रार्थना करते हैं कि वह ग़लत बात न करे !

शैतानके विरुद्ध जो कमीनीसे कमीनी बात कही गई है, वह यह है कि वह आदमियोंको लोभान्वित करता है। और तब भी परमात्माके लिये अनादर-सूचक ढँगसे यह कहा गया है कि वह शैतानका अनुकरण न करे !

हमें लालचमें पड़नेसे बचा।

परमात्मा स्तुति क्यों चाहे ? वह वैसा ही है, जैसा था। उसने कभी कुछ सीखा नहीं; कभी कोई आत्म-त्याग नहीं किया, कभी लोभके चक्करमें नहीं पड़ा, उसे कभी भय अथवा आशाने स्पर्श नहीं किया, उसे कभी कोई इच्छा नहीं हुई। वह हमारी स्तुति क्यों चाहे ?

क्या कोई यह बात जानता है कि उस परमात्माका अस्तित्व है, जिसने न कभी कोई प्रार्थना सुनी और न कभी पूरी की ? क्या यह बात सिद्ध है कि वह संसारपर राज्य करता है, आदमियोंके मामलोंमें दखल देता है, भलोंकी रक्षा करता है और दुष्टोंको दण्ड देता है ? क्या मानवताके इतिहासमें इसका प्रमाण मिल सकता है ? यदि परमात्मा संसारपर शासन करता है तो हम उसे केवल भलाईका ही श्रेय क्यों दें और उसपर बुराईका दोषारोपण क्यों न करें ? इस परमात्माका औचित्य सिद्ध करनेके लिये हमें कहना होगा कि भलाई तो भलाई है ही, साथ ही बुराई भी भलाई है। यदि सभी कुछ इस परमात्माद्वारा किया जाता है तो हमें उसके कार्योंमें भेद नहीं करना चाहिये, उस अनन्त बुद्धिमान् और शक्तिशालीके कार्योंमें। यदि हम उसे सुन्दर सूर्य और खेतीके लिये धन्यवाद दें, तो हमें उसे प्लेग और अकालके लिये भी धन्यवाद देना चाहिये। यदि हम स्वतन्त्रताके लिये उसके कृतज्ञ हैं; तो गुलामको भी अपने दोनों जकड़े हुए हाथ उठाकर परमात्माकी पूजा करनी ही चाहिये कि वह बिना किसी मज़दूरीके पीठपर कोड़ोंकी मार खाता हुआ काम करता है। यदि हम विजयके लिये उसके कृतज्ञ हैं, तो हारके लिये भी हमें उसीका कृतज्ञ होना चाहिये।

सच्ची बात यह है कि अच्छी और बुरी आत्मायें—सुर तथा असुर—अनुभवकी सीमासे बाहरके प्राणी हैं, हमारी इन्द्रियोंकी सीमासे परेके, हमारे विचारकी सीमासे परेके, जहाँ तक कल्पना अधिकसे अधिक उड़ान ले सकती है उस सीमासे भी परेके।

आदमीको विचार करना चाहिये, उसे अपनी सभी इन्द्रियोंको काममें लाना चाहिये; उसे देख-भाल करनी चाहिये; उसे तर्क करना चाहिये। जो आदमी विचार नहीं कर सकता वह आदमीसे कुछ कम है, जो जान बूझकर विचार नहीं करता वह आत्मद्रोही है; जो आदमी विचार करनेसे डरता है वह मिथ्या-विश्वासका दास है।

६

मिथ्या-विश्वाससे हमारी क्या हानि होती है? पौराणिक गप्पों तथा दन्त-कथाओंमें विश्वास करनेसे हमारा क्या नुकसान होता है?

चिह्नों और चमत्कारोंमें विश्वास करनेसे, जादू-टोनोंमें विश्वास करनेसे, सुरों और असुरोंमें विश्वास करनेसे तथा स्वर्गों और नरकोंमें विश्वास करनेसे आदमी पागल हो जाता है और सारा संसार एक पागलखाना बन जाता है। इससे आदमीकी सारी निश्चयात्मिका बुद्धि नष्ट हो जाती है, उसका अनुभव एक जाल-मात्र रह जाता है, कार्य-कारणका संबंध अथवा प्रकृतिकी एकता नष्ट हो जाती है। इससे आदमी एक थरथर काँपनेवाला दास अथवा गुलाम बनकर रह जाता है। इस प्रकारके मिथ्या विश्वासोंमें ग्रसे रहनेपर प्रकृति प्रगतिके पथको आलोकित नहीं करती। प्रकृति अदृश्य-शक्तियोंके हाथका खिलौना बन जाती है। कारण किसी कार्यको जन्म नहीं देते और कार्य अपने स्वाभाविक कारणोंसे सर्वथा मुक्त हो जाते हैं। आधार लुप्त हो जाता है। गुणों, संबंधों अथवा परिणामोंमें किसी प्रकारकी एकसूत्रता नहीं रह जाती। तर्क सिंहासन-च्युत हो जाता है और उसके स्थानपर मिथ्या-विश्वासका राज्याभिषेक होता है।

दिल पत्थर हो जाता है और दिमाग खोखला।

अदृश्यकी सुरक्षा प्राप्त करनेके निष्फल प्रयत्नमें आदमीकी शक्तियोंका अप-व्यय होने लगता है। कार्य, खोज, मानसिक परिश्रम, निरीक्षण और अनुभवका

स्थान अंध-विश्वास, रीति-रिवाज, पूजा, बलिदान और प्रार्थना जैसी चीजें ले लेती हैं। प्रगति असंभव हो जाती है।

मिथ्या-विश्वास स्वतंत्रताका शत्रु है और सदैव रहेगा।

मिथ्या-विश्वासने तमाम देवताओंको, तमाम शैतानों और भूत-प्रेतोंको तथा तमाम दैत्यों और राक्षसोंको जन्म दिया है। मिथ्या-विश्वासने हमें भविष्यवक्ता और पैगम्बर दिये, आकाशको चमत्कारोंसे भर दिया, कार्य-कारणकी कड़ीको तोड़ दिया और मानवताके इतिहासको झूठोंसे भर दिया। मिथ्या-विश्वासने सारे पोपों और पादरियोंको जन्म दिया। सारे साधुओं और साध्वियोंका निर्माण किया। मिथ्या विश्वासने आदमियोंको पशुओं और पत्थरोंके सामने घुटनोंके बल झुकाया, उनसे साँपों और वृक्षोंकी पूजा कराई, उनका धन और श्रम ठग लिया और आदमियोंसे उनके अपने बच्चोंतककी बलि दिलवाई। मिथ्या विश्वासने तमाम मंदिरों, मसजिदों तथा गिरजाघरोंका निर्माण किया। संसारको मंत्रों और तावीज़ोंसे भर दिया। मिथ्या-विश्वासने दूसरोंको अत्यन्त पीड़ा पहुँचानेकी पद्धतियोंका आविष्कार किया, लाखों आदमियोंको आगकी बलि चढ़ाया। मिथ्या विश्वास प्रलापको प्रतिभा समझ बैठा और पागलोंके बकवासको भविष्यद्वाणियाँ। मिथ्या विश्वासने सदाचारियोंको जेलमें डाला, विचारकोंको पीड़ा पहुँचाई, वीरोंको मार डाला और वाणीकी स्वतन्त्रताको सर्वथा नष्ट कर दिया। मिथ्या विश्वासने हमें सब प्रार्थनायें सिखाईं, हमें सब दण्डवत् प्रणाम सिखाये, हमें आत्म-घृणाका पाठ पढाया, जीवनके आनन्दोंसे मुँह मोड़ना, काय-क्लेश, धूल-लपेटना, स्त्री तथा बच्चोंको छोड़ जाना, अपने मानव बन्धुओंसे दूर दूर भागना और व्यर्थके आत्म-पीड़नमें जीवन बिताना सिखाया। मिथ्या विश्वासने हमें मानव-प्रेमको नीचेका दर्जा देना सिखाया, उसने सिखाया कि साधु और साध्वियाँ माता-पितासे भी अधिक पवित्र होती हैं, विश्वास वास्तविकतासे बढ़कर है, अन्धविश्वास स्वर्गका रास्ता है, सन्देह करनेसे नरक जाना होता है, विश्वास ज्ञानसे बढ़कर है और किसी बातके प्रमाणकी खोज करना परमात्माका अपमान करना है। मिथ्या विश्वास उन्नतिका बैरी, शिक्षाका शत्रु और स्वतन्त्रताका हत्यारा है, रहा है और सदैव रहेगा। यह अज्ञातके लिये

ज्ञातकी, भविष्यके लिये वर्तमानकी और किसी भावी काल्पनिक संसारके लिये इस वास्तविक संसारकी बलि दे देता है। इसने हमें एक स्वार्थ-भरा स्वर्ग दिया है, बदलेकी अनन्त भावनावाला नरक; इसने संसारको घृणा, युद्ध और अपराधोंसे भर दिया है। सारे संसारमें मिथ्या विश्वास ही विज्ञानका एक मात्र शत्रु है।

इस राक्षसने जातियों और नसलोंको तबाह कर दिया है। लगभग दो हजार वर्ष तक परमात्माका यह एजेंट इटलीमें रहा। वह देश मठों, गिरजों और ईसाई साधुओं तथा साध्वियोंके निवास-स्थानोंसे भरा था—सभी नमूनेके पादरी और संत महात्मा वहाँ विद्यमान् थे। शताब्दियोंतक इटली श्रद्धालुओंके धनसे माला-माल होता रहा। सभी सड़कें रोमकी ओर जाती थीं और वे सभी सड़कें भेंटें लेकर चलनेवाले यात्रियोंसे भरी रहती थीं। इस सबके बावजूद इटली लगातार पतनकी सड़कपर अग्रसर हुआ, और मर गया। वह इस समय सदाके लिये अपनी कब्रमें होता यदि कावूर, मैज़िनी और गैरीवाल्डी सदृश महापुरुषोंने उसे न बचा लिया होता। उसकी दरिद्रता और कष्टोंकी सारी जिम्मेदारी इन परमात्माके एजेण्टों, रोमन-कैथलिक पादरियोंपर है। उसमें जो जीवन है उसका श्रेय मिथ्या-विश्वासके शत्रुओंको है।

एक समय था जब आधी दुनियापर स्पेनका राज्य था और संसारके सारे चाँदी-सोनेपर उसका अधिकार था। उस समय सभी जातियाँ मिथ्याविश्वासकी अँधेरी दुनियामें रहती थीं। उस समय संसारपर पण्डे-पुरोहितोंका शासन था। स्पेन अपने धार्मिक विश्वासोंसे चिपका रहा। कुछ जातियोंने सोचना विचारना आरम्भ किया, किन्तु स्पेन विश्वासी बना रहा। कुछ देशोंमें पादरियों-पुरोहितोंके हाथमेंसे शक्ति जाती रही, किन्तु स्पेनमें नहीं। सिंहासनकी बागडोर पादरीके हाथमें थी। कुछ देशोंमें लोगोंने विज्ञानमें दिलचस्पी लेनी आरम्भ की, किन्तु स्पेनमें नहीं। स्पेन माला जपता रहा और प्रार्थनायें करता रहा। स्पेन अपनी आत्माकी रक्षा करनेमें व्यस्त था। अपने उत्साहमें उसने अपने आपको नष्ट कर डाला। उसे अलौकिकतापर विश्वास था; ज्ञानपर नहीं, मिथ्या-विश्वासपर। उसकी प्रार्थनायें कभी स्वीकृत नहीं हुई। कुछ देशोंके लिये सूर्य उदय होने जा रहा था, किन्तु, स्पेन प्रसन्नतापूर्वक अन्धकारमें ही

रहा। जिन आदमियोंने जरा भी विचार करनेका प्रयत्न किया, उन्हें उसने तलवार और आगकी बलि चढ़ा दिया। दूसरी जातियाँ महान् हो गईं, जब कि स्पेनका ह्रास हुआ। दिन प्रति दिन उसकी शक्ति क्षीण होती गई, किन्तु उसकी श्रद्धा बढ़ती गई। एक एक करके उसके उपनिवेश उसके हाथसे निकल गये, किन्तु उसने अपनी श्रद्धाको बनाये रखा। उसने अपना धन मिथ्या विश्वासोंको सौंप दिया, दिमाग़ पादरियोंको; किन्तु अपनी मालाको हाथसे नहीं छोड़ा। कुछ ही समय पहले उसने अपने भगवान् और पादरियोंके भरोसे, मन्त्रों और तावीजोंके पीछे, अभिषिक्त पानी और क्रासके सच्चे टुकड़ोंके भरोसे महान्-प्रजातन्त्रके विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया था। बड़े पादरियोंने उसकी सेनाको आशीर्वाद दिये, उसके जहाजोंको पवित्र जलसे अभिषिक्त किया, तो भी उसकी सेनायें पराजित हुईं और पकड़ी गईं। उसके जहाज जला डाले गये। तब अपनी असहाय अवस्थामें उसे शान्तिके लिये प्रार्थना करनी पड़ी। किन्तु उसकी श्रद्धा बनी है, उसका मिथ्या विश्वास दूर नहीं हुआ। इस तरह बेचारा स्पेन श्रद्धाकी बलि चढ़ गया! मज़हबका शिकार हो गया!

दयनीय पुर्तगाल, शनैः शनैः मर रहा है, दिन प्रति दिन दरिद्र होता जा रहा है, किन्तु श्रद्धासे चिपटा हुआ है। उसकी प्रार्थनायें कभी पूरी नहीं होतीं, किन्तु उसका प्रार्थनायें करना जारी है। आस्ट्रिया एक प्रकारसे समाप्त ही हो गया, मिथ्या विश्वासोंका शिकार जर्मनी भी अन्धकारकी ओर अग्रसर है। परमात्माने उसके कैसरको सिंहासनारूढ़ किया। जनताको उसकी आज्ञाओंका पालन करना ही होगा। दार्शनिक और वैज्ञानिक घुटने टेकते हैं और उस दैवी शासकके हाथकी कठपुतली बन जाते हैं!

७

जो प्रकृतिसे परेकी किसी शक्तिमें विश्वास करते हैं, किसी परमात्मामें विश्वास करते हैं, उनके पास ईश्वरीय ग्रन्थ रहते हैं। इन पुस्तकोंमें परम सत्य मात्र माना जाता है। इनपर विश्वास करना ही चाहिये। जो इनपर विश्वास नहीं करता उसे अनन्त-वेदनाका दण्ड भुगतना पड़ेगा। ये पुस्तकें मानवी-तर्कको अपील नहीं करतीं। ये मानवी-तर्कसे परे हैं। आदमी जिन्हें

वास्तविक घटनायें कहते हैं, उनकी इन्हें कोई परवाह नहीं। जिन बातोंका इन पुस्तकोंसे मेल नहीं बैठता, वे सब ग़लत हैं। ये पुस्तकें मानवी अनुभवसे परे हैं, मानवी-तर्कसे स्वतन्त्र हैं।

हमारी इलहामी किताब बाइबल कहलाती है। जो आदमी इस पुस्तकमें परस्पर-विरोध, ग़लतियाँ और प्रक्षिप्त अंश खोजनेकी दृष्टिसे इसे पढ़ता है, वह अपनी मुक्तिको खतरेमें डालता है। जब वह पढ़ता है, उस समय न उसे सोचनेका अधिकार है, न तर्क करनेका। उसका एकमात्र कर्तव्य है विश्वास करना।

लाखों-करोड़ों आदमियोंने इस पुस्तकके अध्ययनमें, इसके विरोधोंका मेल बैठानेके प्रयत्नमें, इसकी अस्पष्ट तथा बेहूदा बातोंको सार्थक सिद्ध करनेके प्रयत्नमें अपना जीवन नष्ट कर दिया। ऐसा करते हुए उन्होंने प्रायः हर अपराध और हर क्रूर कर्मको उचित सिद्ध किया है। इसकी मूर्खताओंमें उन्हें सूक्ष्मतम बुद्धिके दर्शन हुए हैं। इन इलहामी-ग्रन्थोंको ही आधार मानकर सैकड़ों मत-मतान्तर बन गये हैं। शायद ही किन्हीं दो पाठकोंमें अर्थोंके विषयमें मतैक्य हो। हज़ारों लोगोंने बाइबलको मूल भाषामें पढ़नेके लिये हिब्रू और ग्रीकका अध्ययन किया है। जितना ही उन्होंने अध्ययन किया उतना ही उनका आपसका मतभेद बढ़ा। एक ही पुस्तकसे उन्होंने एक ओर यह सिद्ध किया कि सभी मनुष्य नरकगामी होंगे, दूसरी ओर यह सिद्ध किया कि सभीको स्वर्गगामी होना है; एक ओर यह सिद्ध किया कि गुलामीकी प्रथा ईश्वरीय-संस्था है, दूसरी ओर यह सिद्ध किया कि सभी मनुष्योंको स्वतन्त्र होना है; एक ओर यह सिद्ध किया कि बहु-पत्नी-विवाह ठीक है, दूसरी ओर यह सिद्ध किया कि किसी भी आदमीकी एकसे अधिक पत्नी नहीं होनीं चाहिये; एक ओर यह कि ईसाने एक सम्प्रदाय स्थापित किया, दूसरी ओर यह कि उसने कोई सम्प्रदाय स्थापित नहीं किया; एक ओर यह कि मरे हुए फिर जी उठेंगे, दूसरी ओर अब मृतोंका पुनर्जीवन न होगा; एक ओर ईसा फिर आयेगा, दूसरी ओर ईसा अब दुबारा नहीं आयेगा; एक ओर यह कि बाइबलमें जितने करिश्मोंका उल्लेख है वे सब वास्तवमें थे, दूसरी ओर उनमेंसे कुछ नहीं हुए थे क्योंकि वे अत्यन्त मूर्खतापूर्ण और बेहूदा हैं; एक

ओर यह कि तमाम बाइबल इलहामी है, दूसरी ओर यह कि उसका कुछ हिस्सा इलहामी नहीं है; एक ओर यह कि नास्तिकोंको मार डालना चाहिये—दूसरी ओर यह कि विरोधियोंका विरोध नहीं करना चाहिये; एक ओर यह कि ईमान न लानेवालोंकी हत्या करनी चाहिये, दूसरी ओर यह कि अपने शत्रुओंसे प्रेम करना चाहिये; एक ओर यह कि आदमीको कलका विचार नहीं करना चाहिये, दूसरी ओर यह कि जो अपनी घर-गृहस्थीकी चिन्ता नहीं करता वह एक नास्तिकसे भी निष्कृष्टतर है।

इन सब मतोंके समर्थनमें, इन सब विरोधी बातोंके समर्थनमें, हज़ारों ग्रन्थ लिखे गये, लाखों प्रवचन दिये गये, असंख्य तलवारें रक्तसे लाल हो गईं और जलती चिताओंकी आगसे हजारों रातें प्रकाशित हो उठीं।

हजारों भाष्यकारोंने सामान्य वाक्योंके अर्थोंको अस्पष्ट और गुह्य बना दिया; तिथियों, नामों, संख्याओं और वंशावलियों तकके आध्यात्मिक अर्थ करनेके प्रयत्न किये। उन्होंने कविताकी टाँग घसीटी, कथाओंको 'इतिहास' बना डाला और काल्पनिक बातोंको बेहूदा तथा असम्भव घटनाओंका रूप दे दिया। लाखों पुरोहितों और उपदेशकोंने इलहामी पुस्तकको अपनी व्याख्याओंसे और भी अधिक रहस्यपूर्ण बना दिया—मूर्खताकी बुद्धिमत्ता और बुद्धिमत्ताकी मूर्खता दिखाकर; निर्दयताको दयालुता और असम्भवको सम्भव सिद्ध करके।

बाइबलके भाष्यकारोंने बाइबलको मालिक और जनताको उसका गुलाम बना दिया। इस पुस्तकके द्वारा उन्होंने दिमाग़ी सचाईकी हत्या कर दी, आदमीके स्वाभाविक मनुष्यत्वको मार डाला। इस पुस्तकके द्वारा उन्होंने दयाको हृदयसे निकाल बाहर किया, न्याय तथा औचित्यकी तमाम धारणाओंको उलट-पलट दिया, आत्माको भयके कारागृहमें क़ैद कर डाला और ईमानदारीसे मनमें पैदा होनेवाले सन्देहको अपराध ठहरा दिया।

ज़रा सोचो, संसारने भयके कारण कितना कष्ट उठाया है! उन लाखों-करोड़ों आदमियोंकी बात सोचो जो भयके कारण पागल हो गये!

ज़रा सोचो, मृत्युके भयकी बात; अनन्त क्रोधकी बात; अनन्तकाल तक प्यासे मरनेकी बात; असीम पश्चात्ताप, रोना-धोना और सिसकियाँ भरनेकी बात; अनन्त पीड़ाके मारे चिल्लाने और कराहनेकी बात!

ज़रा उन हृदयोंकी बात सोचो जो पत्थर बन गये, जो टुकड़े टुकड़े हो गये; उन अत्याचारोंकी, उन पीड़ाओंकी जो सहन करनी पड़ीं; उन प्राणोंकी जिनमें अन्धकार छा गया !

इलहामी बाइबल ईसाइयतका सबसे बड़ा अभिशाप सिद्ध हुआ है। और जब तक उसे इलहामी माना जाता रहेगा तब तक वह वैसे ही बनी रहेगी।

८

आदमियोंने हमारे परमात्माको बनाया और असभ्य आदमियोंने उसे यथासामर्थ्य अच्छेसे अच्छा मूर्त-रूप देनेका प्रयत्न किया। उन्होंने हमारे परमात्माको कुछ कुछ अपने ही जैसा बनाया और उसे अपने राग-द्वेष तथा अपनी उचित-अनुचितकी धारणाओंसे लाद दिया।

जैसे जैसे आदमीने प्रगति की वैसे वैसे उसने अपने परमात्मामें परिवर्तन किया। उसने उसके हृदयमेंसे थोड़ी-सी निर्दयता निकाल ली और उसकी आँखोंमें थोड़ा-सा करुणाका प्रकाश भर दिया। जैसे जैसे आदमीने और उन्नति की उसका दृष्टिकोण और व्यापक हो गया, उसका मानसिक क्षितिज विस्तृत हो गया। उसने फिर अपने परमात्मामें परिवर्तन किया और उसे इस बार जितना सम्पूर्ण वह बना सकता था उतना सम्पूर्ण बनाया। यह सब होनेपर भी यह परमात्मा अपनेको बनानेवालोंके नमूनेपर ही बना। जैसे जैसे आदमी दयालु बना, उसने न्यायसे प्रेम करना सीखा, और जैसे जैसे उसके मस्तिष्कमें विकास हुआ, उसका आदर्श पवित्रतर और श्रेष्ठतर होता गया। इस प्रकार उसका परमात्मा अधिक दयालु तथा अधिक स्निग्ध प्रकृतिका हो गया।

अब हम अपने युगमें जिहोवासे आगे बढ़ गये हैं। अब वह सम्पूर्ण नहीं रहा। आजके धर्मोपदेशक जिहोवाकी नहीं किन्तु एक प्रेम-मूर्ति परमात्माकी बात करते हैं। उसे वे हमारा स्वामी, पिता, स्थायी मित्र और मानवताका विधाता कहते हैं। लेकिन जिस समय ये लोग इस प्रेम-मूर्ति परमात्माकी चर्चा करते हैं, उस समय भी आँधियाँ आती हैं, भूकम्प आते हैं, बाढ़ें आती

हैं, आकाशसे वज्रपात होता है और प्लेग और महामारियाँ अथक मृत्युकी पैदावार काटती रहती हैं।

अब वे हमें शिक्षा देते हैं कि सब कुछ अच्छेके लिये होता है, बुराई भी छिपी हुई भलाई ही होती है; कष्ट ही आदमीको मजबूत और सदाचारी बनाते हैं; और सुख तो आदमीकी कमज़ोरी तथा पतनका कारण होते हैं। यदि ऐसा है तो नरकमें पड़ी हुई आत्माओंका विकास होकर उन्हें महान् बन जाना चाहिये और जो स्वर्गमें हैं उन्हें सुकड़ कर छोटा हो जाना चाहिये।

लेकिन, हम जानते हैं कि भलाई भलाई होती है। हम जानते हैं कि भलाई बुराई नहीं होती और बुराई भलाई नहीं होती। हम जानते हैं कि प्रकाश अन्धकार नहीं है और अन्धकार प्रकाश नहीं है। लेकिन हमें यह नहीं लगता कि भलाई-बुराईकी योजना प्रकृतिसे परेके किसी परमात्माकी बनाई हुई है और वही इनका कारण है। हम दोनोंको आवश्यक मानते हैं। हम न धन्यवाद देते हैं और न अभिशाप देते हैं। हम जानते हैं कि कुछ दुःखसे बचा जा सकता है और सुखमें वृद्धि की जा सकती है। हम जानते हैं कि यह ज्ञानमें वृद्धि करनेसे, दिमागकी विकसित करनेसे हो सकता है।

जैसे जैसे ईसाइयोंने अपने परमात्मामें परिवर्तन किया है उसी प्रकार उन्होंने अपनी बाइबलको भी बदला है। जो अंश असम्भव और बेहूदा है, अत्याचार-पूर्ण तथा नृशंस है, वह अधिकांश एक ओर फेंक दिया गया है और हजारों आदमी अब इस प्रयत्नमें लगे हैं कि किसी न किसी तरह शेष इलहामी अंशको बचा लें। इसमें सन्देह नहीं कि जो कट्टर हैं उन्हें अब भी प्रत्येक शब्दका आग्रह है, वे मानते हैं कि बाइबलकी प्रत्येक पंक्ति सत्य है। वे शब्दोंका मक्खी-मार अर्थ करनेवाले हैं। उनके लिये बाइबलका अर्थ एकदम वही है जो उसके शब्दोंसे व्यक्त होता है। वे कोई व्याख्या नहीं चाहते। उन्हें किसी भाष्यकारकी कुछ परवाह नहीं। परस्पर-विरोधी बातोंसे उनकी श्रद्धामें कुछ अन्तर नहीं पड़ता, वे यह मानते ही नहीं कि बाइबलमें कहीं कोई परस्पर-विरोधी बात है। वे पवित्र ग्रन्थके प्रत्येक शब्दकी कसम खाते हैं और उसके जितने संकुचित अर्थ हो सकते हैं उतने संकुचित अर्थ करते हैं। वे उस मैनेजर-मकानकी तरह हैं जिसने एक आदमीको यह कहकर मकान किरायेपर

देनेसे इनकार कर दिया क्योंकि उसके यहाँ बच्चे हैं। उसे बताया गया कि किरायेदारके दोनों बच्चोंकी शादी हो चुकी है, और अब वे दूसरे शहरमें रहते हैं। उसका उत्तर था कि इससे कुछ अन्तर नहीं पड़ता, मुझे किसी ऐसे आदमीको मकान किरायेपर देनेकी आज्ञा नहीं है जिसके बच्चे हों।

सभी कट्टर ईसाई-पन्थ उन्नतिके मार्गकी बाधा हैं। प्रत्येक कट्टर मत एक बन्धन है, एक कारागार है। इलहामी किताबका प्रत्येक विश्वासी एक ऐसा दास है जो तर्कको उसके सिंहासनसे च्युत कर भयके सिरपर ताज रखता है।

तर्क दिमागका प्रकाश है, सूर्य है। यह दिमागको ठीक दिशा सुझानेवाला यन्त्र है, यह उत्तरी ध्रुव-तारा है, यह पर्वतकी वह ऊँची चोटी है जो सदा बादलोंसे ऊपर रहती है।

९

अन्धकारकी अनेक शताब्दियों तक ईसाइयतपर मज़हबका अधिकार रहा। मिथ्याविश्वास लगभग सर्व-व्यापी था। बीस हजारमेंसे एक भी आदमी न लिख सकता था, न पढ़ सकता था। इन शताब्दियोंमें आदमियोंकी पीठ ज्ञानके सूर्य्यकी ओर थी और उनका मुँह अज्ञान तथा मिथ्याविश्वासके अँधेरेकी ओर। उस समय न कोई प्रगति थी, न आविष्कार था। चारों ओर अत्याचार और पूजा-पाठ, उत्पीड़न और प्रार्थना। पादरी-पुरोहित विचार और खोजके शत्रु थे। वे चरवाहे थे और लोग उनकी भेड़ें। यह उनका काम था कि विचार और जिज्ञासाके भेड़ियोंसे अपनी भेड़ोंको बचायें। पर-लोकके मुकाबलेमें इस लोकका कुछ भी महत्त्व न था। इस जीवनके व्यतीत करनेका एक मात्र उद्देश्य था परलोककी तैयारी। लोगोंका धन और श्रम गिरजोंको बनाने तथा निकम्मे धार्मिक लोगोंके भरण-पोषणमें नष्ट होता था। ईसाइयतके इस अन्धकारपूर्ण युगमें, जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, मान-वताके कल्याणको दृष्टिमें रखकर एक भी आविष्कार नहीं हुआ, एक भी नई बातका पता नहीं लगाया गया। ईसाइयतकी सारी शक्ति परलोकसे सहायता प्राप्त करनेके व्यर्थके प्रयत्नमें नष्ट हुई।

शताब्दियों तक ईसाइयत इसी प्रयत्नमें लगी रही कि मुहम्मदके अनुयायियोंसे ईसाकी खाली क़ब्र छीनी जा सके । इस मूर्खताकी बेदीपर लाखों जानें बरबाद हो गईं । इतना होनेपर भी झूठकी सेना विजयी हुई । जो लोग ईसाका झंडा उठाये फिरते थे वे उसी प्रकार तितर-बितर हो गये जैसे आँधीके आगे सूखे पत्ते ।

मैं समझता हूँ, इन शताब्दियोंमें एक आविष्कार हुआ। कहा जाता है कि तेरहवीं शताब्दिमें रॉजर बैकन नामके एक ईसाई साधुने बारूदका आविष्कार किया। किन्तु यह आविष्कार अकेला था। हम इसका श्रेय ईसाइयतको नहीं दे सकते। कारण, बैकन एक नास्तिक था और वह इतना महान् अवश्य था कि सब चीज़ोंमें बुद्धिको ही निर्णायक मानता था। जैसा कि उन पुण्यदिनोंमें सभी बुद्धिमान् आदमियोंके साथ होता था, बैकनको भी पीड़ित किया गया और जेलमें डाला गया। ईसाइयत विजयी हुई। उसके हाथमें धर्म-दण्ड था और ऊँची टोपी। तो भी उसकी यह विजय ज़बर्दस्ती और ठगीकी विजय थी। उसीके पेटमें पराजयके बीज छिपे हुए थे। ईसाइयतने असम्भवको सम्भव बनानेका प्रयत्न किया। उसने चाहा कि सारा संसार एक-विश्वासका हो जाय, सभी दिमाग एक ही ढंगके हो जायँ और आदमीके व्यक्तित्वका सर्वथा नाश हो जाय। इस उद्देश्यकी सिद्धिके लिये उसने सभी चालबाजियोंका उपयोग किया, और लोगोंको हर प्रकारसे पीड़ित किया।

लेकिन, इस सबके बावजूद कुछ आदमी सोचने लगे । वे इस संसारके मामलोंमें दिलचस्पी लेने लगे—प्रकृतिके इस महान् नाटकमें। उन्होंने घटनेवाली घटनाओंके कारणोंकी, उनकी व्याख्याकी, खोज आरम्भ की। वे ईसाइयतकी स्थापनाओंसे संतुष्ट नहीं थे। इन चिन्तकोंने अपनी दृष्टि आकाशकी ओरसे हटा अपने चारों ओर घुमाई। वे इतने 'अनाध्यात्मवादी' अवश्य थे कि इसी लोकमें सुख-सुविधाकी इच्छा करें। वे दुनियाबी बन गये और बुद्धिमान् बन गये।

इसका क्या परिणाम हुआ? उन्होंने आविष्कार करना, पता लगाना, घटनाओंके आपसी सम्बन्धका अध्ययन करना प्रारम्भ किया। उन्होंने इस बातकी खोज की कि वे कौन-सी बातें हैं जो आदमीको सुखी बनाती हैं, वे कौनसे

साधन हैं, जो मानव-बन्धुओंका कल्याण करते हैं।

हिलाये-डुलाये जा सकनेवाले टाइपोंका आविष्कार हुआ, मूर लोगोंसे कागजका बनाना सीखा गया, पुस्तकें प्रकट हुईं और यह सम्भव हो गया कि प्रत्येक पीढ़ी अपने मानसिक धनकी विरासत अपनी अगली पीढ़ीके लिये छोड़ जा सके। इतिहासने दन्तकथाओं और गप्पोंका स्थान लेना आरम्भ किया। दूरवीक्षण-यन्त्रका आविष्कार हुआ। तारागणोंके पथकी खोज की गई और आदमी विश्वका नागरिक बना। वाष्प-इंजिनका निर्माण हुआ और अब यह वाष्प, यह महान् दास, लाखों-करोड़ों आदमियोंका काम करता है। जादूगरी और असम्भव बातें जाती रहीं और उनकी जगह रसायन-शास्त्रने, उपयोगी बातोंने ली। फलित-ज्योतिष गणित-ज्योतिष बन गया। केपलरने तीन महान नियमोंका पता लगाया। यह मानव-बुद्धिकी एक महान् विजय हुई। हमारे तारा-ग्रह एक कविता बन गये, एक संगीत हो गये। न्यूटनने हमें पृथ्वीके आकर्षण-सिद्धान्तको गणितकी भाषामें समझाया। हारवेने रक्त-प्रवाहका पता लगाया। ड्रेपरने उसका कारण खोज निकाला। जहाज़ोंने समुद्रोंको जीत लिया और ज़मीनपर रेलोंका जाल बिछ गया। गैससे घर और बाहर प्रकाशित हो गये। माचिसके आविष्कारसे आग मानवकी संगिनी बन गई। फोटो लेनेकी कलाकी जानकारी हुई। सूर्य एक कलाकार बन गया। तारों और समुद्री-तारोंका आविष्कार हुआ। बिजली विचारोंका वाहक बन गई और जातियाँ एक दूसरेकी पड़ौसी हो गईं। बेहोश करनेके साधनोंका पता लगा और आदमीकी वेदना गहरी-निद्रामें खो गई। शल्य-चिकित्सा एक विज्ञान बन गई। टेलीफोनका आविष्कार हुआ, वह टेलीफोन जो शब्द-तरंगोंको एक स्थानसे दूसरे स्थानपर ले जाता है और आदमीके कर्ण-रन्ध्रोंतक सुरक्षित पहुँचा देता है। और वह फोनोग्राफ, जो आदमीकी वाणीको चिह्नों और बिन्दियोंके रूपमें संरक्षित रखता है और हमें फिर वापस दे देता है।

तब बिजली आई, जो रातमें दिन भर देती है, और वे तमाम आश्चर्यकर मशीनें जो इस सूक्ष्म शक्तिका उपयोग करती हैं। यह वही शक्ति है जो वर्षा ऋतुके बादलोंमेंसे कूदकर नष्ट-भ्रष्ट करनेके लिये नीचे उतर आती है। महान् विचारकोंने शक्ति और जड़ पदार्थका अविनाशीपन सिद्ध करके दिखा दिया। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि जिसका नाश नहीं हो सकता वह कभी पैदा भी

नहीं हुआ होता। भूगर्भ-वेत्ताने थोड़ा-सा संसारके इतिहासको पढ़ा—वनस्पति-जीवन और पशु-जीवनकी कहानीको सुना। जीव-विज्ञानके ज्ञाताओंने जीवनकी प्राचीनताकी स्थापना की और धर्म-ग्रन्थोंके कथनोंको झूठा सिद्ध कर दिया। तब विकासका सिद्धान्त आया, योग्यतमके विजयी होनेका, प्राकृतिक चुनावका। हज़ारों रहस्योंकी व्याख्या हो गई। विज्ञानने मिथ्या-विश्वासोंके हाथका दण्ड छीन लिया। पेशियोंके सिद्धान्तका आविष्कार हुआ, गर्भविकास-शास्त्रका अध्ययन किया गया। अनुवीक्षण-यन्त्रने रोगके कीटाणुओंका पता लगाया और हमें प्लेगको रोकनेका ढंग सिखाया। ये महान् सिद्धान्त और असंख्य आविष्कार मानसिक स्वतन्त्रताकी ही सन्तान हैं।

१०

सब मिलाकर, हमारा ज्ञान कुछ नहींके ही बराबर है। जीवनके अन्धकारमें प्रकाशकी चन्द्र किरणें हैं। सम्भव है बरतन पोंछनेके कपड़ेका गिरना किसी आगन्तुककी पूर्व-सूचना हो, किन्तु हमारे पास इसका कोई प्रमाण नहीं। सम्भव है तेरह जनोंका एक साथ बैठकर खाना खतरनाक हो, किन्तु इसका हमारे पास कोई प्रमाण नहीं। सम्भव है किसी कुमारीके विवाह होने न होनेका किसी सेबके बीजों अथवा किसी फूलकी पत्तियोंसे संबंध हो, लेकिन हमारे पास इसका कोई प्रमाण नहीं। सम्भव है अँगूठीके कुछ नग पहननेवालेके लिये सौभाग्यका कारण हों और दूसरोंका पहनना हानि और मृत्युका कारण हो। सम्भव है बायें कन्धेपर चन्द्रमाका दर्शन दुर्भाग्यका ही द्योतक हो। सम्भव है पुरानी अस्थियोंमें, पवित्र चीथड़ों तथा बालोंमें, मूर्तियों और लकड़ीके टुकड़ोंमें तथा जंग खाई हुई मेख़ों और सूखे खूनमें रोगियोंको चँगा कर देनेकी कुछ शक्ति हो; किन्तु कठिनाई यह है कि हमारे पास इसका कोई प्रमाण नहीं। सम्भव है धूमकेतु, चन्द्र-ग्रहण तथा सूर्य-ग्रहण और पुच्छलतारे, राजाओंकी मृत्यु, जातियोंके विनाश और प्रेमके आगमनके पूर्व-सूचक हों, किन्तु हमारे पास इसका कोई प्रमाण नहीं। सम्भव है देवी-देवता आदमियोंपर आते ही हों, किन्तु हमारे पास इसका कोई प्रमाण नहीं। सम्भव है पुरानी और नई बाइबलमें जितने चमत्कारोंका उल्लेख है वे सभी हुए हों। सम्भव है पानीकी सुरा बन गई हो, रोटियाँ और मछलियाँ बढ़ गई हों, मर्दों और

औरतोंके सिरपर आये हुए देवी-देवता भगा दिये गये हों, मुँहमें धन लिये हुए मछलियाँ मिली हों, तथा मिट्टी और थूकसे अँधे आदमियोंकी आँखें बन गई हों। सम्भव है वचन-मात्रके प्रयोगसे रोगी अच्छे हो गये हों और कोढ़ियोंका कोढ़ जाता रहा हो, किन्तु हमारे पास इसका कोई प्रमाण नहीं।

इसी प्रकार कोई एक शैतान भी हो सकता है, जिसकी धूर्तता और शक्ति असीम ही हो, जिसके पास असंख्य छोटे शैतान हों, जिनका एक मात्र काम लोगोंको पापमें प्रवृत्त करना, उन्हें धर पकड़ना और उनकी आत्माओंको अनन्त काल तक आगकी लपटोंमें जलाना ही हो। यह सभी कुछ, जहाँ तक हम सोच सकते हैं, सम्भव है। किन्तु इतना हम जानते हैं कि कुछ अज्ञानी पादरी पुरोहितोंके कथनोंके सिवाय इनके अस्तित्वका हमारे पास और कोई प्रमाण नहीं।

यह भी सम्भव है कि कहीं कोई एक नरक है, जहाँ सारे राक्षस रहते हैं; एक ऐसा नरक जहाँ आगकी लपटें उन सब आदमियोंकी प्रतीक्षा कर रही हैं, जिनमें सोचने विचारने और अपने विचारोंको प्रकट करनेका साहस है, जो पुरोहितों और पवित्र धर्म-ग्रन्थोंपर ईमान नहीं ला सकते, जो बुद्धिद्वारा प्रशस्त किये गये मार्गपर चलना चाहते हैं, जो सज्जन और वीर हैं, किन्तु जिनमें अन्ध-विश्वास नहीं। यह सम्भव है, किन्तु मुझे यह कहते प्रसन्नता होती है कि हमारे पास इसका कोई प्रमाण नहीं।

इसी प्रकार कोई एक स्वर्ग भी हो सकता है, जहाँ भगवान् रहता है, जहाँ देवतागण गाते-बजाते इधर उधर बिचरते हैं और जो नरकमें पड़े हुए प्राणियोंकी दुःख-दर्द भरी चीख़-पुकारको आनन्दपूर्वक सुनते रहते हैं। लेकिन इसका भी हमारे पास कोई प्रमाण नहीं।

ये सब पागलोंके स्वप्न और कल्पनायें हैं।

प्रकृतिसे परे कोई एक शक्ति ऐसी हो सकती है, जो सभी चीज़ोंपर शासन करती है और उनका संचालन करती है; किन्तु इस प्रकारकी किसी भी शक्तिका अस्तित्व प्रमाणित नही हुआ।

जब आदमी चारों ओरसे जीवन और विचार, गति और पदार्थ, विकास और विनाश, जन्म और मृत्यु, सुख और दुःख तथा भले आदमियोंके कष्ट

पाने और पापियोंके मौज उड़ानेके रहस्योंसे घिरा हुआ है, तो जो ईमानदार और बुद्धिमान् आदमी है उसे मजबूर होकर यह कहना ही पड़ेगा, मैं नहीं जानता।

लेकिन हम निश्चयपूर्वक जानते हैं कि ये देवता और दैत्य, ये स्वर्ग और नरक किस प्रसार बनाये गये ? हम इलहामी ग्रन्थोंके इतिहाससे, धर्मोंकी उत्पत्तिके इतिहाससे परिचित हैं। हम जानते हैं कि किस प्रकार मिथ्या विश्वासके बीज बोये गये और किस प्रकार उसके पौधे बढ़े ? हम जानते हैं कि तमाम मिथ्या विश्वास, तमाम मत, तमाम मूर्खतापूर्ण बातें, तमाम ग़लतियाँ, तमाम अपराध और अत्याचार, तमाम पुण्य, तमाम पाप, तमाम आशायें, तमाम भय, तथा तमाम खोजें और आविष्कार प्राकृतिक ढंगसे ही उत्पन्न हुए हैं। बुद्धिके प्रकाशमें हम उपयोगीको हानिकारकसे और सत्यको मिथ्यासे पृथक् करते हैं।

हम अतीतसे परिचित हैं—उस रास्तेसे जिसपर मानव चल चुका है—उसकी गलतियोंसे, उसकी विजयोंसे। हम कुछ घटनाओंसे परिचित हैं, कुछ अंशोंसे; और हमारी जो कल्पना-शक्ति है, हमारे मनमें जो बैठा हुआ कलाकार है, उसने इन्ही घटनाओंको लेकर, इन्हीं खण्डोंको लेकर अतीतकी रचना कर डाली है। वही भवितव्यके पर्देपर भावी-घटनाओंको चित्रित करता है।

हम प्राकृतिकमें विश्वास करते हैं, कार्य-कारणकी अखण्डित और अखण्ड्य परम्परामें। हम प्रकृतिसे बाहर किसी भी चीजके अस्तित्वको स्वीकार नहीं करते। हम किसी ऐसे ईश्वरमें विश्वास नहीं करते जो धूप-बत्ती जलाने, दण्डवत्-प्रणाम करने, घण्टी बजाने, भजन गाने, माला जपने, प्रार्थनायें करने और व्रत रखनेसे प्रसन्न किया जा सकता है; किसी ऐसे ईश्वरमें जो श्रद्धा या भयके कारण की गई खुशामदका भाजन बनता है।

हम प्राकृतिकमें विश्वास करते हैं। हमें शैतानों, भूत-प्रेतों अथवा नरकोंका कोई भय नहीं। हमारा विश्वास है कि ये महात्मा, ये आकाशीय-शरीर, यह आत्माओंका शरीरी होना, ये सम्मोहन, ये भविष्य-वाणियाँ, ये दूसरोंके मनकी बात जान लेना, ये ईसाई-विज्ञान आदि जितनी बातें हैं, सब ठग-विद्या हैं। इनकी सचाईका समर्थन बहुत करके अयोग्य ईमानदार आदमियोंकी साक्षीसे

ही होता है। हमारा विश्वास है कि यह विद्या ईमानदारीके सोनेको ठगती है और पापपर पुण्यका पर्दा डालती है।

हम जानते हैं कि लाखों-करोड़ों आदमी जीवनकी समस्या सुलझानेके लिए, भाग्यकी परीक्षा करनेके लिए, और भविष्यके रहस्योंका पता लगानेके लिए असम्भवके पीछे दौड़ रहे हैं—प्रकृतिसे परेकी किसी शक्तिसे सहायता पानेके प्रयत्नमें संलग्न हैं। हम जानते हैं कि उनके सारे प्रयत्न बेकार हैं।

हम प्राकृतिकमें विश्वास करते हैं। हम घर और चूल्हेमें, स्त्री-बच्चों और मित्रोंमें--इस संसारकी वास्तविक चीज़ोंमें विश्वास करते हैं। हम वास्तविक घटनाओंमें, ज्ञानमें, मस्तिष्कके विकासमें विश्वास करते हैं। हम मिथ्या विश्वासको दूर फेंकते हैं और विज्ञानका स्वागत करते हैं। हम भुलावोंको, गलतियोंको, असत्यको दूर भगाते हैं और सत्यसे चिपटते हैं। हम अज्ञातको सिंहासनपर बिठाकर अपने अज्ञानके सिरपर ताज नहीं रखते। हम ज्ञानके सूर्यकी ओर पीठ करके अपनी छायाको परमात्मा समझनेकी गलती नहीं करते। हम अपना एक मालिक रचकर उसकी पहनाई हुई बेड़ियोंको सधन्यवाद धारण नहीं करते।

हम अपनेको गुलाम नहीं बनाते। हमें न किसीका नेता बनना है और न किसीका अनुयायी। हमारी कामना है कि प्रत्येक मानव अपने प्रति सच्चा हो, अपने आदर्शके प्रति सच्चा हो। उसे न लालचका लोभ हो और न धमकीकी परवाह। हम न पृथिवीपर ही किसी तानाशाहको चाहते हैं और न आकाशमें।

हम जानते हैं कि मिथ्या विश्वासोंने हममें भय उत्पन्न किया है, हमें निद्रालु बनाया है, हममें अन्ध-श्रद्धा और कट्टरता पैदा की है, हमें भिखारी और भिखमंगा बनाया है, हमें अत्याचार और प्रार्थनाओंका प्रसाद दिया है, हमें पवित्र और दरिद्र बनाया है, हमें साधु-सन्त और दास दिये हैं और दिये हैं रोग तथा मृत्यु।

हम जानते हैं कि जो कुछ हमारे पास मूल्यवान् है वह सब विज्ञानकी देन है। एकमात्र विज्ञान ही सभ्य बनानेवाला है। इसने गुलामोंको मुक्त किया है, नंगोंको कपड़े पहनाये हैं, भूखोंको भोजन दिया है, जीवनको लम्बा किया है। हमें चूल्होंवाले घर दिये हैं, चित्र दिये हैं, पुस्तकें दी हैं, जहाज़ दिये हैं,

रेलें दी हैं, तार दिये हैं, समुद्री तार दिये हैं और ऐसे एंजिन दिये हैं जो बिना थके असंख्य पहियोंको घुमाते रहते हैं।

विज्ञान ही वास्तविक मुक्तिदाता है। यह ईमानदारीको ढोंगसे अधिक महत्त्व देगा और दिमागी-सचाईको अन्ध-श्रद्धासे। यह उपयोगिताके धर्मकी शिक्षा देगा। यह कट्टरपनके सभी रूपोंको नष्ट कर देगा। यह विचार-हीन श्रद्धाकी अपेक्षा विचारपूर्ण जिज्ञासाको अधिक महत्त्व देगा। यह हमें पादरी-पुरोहितों, सिद्धान्तियों और साधु-सन्तोंके स्थानमें दार्शनिक, विचारक और स्वतन्त्र खोज करनेवाले देगा। यह दरिद्रता और अपराधोंका नाश कर देगा और इन सबसे बढ़कर महान्, ऊँची और श्रेष्ठ बात यह करेगा कि समस्त संसारको स्वतन्त्र कर देगा।

कौन - सा मार्ग ?

१

दो रास्ते हैं—प्राकृतिक और परा-प्रकृतिक।

एक मार्ग तो है जिस संसारमें हम जीते हैं, उस संसारके लिये जीनेका, अध्ययन और खोज द्वारा अपने दिमाग़को विकसित करनेका और आविष्कार-द्वारा प्राकृतिक शक्तियोंसे लाभ उठानेका जिससे हमें अच्छे घर मिल सकें, वस्त्र मिल सकें और भोजन मिल सके, जिससे हम कला और विज्ञानद्वारा दिमाग़की भूख मिटा सकें।

दूसरा मार्ग है उस संसारके लिये जीनेका जिसकी हम आशा लगाये रहते हैं, जिसके बारेमें हम कुछ नहीं जानते, उसके लिए वर्तमान-जीवनको बलि-दान करनेका, प्रार्थना और धार्मिक क्रिया-कलापोंद्वारा आकाशमें बादलोंसे ऊपर रहनेवाले किसीसे सहायता, किसीसे रक्षा प्राप्त करनेका।

एक मार्ग है विचार करनेका, खोज करनेका, आँख खोलकर देखनेका और तर्कके प्रकाशका अनुसरण करनेका।

दूसरा मार्ग है विश्वास करनेका, मान लेनेका, पीछे चलनेका, अपनी

इन्द्रियोंको अप्रामाणिक माननेका और ऐसे लोगोंके सामने सिर झुका देनेका जो निर्लज्जतापूर्वक यह कह सकते हैं कि हम सब कुछ जानते हैं।

एक मार्ग है अपने मानव-बन्धुओं—अपनी स्त्री और अपने बच्चोंके लिये जीनेका, जिन्हें हम प्यार करते हैं उन्हें सुखी बनानेका और जीवनके दुःखोंसे उनका बचाव करनेका।

दूसरा मार्ग है, भूतों-प्रेतों, जिनों और देवताओंके लिये जीनेका, इस आशासे कि वे परलोकमें इसका फल देंगे।

एक मार्ग है तर्कको सिंहासनारूढ करनेका और वास्तविक घटनाओंपर भरोसा करनेका।

दूसरा है अन्धश्रद्धाके सिरपर ताज रखनेका और विश्वासपर जीनेका।

एक मार्ग है भीतरी प्रकाशके अनुसार चलनेका, उस प्रदीपसे जो बुद्धिको प्रकाशित करता है, मार्ग प्रशस्त करनेका, साथ साथ स्पर्श, चक्षु, और श्रोत्र आदि इन्द्रियोंसे उस मार्गको कसौटीपर कसते रहनेका।

दूसरा मार्ग है उस पवित्र प्रदीपको बुझा देनेका और दूसरोंका अन्धा-अनुकरण करनेका।

एक मार्ग है ईमानदार आदमी बननेका, दूसरोंको अपने विचारोंसे परिचित करानेका, सीधे खड़े होनेका, निर्भय बननेका, काल्पनिक क्रासों और नरककी ओरसे लापरवाह रहनेका।

, दूसरा मार्ग है जमीनपर रेंगकर चलनेका, अपने साथ विश्वासघात करनेका और जिस स्वतन्त्रताका उपयोग करनेका तुममें साहस नहीं है, उससे दूसरोंको वंचित करनेका।

आप यह कल्पना न करें कि जो लोग आजतक दूसरे मार्गपर चलते रहे हैं, जिन्होंने गलत दिशा ग्रहण की है, उनसे मैं घृणा करता हूँ।

हमारे पूर्वजोंने जो कुछ वे कर सकते थे, उसमें अपनी ओरसे कुछ कसर नहीं रखी। वे प्रकृतिसे परेकी किसी शक्तिमें विश्वास करते थे। वे मानते थे कि बलिदानों और प्रार्थनाओंसे, व्रत रखने और विलाप करनेसे, वह शक्ति धूप, वर्षा और अच्छी पैदावार देगी—इस संसारमे दीर्घ आयु और दूसरेमें अनन्त आनन्द देगी। उनके लिये परमात्मा एक निरंकुश तानाशाह था

जो जलदी गुस्से होता और भयानकदण्ड देता था। वह ईर्षालु, अपने शत्रुओंसे घृणा करनेवाला और अपने स्नेह-भाजनोंके प्रति उदार था। वे एक शैतानमें भी विश्वास करते थे, जो शक्तिमें परमात्मासे कुछ ही कम था, किन्तु ठग-विद्यामें शायद उससे थोड़ा अधिक। इन दोनोंके बीचमें आदमीकी आत्माका वही हाल था जो बिल्लीके दोनों पंजोंके बीच बेचारे चूहेका।

इन दोनों भगवानोंसे आदमीको भय लगता था। हमारे पूर्वज न परमात्मासे प्यार ही प्यार करते थे और न शैतानसे घृणा ही घृणा। हाँ, वे डरते दोनोंसे थे। असलमें वे परलोकमें तो परमात्माके कृपा-भाजन बने रहना चाहते थे और इस लोकमें शैतानके। उनकी मान्यता थी कि प्रकृति उन्हीं दोनोंकी दासी है। उनकी समझमें बाढ़, तूफान, रोग, भूकम्प, आँधी दण्ड-स्वरूप भेजे जाते थे और सभी अच्छी चीज़ें पुरस्कारस्वरूप।

सभी कुछ परा-प्राकृतिक शक्तियोंके अधिकार और आदेशके अधीन था। सूर्य-ग्रहण और चन्द्र-ग्रहण लोगोंके पापोंके परिणाम समझे जाते थे और हर असाधारण घटना एक चमत्कार थी। पुराने समयमें सारी ईसाइयत एक पागलखाना थी, और उन्मत्त पादरी-पुरोहित उसके रखवाले। विज्ञान-का नाम न था। लोग न खोज करते थे, न विचार। वे केवल (भयसे) काँपते थे और विश्वास करते थे। अज्ञान और मिथ्या-विश्वासका ही ईसाई-संसारपर शासन था।

आखिरकार, कुछ लोग ऐसे हुए जिन्होंने आँख खोलकर देखना आरम्भ किया, सोचना-विचारना आरम्भ किया।

यह पता लगा कि चन्द्र-ग्रहण और सूर्य-ग्रहण निश्चित समयका अन्तर देकर होते हैं और उनके होनेका पहलेसे पता लग सकता है। इससे यह स्पष्ट हो गया कि आदमियोंके कर्तृत्व और सूर्य-ग्रहण तथा चन्द्र-ग्रहणका परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं। कुछ लोग यह सन्देह करने लगे कि भूकम्प और तूफान प्राकृतिक कारणोंसे होते हैं और उनका मनुष्योंके कर्मोंसे किसी तरह दूरका भी सम्बन्ध नहीं।

कुछ लोगोंने देवताओंके अस्तित्वमें सन्देह करना आरम्भ किया अथवा आदमियोंके कारोबारसे उनके किसी भी प्रकारके सम्बन्धमें। ज्योतिषके बारेमें, तारोंकी महान् संख्याके बारेमें, ग्रहमण्डलोंकी निश्चित और लगातार

गतिके बारेमें और यह कि उनमेंसे अनेक पृथ्वीसे बहुत बड़े हैं; पृथ्वीके बारेमें; चीज़ोंके क्रमविकास, पौधोंकी वृद्धि और उनके वर्गीकरणके बारेमें, द्वीपों और महाद्वीपोंके निर्माणके बारेमें, अग्नि, जल और वायुने असंख्य शताब्दियोंमें उनके निर्माणमें जो हिस्सा लिया है उसके बारेमें, तथा जीवनमात्रके परस्पर सम्बन्धित होनेके बारेमें जानकारी प्राप्त करके; सूर्यके नक्षत्र-मण्डलमें पृथ्वीका स्थान निश्चित करके; तजर्बों और खोजके द्वारा रसायन-शास्त्रके कुछ रहस्योंका उद्घाटन करके; छापेखानेके आविष्कारद्वारा बातों, सिद्धान्तों और विचारोंको सुरक्षित रखकर तथा उनका प्रचार करके वे मिथ्या-विश्वासकी कुछ कड़ियोंको तोड़ने; प्रकृतिसे ऊपरकी किसी शक्तिके अधिकारको कुछ ढीला करने तथा ज्ञानके सूर्यकी ओर अपना मुँह करनेमें सफल हुए। शनैः शनैः खोजियों और विचारकोंकी संख्या बढ़ी। शनैः शनैः वास्तविक बातोंका संग्रह हुआ, विज्ञान प्रकट हुए, पुराने विश्वास थोड़े बेहूदा प्रतीत होने लगे और प्रकृतिसे ऊपरकी शक्ति कुछ पीछे हटी तथा उसने मनुष्योंके कारोबारमें दखल देना बन्द किया।

स्कूलोंकी स्थापना हुई, बच्चोंको शिक्षा दी गई, पुस्तकें छापी गईं, और विचारकोंकी वृद्धि हुई। दिन प्रति दिन प्रकृतिसे परेकी किसी शक्तिमें विश्वास घटता गया, और दिन प्रति दिन आदमीका इस बातमें विश्वास बढ़ता गया कि वह स्वयं अपना रक्षक और भाग्य-विधाता है। असभ्यता और मिथ्या-विश्वासके अन्धकारमेंसे प्रकृतिका अरुणोदय हुआ। दिमागको स्वतन्त्रताकी हवा लगी और आदमी अपनी शक्तिके स्वप्न देखने लगा। चारों ओर खोज, आविष्कार और साहसपूर्ण विचार दिखाई देने लगे। ईसाइयतने विज्ञानके मित्रोंको अपना शत्रु समझना आरम्भ किया। सिद्धान्तियोंने ज़ंजीरों और चिताओंका सहारा लिया—लोगोंके अङ्ग भङ्ग करने और उत्पीड़नके लिये।

विचारकोंको नास्तिक और अनीश्वरवादी कहकर उनकी निंदा की गई। उन्हें शैतानके बच्चे और ईसाको बदनाम करनेवाले कहा गया। मिथ्या विश्वासियोंके तमाम अज्ञान, ईर्षा और जलनको उत्तेजित किया गया। सभी खोज और विचारका नाश करनेके लिये एकत्रित हो गये। शताब्दियों तक

यह संघर्ष जारी रहा। परा-प्राकृतिकके विश्वासियोंने कोई ऐसा अत्याचार न था, जो न किया हो, कोई ऐसा पाप न था जो न किया हो। किन्तु, इस सबके बावजूद प्राकृतिकके शिष्योंकी संख्या बढ़ने लगी और ईसाइयतका बल घटने लगा। अब सारी समझदार दुनिया प्राकृतिकके पक्षमें है। अभी भी संघर्ष जारी हीं है, पराप्राकृतिक निरन्तर हार रहा है और प्राकृतिक-पक्ष लगातार प्रबल होता जा रहा है। कई वर्षोंमें विज्ञान मिथ्या-विश्वासको सर्वत्र और सम्पूर्ण रूपसे परास्त कर देगा।

इस प्रकार कई शताब्दियोंसे जीवनके सम्बन्धमें दो प्रकारके दर्शन चले आ रहे हैं। एक तृष्णाके क्षयका मार्ग—इच्छाओंके कम करनेका मार्ग और अपनेसे ऊँची किसी शक्तिपर सम्पूर्ण भावसे निर्भर रहनेका मार्ग, दूसरा कामनाओंकी उचित पूर्तिका मार्ग, इच्छाओंकी वृद्धिका मार्ग और प्रयत्न, चतुराई, आविष्कार तथा आदमीकी अपनी शक्तिपर भरोसा रखनेका मार्ग। डियोजेनेस, एपिकटेटस, एक सीमा तक साक्रेटीस, बुद्ध और ईसा, सभीने पहले जीवन-दर्शनकी शिक्षा दी। सभी धन और आरामपसन्दीसे घृणा करते थे, सभी कला और संगीतके शत्रु थे, सभीको अच्छे वस्त्र, अच्छा भोजन और अच्छे घर अच्छे नहीं लगते थे। वे दरिद्रता और चीथड़ोंके दार्शनिक थे। वे गरीबोंकी झोंपड़ीके दार्शनिक थे। वे अज्ञान और श्रद्धाके दार्शनिक थे। उन्होंने इस लोकके दुःखों और परलोकके सुखोंका प्रचार किया। वे सम्पन्न, उद्योगी तथा जीवनका आनंद भोगनेवालोंपर नाक-भौं सिकोड़ते थे और भिखमँगोंके लिये स्वर्गमें स्थान सुरक्षित रखते थे।

अब इस जीवन-दर्शनका प्रभाव घट रहा है। अब अधिकांश लोग यहाँ इसी जीवनमें सुखी होना चाहते हैं। अधिकांश लोग भोजन चाहते हैं, निवासस्थान चाहते हैं, अच्छे वस्त्र चाहते हैं, पुस्तकें चाहते हैं, चित्र चाहते हैं, तमाम आराम और आसाइश चाहते हैं। वे दिमागकी शक्तियोंका विकास करनेमें विश्वास रखते हैं और दिलचस्पी रखते हैं प्रकृतिकी शक्तियोंपर अपना अधिकारकर उन्हें अपना दास और नौकर बनानेमें।

अब संसारके समझदार आदमियोंने आत्मपीड़कोंकी शिक्षाको, आत्मपीड़कोंके दर्शनको तिलाञ्जलि दे दी है। अब वे भूखों मरने और काय-क्लेशको

सदाचार नहीं मानते। उनका विश्वास है कि सुखपूर्वक रहना ही एकमात्र कुशल है; और सुखी रहनेका समय अभी है, यही है, इसी संसारमें है। वे अब प्रकृतिसे परेकी किसी शक्तिद्वारा दिये जानेवाले दण्डों और पुरस्कारोंमें विश्वास नहीं करते। वे कृत्यों और उनके परिणामोंमें विश्वास करते हैं—बुरे कृत्योंका परिणाम बुरा और भले कृत्योंका परिणाम भला समझते हैं।

उनका विश्वास है कि आदमीको खोज करके, विचार करके यह पता लगा लेना चाहिये कि आदमी किस प्रकार रहनेसे सुखी रहता है और उसको उसी प्रकार रहना चाहिये। वे नहीं मानते कि भूकम्पों, आँधियों, ज्वालामुखी पर्वतों और चन्द्र-ग्रहण तथा सूर्य-ग्रहणको आदमियोंके कृत्योंसे कुछ लेना-देना है। वे अब प्रकृतिसे परेकी किसी शक्तिमें विश्वास नहीं करते। वे अपने आपको अब न किसी दैवी-राजाका गुलाम समझते हैं, न नौकर और न कृपा-भाजन। वे अनुभव करते हैं कि बहुत-सी बुराइयाँ ज्ञानद्वारा दूर की जा सकती हैं और इस लिये वे मस्तिष्कके विकासमें विश्वास करते हैं। विद्यालय उनका गिर्जा है और यूनिवर्सिटी उनका महान् पूजा-गृह।

इसी प्रकार संसारमें कुछ समयसे शासनके भी दो सिद्धान्त चले आ रहे हैं—एक धार्मिक सिद्धान्त और दूसरा लौकिक सिद्धान्त।

राजाको सीधे परमात्मासे अधिकार मिलता था। लोगोंका काम था राजाज्ञा पालन करना। पण्डे-पुरोहितोंके जो मत थे वे भी उन्हें परमात्मासे प्राप्त थे। लोगोंका काम था उनमें विश्वास करना।

धार्मिक सरकारें अब कुछ कुछ अप्रिय होती जा रही हैं। इँग्लैण्डमें पार्लिमेंटने परमात्माका स्थान ले लिया और संयुक्तराज्यका शासन शासितोंसे ही शक्ति प्राप्त करता है। शायद जर्मनीका विलियम महाराज ही एक मात्र ऐसा व्यक्ति है जो समझता है कि परमात्माने उसे सिंहासनपर बिठाया है और वह उसे, जर्मनीके लोगोंके संतोष असंतोषकी परवाह न करके सदैव सिंहासनपर बिठाये रखेगा। इटलीने कैथालिक परमात्माको राजनीतिसे विदा कर दिया। फ्रांस फ्रांसीसियोंका है और उन्हींके द्वारा शासित होता है। रूसमें भी लाखों आदमी ज़ार और उसके समान दैवी-शासनाधिकारकी बातको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं।

धार्मिक सरकारें लुप्त हो रही हैं और लौकिक सरकारें शनैः शनैः उनका स्थान ले रही हैं। आदमी पहलेकी अपेक्षा बड़ा बनता जा रहा है और देवतागण अस्पष्ट। इन दैवी सरकारोंका आधार है अधिकांश लोगोंका भय और अज्ञान तथा थोड़ेसे लोगोंकी ठग-विद्या, निर्लज्जता और असत्याचरण। लौकिक सरकार न केवल कुछ किन्तु बहुत लोगोंकी बुद्धि, ईमानदारी और साहसमेंसे पैदा होती है।

हमने यह देख लिया है कि आदमी बिना किसी पण्डे, पुरोहित, पोथी अथवा परमात्माकी सहायताके अपने आपपर शासन कर सकता है। हमने देख लिया है कि मज़हब कोई अपनेमें स्वतःप्रमाण वस्तु नहीं है, और यह कोई अच्छी बात नहीं है कि आदमी किसी बातमें बिना किसी प्रमाणके विश्वास करे। हम मानते हैं कि जो स्वयं-सिद्ध है वह दिमाग़की बनावटमें एक ध्रुव-तारेकी तरह है। हम जानते हैं कि स्वयं-सिद्धसे कोई इनकार नहीं करता। हम जानते हैं कि पर्याप्त प्रमाण रहनेपर विश्वास करनेमें कोई खास अच्छाई नहीं, और पर्याप्त-प्रमाण न रहनेपर भी यह कहनेमें कि हम विश्वास करते हैं, कुछ भी अच्छाई नहीं।

सभी विश्वासी भले आदमी नहीं हुए हैं। संसारमें कुछ अत्यन्त निकृष्ट आदमी बड़े विश्वासी हुए हैं। जिन महानुभावोंने सुकरातको ज़हरका प्याला दिया, वे सब विश्वासी थे। जिन यहूदियोंने ईसाको सूलीपर चढ़ाया, वे भी परमात्माके विश्वासी और पुजारी थे। शैतानके बारेमें कहा जाता है कि वह पिता (परमात्मा), पुत्र (ईसा) और पवित्र-आत्मामें विश्वास करनेवाला है। इस सबका उसके आचरणपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। बाइबलके अनुसार वह काँपता रहता है, किन्तु उसमें तनिक भी सुधार नहीं होता। अन्तमें हम इस परिणामपर पहुँचे हैं कि हमें अपने पूर्वजोंके धर्मकी परीक्षा करनेका अधिकार है।

२

सभी ईसाई जानते हैं कि उनके अपने परमात्माके अतिरिक्त शेष सभीके परमात्मा मनुष्यद्वारा उत्पन्न किये गये हैं। वे झूठे थे, झूठे हैं।

मूर्ख थे, मूर्ख हैं। भयानक थे, भयानक हैं। सभी गैर-ईसाई मन्दिरों और उनकी वेदिकाओंकी रचना व्यर्थ हुई है। सभी बलिदान निष्फल थे। सभी पुरोहित ढोंगी थे। उनकी प्रार्थनायें कभी सुनी नहीं गईं। गरीब आदमियोंको सदैव धोखा दिया गया है, लूटा गया है और गुलाम बनाया गया है। लेकिन प्रश्न है कि क्या हमारा परमात्मा दूसरोंके परमात्माओंसे श्रेष्ठ है?

हम इस समय अपनेसे यह प्रश्न पूछ सकते हैं क्योंकि इस समय हम सम्पन्न अवस्थामें है और आदमी सम्पन्न अवस्थामें साहसी हो जाता है। यदि इस समय कुछ भूकम्प होते अथवा महामारियाँ होतीं तो कदाचित् हम घुटनोंके बल बैठ, आँखें बन्द कर परमात्मासे इस प्रकारका विचार मनमें आने देनेके लिये भी क्षमा माँगते। हम जानते हैं कि जहाँ अन्धश्रद्धा है, वहीं अकाल भी पड़ते हैं, जहाँ मिथ्या-विश्वास है वहीं विपत्ति भी आती है। लेकिन क्योंकि इस समय न हम किसी महामारीसे पीड़ित हैं और न अकालसे, तथा पृथ्वीका तल सामान्यतया शान्त है, इसलिये परमात्माके वास्तविक चरित्रकी परीक्षा कर सकते हैं।

यह स्वीकार करना चाहिये कि शक्तिका उपयोग चरित्रकी एक बहुत ही बढ़िया कसौटी है।

क्या कोई भला परमात्मा पक्षपात और अज्ञानकी ढाल-तलवारको अपील करेगा? उस अन्ध-विश्वासको अपील करेगा, जो पण्डे-पुरोहितोंके नेतृत्वमें रहनेवाली मूर्खताकी एक कड़ी है? भयको अपील करेगा, जो ठग और ढोंगीका मूल धन है? क्या एक भला परमात्मा अपने बच्चोंको डरावेगा अथवा ज्ञान देगा? क्या एक भला परमात्मा तर्कको अपील करेगा अथवा अज्ञानको? न्यायको अथवा स्वार्थको? स्वतन्त्रताको अथवा दण्डको?

हमारे आदि माता-पिताको अदनके उद्यानमें हमारे परमात्माने प्रेमकी पवित्रताके बारेमें कुछ नहीं कहा, बच्चोंके बारेमें कुछ नहीं, न्याय और आज़ादीके बारेमें कुछ नहीं।

जब उनसे उसकी आज्ञाका उल्लंघन हो गया तो वह एक जंगली-पशुकी तरह भयानक हो गया। उसने पृथ्वीको अभिशाप दिया और हव्वाको कहा— 'मैं दुःखको बहुत बढ़ा दूँगा। दुःखमें ही तुम्हें बच्चोंको जन्म देना होगा। तुम्हारा पति तुमपर शासन करेगा।'

हमारे परमात्माने प्रेमको पीड़ाका दास बनाया, पत्नियोंको गुलाम बनाया और संसारकी गृहस्थीको पशुत्वमें बदल दिया।

हमारे परमात्माने आठ आदमियोंके अतिरिक्त शेष सारे संसारको पानीमें डुबा दिया; पृथ्वीको लाशोंसे ढके हुए एक अनन्त समुद्रमें परिवर्तन कर दिया।

जब वह जानता था कि उसे उनका नाश कर देना होगा, तो उसने पुरुषों स्त्रियों और बच्चोंको जन्म ही क्यों दिया? उसने उनके सुधारका प्रयत्न क्यों नहीं किया? जब वह जानता था कि उनका सुधार नहीं हो सकता, तो उसने लोगोंकी रचना ही क्यों की!

क्या यह सम्भव है कि हमारा परमात्मा समझदार और भला दोनों था?

उस महान बाढ़के बाद हमारे परमात्माने यहूदियोंको चुना और अपने शेष सारे बच्चोंको छोड़ दिया। उसने हिन्दुओंकी ओर ध्यान नहीं दिया, मिसर-वालोंकी उपेक्षा की, वह पारसियोंकी ओरसे लापरवाह हो गया, असीरियाके लोगोंको भूल गया और यूनानके लोगोंको याद न रख सका। इतना सब होनेपर भी वह सबका पिता था। शताब्दियोंतक परमात्मा केवल एक जातिका खुदा था। वह बहुतोंसे घृणा करनेवाला और थोड़ेसे लोगोंकी रक्षा करनेवाला था। हमारा परमात्मा अज्ञानी था। वह ज्योतिष अथवा भूगर्भ-शास्त्रके विषयमें कुछ न जानता था। वह यह भी नहीं जानता था कि पृथ्वीकी शक्ल कैसी है। वह समझता था कि ये तारागण आकाशमें लगे हुए धब्बे हैं।

वह बीमारियोंके बारेमें अज्ञानी था। वह समझता था कि बहते हुए पानीपर मारे गये पक्षीका रक्त अच्छी दवाई है। उसमें बदला लेनेकी भावना थी। वह निर्दयी था। वह अपने कुछ बच्चोंको दूसरोंकी हत्या करनेमें सहायता देता था। उसने उन्हें आज्ञा दी कि वे पुरुषों, स्त्रियों और बच्चोंको मार डालें और कुमारियोंको जीवित रख उन्हें अपने सैनिकोंमें बाँट दें।

हमारे परमात्माने गुलामीकी स्थापना की, आदमियोंको आज्ञा दी कि वे अपने मानव-बन्धुओंको खरीदें, औरतों तथा बच्चोंका क्रय-विक्रय करें। हमारे परमात्माने बहु-पत्नि-विवाहकी अनुज्ञा दी, उसने स्त्रियोंको पुरुषोंकी सम्पत्ति बनाया। हमारे परमात्माने राजाओंके अपराधोंके लिये लोगोंकी हत्या

की। कोई भी समझदार आदमी, जिसका दिमाग़ मिथ्या विश्वाससे विषाक्त नहीं हो गया है, जिसकी बुद्धि भयके कारण जड़ नहीं हो गई है, यदि पुराने-प्रवचनको पढ़ेगा तो उसे इस परिणामपर पहुँचना ही होगा कि हमारा परमात्मा एक जंगली पशु था।

यदि बिना परमात्माके हमारा काम न चले तो उसे दयावान् तो होना चाहिये। हमें स्मरण रखना चाहिये कि करुणाकी वीणाके तार टूटे नहीं। हमें याद रखना चाहिये कि जिस समय न्यायकी तलवार दुर्बलकी सहायताके लिये उठती है, उसी समय उसमें फूल खिलते हैं और उन फूलोंकी सुगन्ध ही वह धूप है, वह पूजा है और वह बलि है जिसे करुणाकी देवी स्वीकार करती है।

२

इस प्रकार, रोगके कारण और उसकी चिकित्साके बारेमें भी दो मत रहे हैं। एक मज़हबी मत है और दूसरा वैज्ञानिक।

मज़हबी मतके अनुसार रोगोंका कारण वे दुष्ट-आत्मायें थीं, वे शैतान थे जो आदमियोंके शरीरमें प्रवेश पा जाते थे और पैगम्बर, पहुँचे हुए आदमी तथा पुरोहित इन दुष्ट आत्माओंको निकाल सकते थे।

प्राकृतिक कारणों और उनके प्रभावके बारेमें कुछ जानकारी न थी। प्रत्येक बात चमत्कार-पूर्ण तथा रहस्य-पूर्ण थी। पुरोहित ठग थे और लोग अन्ध-विश्वासी।

धीरे धीरे रोगके कारण और उसकी चिकित्साके सम्बन्धमें एक दूसरे सिद्धान्तने दिमागमें स्थान ग्रहण कर लिया। कुछ लोगोंने दुष्ट-आत्माओंवाले सिद्धान्तको त्याग दिया। उन्होंने अपने मनमें इस सिद्धान्तको जगह दी कि रोग प्राकृतिक कारणोंसे पैदा होते हैं और उनमेंसे बहुतसे रोग प्राकृतिक उपायोंसे अच्छे किये जा सकते हैं।

आरम्भमें चिकित्सक बहुत अज्ञानी था, किन्तु तो भी वह पुरोहितकी अपेक्षा अधिक जानकार था। धीरे धीरे उसने पुरोहितको रोगीके विस्तरेसे दूर हटा दिया। अन्तमें कुछ लोगोंमें इतनी अक्ल तो आ गई कि वे अपने शरीरके बारेमें डाक्टरोंका भरोसा कर सकें; किन्तु वे इतने मूर्ख बने ही रहे

कि वे अपनी आत्मा पुरोहितोंके ही हाथमें सुरक्षित समझें। सभी लोगोंमें रोगोंका मजहबी सिद्धान्त एक ओर फेंक दिया गया है और अब चिकित्सा-शास्त्रमें चमत्कारपूर्ण और परा-प्राकृतिकके लिये कोई स्थान नहीं। रोमन-कैथालिक देशोंमें अब भी मूर्तियों, प्रार्थनाओं, पवित्र-जल तथा साधुओंकी हड्डियोंद्वारा लोगोंकी चिकित्सा होती है; किन्तु जब पादरी पुरोहित स्वयं बीमार पड़ते हैं तो वे डाक्टरको बुला भेजते हैं! अब तो परमात्माका एजेण्ट पोप तक अपना पवित्र शरीर डाक्टरके ही हाथमें सुरक्षित समझता है!

रोगोंके वैज्ञानिक सिद्धान्तने मज़हबी-सिद्धान्तपर एक बड़ी हद तक विजय पा ली है। अब कोई समझदार आदमी यह विश्वास नहीं करता कि दुष्ट-आत्मायें आदमियोंके शरीरमें प्रवेश पा जाती हैं। अब कोई समझदार आदमी यह विश्वास नहीं करता कि दुष्ट-आत्मायें आदमियोंके कामोंमें दखल देनेका प्रयत्न करती हैं। अब कोई समझदार आदमी यह विश्वास नहीं करता कि दुष्ट-आत्मायें होती भी हैं!

यह सब होनेपर भी, इस समय न्यू-यार्क शहरमें कैथालिक पादरी कुँवारी मेरीकी माँ मानी जानेवाली सन्तनी ऐनीकी हड्डियोंका प्रदर्शन कर रहे हैं। इनमेंसे कुछ पादरी-पुरोहित अन्धे श्रद्धालु तथा निर्बल-बुद्धि हो सकते हैं, परन्तु शेष सब शुद्ध ठग हैं। यदि उनमें कुछ भी समझदारी हो तो उन्हें मालूम होना चाहिये कि वे यह बात किसी भी तरह सिद्ध नहीं कर सकते कि उस हड्डीके टुकड़ेका सन्तनी ऐनीसे कभी किसी तरहका सम्बन्ध रहा है। और यदि उनमें कुछ भी वास्तविक समझ है तो उन्हें यह बात मालूम होनी चाहिये कि सन्तनी ऐनीकी हड्डियाँ भी साररूपमें दूसरे लोगोंकी हड्डियोंके ही समान हैं, उसी तरहकी सार-सामग्रीसे बनी हुई। इस लिये सभी मानव-हड्डियोंमें यदि कोई चमत्कार तथा रोग-नाशक गुण हो सकते हैं तो वे एक ही जैसे होने चाहिये। इतना सब ठीक होनेपर भी ये पादरी-पुरोहित अपने अन्धविश्वासी वञ्चितोंसे इन पवित्र हड्डियोंको देखने तथा जिस पेटीमें यें रखी हैं, उस पेटीका चुम्बन कर लेनेके अधिकारके लिये लाखों डालर प्राप्त करते हैं।

यह है इन मजहबी लोगोंकी ईमानदारी। यदि ये सज्जन स्वयं बीमार पड़

जायँ तो ये उन हड्डियोंको (धातुओंको) स्पर्श नहीं करेंगे। ये एक डाक्टरको ही बुला भेजेंगे।

मैं आपको एक कहानी सुनाऊँ, जो इस प्रसंगके ठीक अनुकूल है—

एक सन्तकी हड्डियोंपर बना हुआ एक मठ था, और उसपर अधिकार था एक बूढ़े साधुका। इन हड्डियोंमें रोगोंको दूर भगानेकी सामर्थ्य बताई जाती थी। वे इस ढंगसे रखी थीं कि एक बिलमेंसे हाथ डालकर भक्त-गण उनका स्पर्श कर सकते थे। अनेक रोगोंके बहुतसे रोगियोंने आ-आकर उनका स्पर्श किया था। अनेकों यह समझकर कि उनके स्पर्शसे उन्हें लाभ हुआ है, या उनके रोग दूर हो गये हैं कृतज्ञतास्वरूप उस बूढ़े साधुके पास बहुत-सा धन छोड़ गये थे। एक दिन उस बूढ़े साधुने अपने शिष्यको इस प्रकार सम्बोधन किया—"प्रियपुत्र, अपना व्यापार ठीक नहीं चल रहा है। मैं अकेला ही सभी आगन्तुकोंसे निपट सकता हूँ। तुम्हें अपने लिये कोई दूसरी जगह देखनी होगी। मैं तुम्हें सफेद गधा, कुछ धन और अपना आशीर्वाद देता हूँ।"

इस प्रकार वह तरुण उस गधेपर सवार हो, अपने रास्ते चला गया। कुछ दिनोंमें उसका पैसा समाप्त हो गया, और सफेद गधा मर गया। उस तरुणके दिमागमें एक विचार आया। उसने उस गधेको सड़कके किनारे गाड़ दिया और हर यात्रीके सामने हाथ फैलाकर वह बड़ी गम्भीर मुद्रामें कहने लगा—"मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझे इस निष्पापकी हड्डियोंपर एक छोटा-सा मन्दिर बनानेके लिये कुछ पैसा दें।"

उसे ऐसी सफलता मिली कि वह एक मन्दिर बना सका और हजारों लोग उस निष्पापकी हड्डियोंका स्पर्श करनेके लिये आने लगे। तरुण धनी हो गया। अनेक सहायक नौकर रख लिये और बड़े ठाट-बाटसे रहने लगा।

एक दिन उसके मनमें आया कि अपने पुराने गुरुसे मिल आये। अपने साथ बहुत-से नौकर-चाकर ले वह अपने पुराने मठकी ओर चला। जब वह वहाँ पहुँचा तो वृद्ध साधु दरवाजेपर बैठा था। बड़े आश्चर्यसे उसने उस तरुण और उसके पीछे पीछे आनेवाले लोगोंकी ओर देखा। तरुण नीचे उतरा और अपना परिचय दिया। वृद्ध साधु बोला—कहाँ रहे? अपनी सफलताकी कहानी तो सुनाओ।

तरुणने उत्तर दिया,—वृद्धावस्था बुद्धू होती है, तरुणाईमें सूझ-बूझ रहती है। मैं तुम्हें सब सुनाऊँगा। किन्तु एकान्त होने तक प्रतीक्षा करो।

उस रात उस तरुणने अपनी सब कहानी सुनाई—किस प्रकार वह गधा मरा, कैसे उसे गाड़ दिया गया, कैसे उस 'निष्पाप' की हड्डियोंपर पैसा माँग माँगकर मन्दिर बनाया और किस प्रकार उन हड्डियोंसे जो लोग चंगे हुए उन्होंने उसे पैसा दिया।

जब उसने अपनी राम-कहानी कह सुनाई तो उसके चेहरेपर संतोषकी हँसी थी। उसने फिर दोहराया—वृद्धावस्था बुद्धू होती है, तरुणाईमें सूझ-बूझ रहती है।

वृद्ध साधुने अपना काँपता हुआ हाथ, अपने उस शिष्यके सिरपर रखा और बोला—इतने बे-सबर मत बनो। बेटा, यह मठ जिसमें तुम्हारा बचपन गुजरा, जिसमें तुमने इतने चमत्कार देखे, इतने रोगी चंगे होते देखे, तुम्हारे गधेकी माँकी ही पवित्र हड्डियोंपर बना था।

४

संसार भरके पवित्र धर्म-ग्रन्थों और धर्मोंकी व्याख्या दो तरहसे हो सकती है। एक तो यह कहकर हो सकती है कि हमारे पवित्र धर्म-ग्रन्थ पहुँचे हुए आदमियोंद्वारा लिखे गये थे और हमें अपने धर्मका इलहाम परमात्मा-द्वारा हुआ। दूसरे यह कहकर हो सकती है कि सभी ग्रन्थ आदमियों द्वारा लिखे गये। प्रकृतिसे बाहरकी किसी भी शक्तिद्वारा उन्हें कोई सहायता नहीं मिली और सभी धर्म प्राकृतिक ढंगपर उत्पन्न हुए।

हम देखते हैं कि दूसरे देशोंके लोगों और जातियोंके पास भी पवित्र धर्म-ग्रन्थ हैं, पैगम्बर हैं, पुरोहित हैं, हम यह भी देखते हैं कि उनके पवित्र धर्म-ग्रन्थ ऐसे आदमियोंद्वारा लिखे गये थे, जिनमें उनकी अपनी जातिके संस्कार तथा अनाखी बातें विद्यमान थीं, और उन धर्म-ग्रन्थोंमें ऐसी गलतियाँ और बेहूदा बातें भरी पड़ी हैं जो कि उन ग्रन्थोंकी उत्पन्न करने-वाली जातियोंकी विशेषता है।

ईसाई इस बारेमें पूर्णतया सन्तुष्ट हैं कि उनके पुराने और नये प्रवचनको

छोड़कर शेष सभी कथित पवित्र धर्म-ग्रन्थ आदमियोंकी रचना हैं और उनके इलहामी होनेकी बात सर्वथा बेहूदा है। इस लिये उनका विश्वास है कि यहूदी धर्म और ईसाइयतके अतिरिक्त शेष सभी धर्म आदमियोंके बनाये हुए हैं। दूसरे धर्मवालोंकी मान्यता है कि उनका अपना धर्म परमात्माद्वारा भेजा गया इलहामी धर्म है और यहूदी-धर्म तथा ईसाइयत सहित शेष सारे धर्म आदमियोंके रचे हुए धर्म हैं। सभीका कहना ठीक है, और सभीका गलत। जब वे कहते हैं कि दूसरे धर्म आदमियोंकी रचना हैं, तो वे ठीक हैं, और जब वे कहते हैं कि उनके अपने धर्म इलहामी हैं, तो वे ग़लत हैं।

अब हम जानते हैं कि सभी जातियोंका कोई न कोई धर्म रहा है। वे ऐसी आत्माओंके अस्तित्वमें विश्वास करते रहे हैं जो भेंट या प्रार्थनाओंसे सन्तुष्ट हो सकती थीं। अब हम जानते हैं कि प्रत्येक धर्मके मूलमें, प्रत्येक पूजाके मूलमें भयका रक्तरहित चेहरा है। अब हम जानते हैं कि सभी धर्म और सभी पवित्र पुस्तकें प्राकृतिक ढंगसे उत्पन्न हुई हैं—सभीके मूलमें अज्ञान है, भय है और वञ्चना है। अब हम जानते हैं कि भेंट, यज्ञ और प्रार्थनायें सभी बेकार हैं। न वे कभी किसी परमात्माके पास पहुँची और न किसी परमात्माने उन्हें कभी सुना और न उन्हें पूरा किया।

कुछ वर्ष पहले प्रार्थनायें युद्धोंकी हार-जीतका निर्णय करती थीं और यह समझा जाता था कि परमात्माके दरबारमें पुरोहितोंका विशेष प्रभाव होनेके कारण वे किसीको भी विजयी बना सकते हैं। अब कोई बुद्धिमान् आदमी किसी प्रार्थनासे कुछ भी आशा नहीं लगाता। वह जानता है कि प्रकृति बिना आदमीकी इच्छा अनिच्छाकी चिन्ता किये अपने रास्ते चलती है। बादल तैरते रहते हैं, हवायें चलती हैं, वर्षा होती है, सूर्य चमकता है और इन्हें मानव-जातिकी इच्छा अनिच्छासे कुछ लेना देना नहीं, तो भी लाखों करोड़ों आदमी अब भी प्रार्थना करते रहते हैं। वे अब भी किसी परमात्मासे सहायताकी आशा लगाये रहते हैं और समझते हैं कि कोई न कोई उनकी रोगों और दुर्घटना-ओंसे रक्षा करेगा। प्रति वर्ष पादरी-पुरोहित-गण एक ही प्रकारके प्रार्थना-पत्र देते रहते हैं, एक ही तरहकी चीज़ोंके लिये माँग करते रहते हैं। यद्यपि इसका कभी कुछ परिणाम नहीं निकलता, तो भी उनका यह क्रम जारी रहता है।

जब कभी भले आदमी कोई अच्छी बात करते हैं तो ये पादरी-पुरोहित उसका श्रेय परमात्माको देते हैं, किन्तु जब बुरी बातें होती हैं तो वे उन बुरी बातोंके करनेवालोंको दोष देते हैं और उस समय परमात्माको दोषी ठहराना भूल जाते हैं।

प्रार्थना करना एक कारबार बन गया है, एक पेशा, एक व्यापार। एक धर्मोपदेशक इतना प्रसन्न कभी नहीं होता, जितना लोगोंके सामने प्रार्थना करनेके समय। उनमेंसे अधिकांश परमात्मासे अत्यधिक परिचित हैं। यह जानते हुए भी कि वह सब कुछ जानता है, वे उसे जातिकी आवश्यकताओं और लोगोंकी इच्छाओंसे परिचित कराते हैं और बताते हैं कि वह क्या करे और कब करे। वे उसके अभिमानको अपील करते हैं और प्रार्थना करते हैं कि वह कुछ बातें अपनी शानकी रक्षाके लिये करे। वे कभी कभी असम्भव बातोंके लिये प्रार्थना करते हैं। वाशिंगटनके प्रतिनिधि-भवनमें मैंने एक धर्मोपदेशकको ऐसी बातके लिये प्रार्थना करते सुना, जिसे वह स्वयं भी असम्भव मानता होगा। उसने चेहरेपर बिना किसी प्रकारके परिवर्तनके, बिना किसी प्रकारकी मुस्कराहटके वैसे ही गाम्भीर्य्यके साथ जैसा श्मशानमें होता है, कहा—हे परमात्मा, मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ कि कांग्रेसको बुद्धिमानी दो। सम्भव है कि ये धर्मोपदेशक वास्तवमें यह समझते हों कि उनकी प्रार्थनाओंसे किसीको कुछ लाभ होता है और यह भी सम्भव है कि मेण्डक यह समझते हों कि उनके टर्रानेसे वर्षाऋतु आती है।

जो विचारवान् हैं वे अब यह जान गये हैं कि सभी पवित्र पुस्तकें मनुष्यों-द्वारा बनाई गई हैं, प्रकृतिसे ऊपर किसी शक्तिसे कभी कोई इलहाम नहीं उतरा है, जितनी भविष्य-वाणियाँ है वे या तो असत्य हैं या घटना-ओंके बादमें की गई हैं। न तो कभी कोई चमत्कार हुआ न होगा। किसी परमात्माको न आदमीकी पूजा चाहिये और न सहायता, किसी प्रार्थनाने आजतक आकाशसे न पानीकी एक बूँद बरसाई और न सूर्यसे एक भी किरण। किसी प्रार्थनासे आजतक न कोई बाढ़ रुकी और न कभी कोई तूफान। किसी प्रार्थनाने न कभी किसी प्यासेकी प्यास बुझाई और न कभी किसी भूखेको भोजन दिया। किसी प्रार्थनाने न कभी किसी महामारीको रोका, न कभी किसी भूकम्पको शान्त किया और न कभी

किसी ज्वालामुखी पर्वतको ठण्डा किया। कोई प्रार्थना कभी किसी निर्दोषकी ढाल नहीं बनी। किसी प्रार्थनासे कभी किसी पीडितको सहायता नहीं मिली। किसी प्रार्थनाने कभी किसी कारागारके दरवाजे नहीं खोले। किसी प्रार्थनाने कभी किसी गुलामको बन्धनमुक्त नहीं किया, भले आदमियोंकी हथकड़ियोंको नहीं खोला और न कभी किसी चिताकी आग बुझाई।

अब हम यह जानते हैं कि हम एक प्राकृतिक संसारमें रहते हैं। ये देवता, ये शैतान और ये परमात्माके पुत्र सब कपोलकल्पनायें हैं। हमारे मजहब और हमारे देवतागण भी बहुत करके दूसरी जातियोंके मज़हब और देवतागणके ही समान हैं; और एक असभ्य आदमीका पत्थरका देवता ठीक वैसे ही प्रार्थनाओंको सुनता और रक्षा करता है जैसे (ईसाइयोंका) पिता, पुत्र और पवित्र-आत्मा।

५

सदाचारके सम्बन्धमें भी दो सिद्धान्त हैं। एक सिद्धान्त है कि नैतिक आदमी बिना यह सोचे कि आज्ञा उचित है या नहीं परमात्माकी आज्ञाओंका पालन करता है। वह मानता है कि परमात्माकी इच्छा ही सदाचारका मूल स्रोत है। वह सोचता है कि क्योंकि परमात्माने मना किया है इसलिये यह काम अनीतिपूर्ण है, यह नहीं कि अनीतिपूर्ण होनेसे परमात्माने मना किया है। यह सिद्धान्त आदमीको विचार करनेके लिये नहीं कहता; किन्तु आज्ञा-पालनके लिये कहता है। यह तर्कको अपील नहीं करता किन्तु दण्डके भय और पुरस्कारकी आशाको आगे रखता है। परमात्मा एक राजा है, जिसकी इच्छा ही न्याय है और आदमी उसके दास तथा गुलाम हैं।

बहुत-से लोग मानते हैं कि ईश्वरके अस्तित्वमें विश्वास किये बिना सदाचार असम्भव है, और पृथ्वीपरसे नैतिकताका लोप हो जायगा।

यह समझा गया है कि 'श्री भगवानोवाच'के साथ यह बेहूदा सिद्धान्त तर्कसे स्वतन्त्र और उससे ऊपरकी वस्तु है।

दूसरा सिद्धान्त है कि पुण्य और पाप वस्तुओंके स्वरूपमें ही निहित है। कुछ कार्य हैं जो आदमीके सुखको बनाये रखते हैं अथवा उसे बढ़ाते हैं,

और दूसरे कार्य चिन्ता तथा दुःखको जन्म देनेवाले हैं। जितने कार्य करनेसे सुख पैदा होता है वे सब पुण्य हैं और शेष सभी कार्य या तो पाप अथवा न पुण्य न पाप। पुण्य और पाप किसी तथाकथित परमात्मासे इलहामद्वारा प्राप्त नहीं हुए हैं, किन्तु आदमीने ही अपनी समझ और तजरबोंसे इनका पता पाया है। सदाचारमें न कुछ चमत्कारकी बात है और न किसी प्रकारकी प्रकृतिसे परे होनेकी। सदाचारको परलोक अथवा किसी अनन्त शक्तिसे भी कुछ लेना देना नहीं। यह इसी लोकमें जो हमारा आचरण है उसपर लागू होता है और उस आचरणका हमारे ऊपर तथा अन्य लोगोंपर जो प्रभाव पड़ता है उसीसे इसका स्वरूप निश्चित होता है।

इस संसारमें परिश्रमद्वारा ही लोग अपनी इच्छाओंकी पूर्ति करनेके लिये मजबूर हैं। उद्योग एक आवश्यकता है। इस लिये जो काम करते हैं उनकी चुरानेवालोंसे स्वाभाविक शत्रुता है।

चोरीको अप्रिय बनानेके लिये किसी परमात्माके इलहामकी आवश्यकता न थी। स्वभावसे ही मनुष्योंको यह अप्रिय है कि उन्हें किसी तरहकी हानि पहुँचे, उनका अंग-भंग हो अथवा उनका प्राण-हरण हो। इसलिये हर समय और हर स्थानपर उन्होंने आत्म-रक्षाके प्रयत्न किये हैं।

आदमियोंके मनमें आत्म-रक्षाका भाव उत्पन्न करनेके लिये किसी परमात्माके इलहामकी आवश्यकता न थी। आक्रमण होनेपर आत्म-रक्षाकी भावना उतनी ही स्वाभाविक है जितनी भूख लगनेपर खानेकी।

किसी परमात्माकी आज्ञाकी अनुकूलता अथवा प्रतिकूलताके हिसाबसे किसी कर्मका शुभाशुभ निर्णय करना सीधा-सादा मिथ्या विश्वास है। परिणामोंको किसी भी कर्मकी कसौटी मानना वैज्ञानिक है और तर्कानुसंगत है।

परा-प्राकृतिक सिद्धान्तके अनुसार कर्मोंके स्वाभाविक परिणाम विचारणीय नहीं हैं। निषिद्ध होनेसे कर्म पाप बन जाते हैं और अनुज्ञा होनेसे पुण्य। कैथालिक मान्यताओंके अनुसार शुक्रवारको मांस खाना एक ऐसा पाप कर्म है जिसका अनन्त-दण्ड मिलना चाहिये। इतना होनेपर भी परिणामकी दृष्टिसे शुक्रवारको मांस खानेका परिणाम किसी भी दूसरे दिन मांस खानेके परिणामसे भिन्न नहीं हो सकता। इसलिये सभी मज़हब शिक्षा देते हैं कि अविश्वास एक

अपराध है, वस्तुओंकी स्वाभाविक प्रकृतिमें नहीं, किन्तु परमात्माकी इच्छामें।

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि यह सारी बात बेहूदा है और गधापन है। यदि कोई अनन्त शक्तिवाला परमात्मा हो भी, तो भी जो कर्म प्राकृतिक दृष्टिसे उचित है वह उसे अनुचित नहीं ठहरा सकता। वह किसी ऐसे कर्मको जिसके परिणाम अशुभ हों शुभ भी नहीं बना सकता। एक अनन्त शक्तिवाला परमात्मा भी किसी यथार्थ घटनाको बदल नहीं सकता। उसके बावजूद किसी-चक्रकी परिधि और व्यासमें वही सम्बन्ध रहेगा।

एक वस्तुका दूसरी वस्तुसे, गतिका गतिसे, क्रियाका क्रियासे तथा कारणका कार्यसे, जो भूत कहलाता है उस क्षेत्रमें तथा जो मन कहलाता है उस राज्यमें वैसा ही निश्चित, वैसा ही अपरिवर्तनीय सम्बन्ध है, जैसा कि व्यास और परिधिका सम्बन्ध।

एक अनन्त शक्तिवाला परमात्मा इन आधारोंको बदल नहीं सकता, कर्मोंके स्वाभाविक परिणामोंको घटा बढ़ा नहीं सकता।

इस संसारमें न कुछ अचानक होता है, न कुछ जादू है, न कुछ चमत्कार है। हर घटना, हर विचार, और स्वप्नके पीछे उचित, स्वाभाविक और आवश्यक कारण रहता है।

किसी तथाकथित परमात्माकी इच्छाको सदाचारका आधार बनानेके प्रयत्नने संसारको दुःख और पापसे भर दिया है, करोड़ों मस्तिष्कोंमें प्रज्वलित तर्कके प्रदीपको बुझा दिया है और असंख्य तरीकोंसे मानवताकी प्रगतिमें बाधा उपस्थित कर दी है।

अब समझदार आदमी यह जान गये हैं कि यदि कोई अनन्त शक्तिवाला परमात्मा है तो आदमी किसी भी तरह उसके सुखको घटा बढ़ा नहीं सकता। वे जानते हैं कि आदमी केवल जीवित प्राणियोंके विरुद्ध अपराध कर सकता है। एक परिमित शक्तिवाले प्राणीका अत्यन्त शक्तिवाले परमात्माके विरुद्ध अपराध कर सकना अत्यन्त असम्भव है।

६

हजारों वर्षों तक आदमी असम्भवमें विश्वास करता रहा है और उसके पीछे पड़ा रहा है। रसायनशास्त्रमें वह किसी ऐसी वस्तुकी खोजमें व्यस्त

रहा है कि जो दूसरी सामान्य धातुओंको सोनेमें बदल दे। लार्ड बैकन भी इस बेहूदगीमें विश्वास करता था। अनेक शताब्दियों तक हजारों आदमी जस्त और लोहेकी प्रकृतिको बदलनेका प्रयत्न करते रहे कि वह अन्तमें सोना बन सके। उन्हें चीजोंके वास्तविक स्वभावकी कोई कल्पना न थी। वे समझते थे कि चीजें किसी न किसी प्रकारके जादूसे पैदा हुई हैं, और उसी प्रकारके जादूसे वे बदलकर कोई दूसरी चीजें बनाई जा सकती हैं। वे सभी परा-प्राकृति-कमें विश्वास करनेवाले थे। इसी प्रकार मशीन-निर्माणमें भी मनुष्य असम्भवकी खोजमें लगे रहे। वे लगातार गतिमें विश्वास करते थे और वे ऐसी मशीन बनाना चाहते थे जो स्वयं बिना किसी साधनके लगातार चलती रहे।

हज़ारों बुद्धिमान आदमियोंने अपना जीवन ऐसी मशीनोंके आविष्कारमें व्यर्थ नष्ट कर दिया, जो किसी न किसी आश्चर्यजनक तरीकेपर गतिको जन्म दे सकें। वे यह नहीं जानते थे कि गति निरन्तर विद्यमान रहती है। न यह उत्पन्न ही की जी सकती है और न यह नष्ट ही की जा सकती है। वे यह नहीं जानते थे कि जिस मशीनमें लगातार गति रहेगी वह अपनेमें एक विश्व होगी, अथवा इस विश्वसे सर्वथा स्वतन्त्र। उसमें जो घर्षण नामक शक्ति रहेगी, वह विना किसी भी प्रकारकी हानिके धकेलनेवाली शक्तिमें परिणत हो जायगी अर्थात् मशीन स्वयं उस मूल-शक्तिकी जनक बन जायगी जिस शक्तिसे वह चलेगी। इन सब बेहूदगियोंके बावजूद ऐसे आदमी जिन्हें उनके साथी पण्डित और समझदार समझते रहे शताब्दियोंतक लगातार गतिके महान् सिद्धान्तके आविष्कारमें लगे रहे।

हमारे पूर्वजोंने तारागणोंका अध्ययन किया। वे समझते थे कि उनके अध्ययनसे हम जातियों और व्यक्तियोंके भाग्य तथा जीवनका पता पा सकेंगे। सूर्य्य-ग्रहण तथा चन्द्र-ग्रहण, पुच्छल तारे, तारागणोंके आपसी सम्बन्ध, भाग्य अथवा भाग्यके पूर्व-चिह्न और कारण समझे जाते थे। फलित-ज्योतिष एक विज्ञान माना जाता था, और जो इस शास्त्रके ज्ञाता थे, उनकी पूछताछ सेना-पति करते थे, कूटनीतिज्ञ करते थे और बड़े बड़े महाराजा करते थे। इस तथाकथित विज्ञानके अध्ययनमें जो समयका अपव्यय हुआ, जो प्रतिभाका नाश हुआ उसकी अतिशयोक्ति हो ही नहीं सकती। जो लोग फलित-ज्योति-

षमें विश्वास करते थे, वे समझते थे कि वे एक परा-प्राकृतिक संसारमें रहते हैं—एक ऐसे संसारमें जिसमें कार्य कारणका आपसमें कोई सम्बन्ध नहीं, जिसमें सभी घटनायें जादूके प्रभावसे होती हैं।

अभी उन्नीसवीं शताब्दीकी समाप्तिपर भी लाखों आदमी हैं जो गधोंकी जन्म-पत्रियाँ देखकर ही अपनी जीविका चलाते हैं।

मशीन-निर्माताओंका निरन्तर-गतिका सिद्धान्त, रसायन-शास्त्रज्ञका पारस-मणिकी खोजमें भटकना तथा तारागणोंके सम्बन्धसे भविष्यत्-वाणियाँ करना—ये सभी बातें प्रकृति-सम्बधी उसी अज्ञानमेंसे पैदा हुई हैं, जिस अज्ञानने धर्मोपदेशकोंको एक ऐसे कारण (परमात्मा) की कल्पना करनेपर मजबूर किया कि जो स्वयं तो सभी कारणों तथा कार्योंका कारण है किन्तु उसका कोई कारण नहीं।

धर्मोपदेशकोंका दुराग्रह रहा है कि प्रकृतिसे 'परे कुछ' है और वह 'कुछ' ही प्रकृतिका उत्पन्न करनेवाला तथा पालन करनेवाला है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि जिस प्रकार पारस-मणिके अस्तित्वका हमारे पास कोई प्रमाण नहीं उसी प्रकार हमारे पास उस 'कुछ'के अस्तित्वका भी प्रमाण नहीं है।

यदि कोई मशीन-निर्माता अब निरन्तर-गतिमें विश्वास करता है तो वह पागल है; इसी प्रकार यदि कोई रसायनशास्त्रज्ञ एक धातुको दूसरीमें बदल देता है तो वह पागल है; यही हाल ईमानदार ज्योतिषीका है और कुछ वर्षोंमें यही बात सचाईके साथ ईमानदार धर्मोपदेशकोंके बारेमें भी कही जा सकेगी।

हमारे अनेक पूर्वज निरन्तर तरुण बने रह सकनेके स्रोतमें विश्वास करते थे और उसकी खोजमें लगे रहे। उनका विश्वास था कि एक वृद्ध आदमी झुककर यदि इस स्रोतसे पानी पी ले तो उसके सफेद बाल काले हो जायँ, उसके मुँहकी झुर्रिया उड़ जायँ, उसकी धुँधली आँखें चमक उठें और उसका दिल तारुण्यकी गर्मीसे धड़कने लग जाय।

वे परा-प्राकृतिकके विश्वासी थे। उन्हें चमत्कारोंमें विश्वास था। उन्हें कोई बात इतनी सम्भव नहीं मालूम देती थी, जितनी कि असंभव बात।

७

बहुतसे आदमी तर्कके स्थानपर नामोंका प्रयोग करते हैं। उन्हें प्रसिद्ध मृत-पुरुषोंके शिष्य कहलानेमें बड़ा संतोष मिलता है। प्रत्येक दल, प्रत्येक पार्टीके पास महान् पुरुषोंकी एक सूची रहती है और वे जब कभी अपने किसी मत अथवा सिद्धान्तके बारेमें विवाद करते हैं तो वे आपसमें इन्हीं महापुरुषोंके नाम एक दूसरेपर फेंकते हैं।

लोग बाइबलको इलहामी और ईसाको ईश्वरका पुत्र सिद्ध करनेके लिए सैनिकों, कूटनीतिज्ञों और राजाओंको गवाहीमें पेश करते हैं। इसी प्रकार वे स्वर्ग और नरकके अस्तित्वकी भी स्थापना करते हैं। उनके किसी एक सिद्धान्तका विरोध कीजिए तो आपको तुरन्त बताया जायगा कि आईजक न्यूटन दूसरे मतका था, और तुमसे पूछा जायगा कि क्या तुम न्यूटनसे भी बढ़कर हो? हमारे अपने देशके पादरी-पुरोहित अपने बेहूदा मतोंकी स्थापनाके लिये वेबस्टर तथा दूसरे सफल राजनीतिज्ञोंकी सम्मतियाँ उद्धृत करते हैं। मानो उनकी सम्मतियाँ ही कोई प्रमाण हों।

ये तथाकथित महापुरुष अनेक बातोंमें बड़ी गलतियाँ करते रहे हैं। लार्ड बैकन अपने जीवनके अन्तिम दिनतक यह मानता रहा कि सूर्य और तारागण इस छोटी पृथ्वीके चारों ओर घूमते हैं। मॅथ्यूहेलका दृढ विश्वास था कि जादू कर सकनेवाली स्त्रियाँ होती हैं। जॉन-वेजलीका विश्वास था कि भूकम्प पापका परिणाम है। और, यदि भगवान ईसापर ईमान ले आया जाये तो उससे बचा जा सकता है!

८

महापुरुषोंकी मूर्खता और पागलपनपर बड़े बड़े ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं।

कुछ ही वर्ष पहले जो सच्चे महापुरुष थे उन्हें यातनायें दी गईं, कैद किया गया या जला दिया गया। इस प्रकार धर्म महापुरुषोंको अपनी ओर रखनेमें सफल हुआ।

असलमें यह बता सकना असम्भव है कि महापुरुष वास्तवमें क्या सोचते

थे। हम केवल यह जानते हैं कि उन्होंने क्या कहा। इन महापुरुषोंको अपने परिवारोंका पालन-पोषण करना था, उन्हें कारागारसे डर लगता था और वे नहीं चाहते थे कि उन्हें जलाया जाय। इस लिये यह सम्भव है कि वे एक तरहसे सोचते हों और दूसरी तरहसे बात करते हों।

पादरी-पुरोहितोंने इन आदमियोंको कहा "हमारे मतके साथ एक मत बनो, हमारी ओरसे बोलो; अन्यथा हम तुम्हें यातना दे देकर मार डालेंगे।" तब पादरी-पुरोहितोंने लोगोंको सम्बोधन किया और चिल्लाकर कहा—"जरा सुनो, महापुरुष क्या कहते हैं!"

कुछ वर्षोंसे वाणीकी स्वतन्त्रता जैसी चीज़ने जन्म लिया है और बहुत-से आदमियोंने अपने विचारोंको प्रकट किया है। अब धर्मोपदेशक लोग पहलेकी तरह नामोंकी दुहाई नहीं देते। जो वास्तवमें महान् हैं वे उनकी ओर नहीं हैं आधुनिक विचारके नेता ईसाई नहीं है। अब अविश्वासी और नास्तिक भी बड़े बड़े नामोंकी दुहाई दे सकते हैं—ऐसे नाम जो मानसिक विजयके द्योतक हैं। हमबोल्ट, हैल्महोल्टज़, हैकल, हक्सले, डारविन, स्पैंसर, टैण्डल तथा अनेक दूसरे महान् व्यक्ति विचारके संसारमें खोज और आविष्कारका प्रतिनिधित्व करते हैं। ये लोग विचारक थे और हैं, तथा इनमें अपने विचारोंको प्रकट करनेका साहस था और है। वे न तो पादरी-पुरोहितोंकी गुड्डियाँ थे, न हैं और न प्रेतोंके काँपते हुए पुजारी।

अनेक वर्षोंसे अमरीकी कालेजोंके अधिकांश सभापति जातिके मानसिक विकासको रोकनेके पवित्र कार्यमें लगे रहे हैं। वे यहाँतक सफल हुए हैं कि उनके शिष्योंमेंसे कोई भी न तो बड़ा वैज्ञानिक हुआ है और न है।

अपने मतका समर्थन करनेके लिये अब पुराण-पन्थी लोग जीवितोंके नाम नहीं लेते। उनके सभी गवाह कब्रोंमें हैं। सभी महान् ईसाई मर गये हैं।

आज हम तर्क चाहते हैं, नाम नहीं; दलील चाहते हैं, सम्मतियाँ नहीं।

किसी व्यक्ति अथवा धर्मका अन्धानुकरण पतनका द्योतक है। तर्कसे शासित होनेसे बढ़कर श्रेष्ठतर कुछ नहीं। सत्यद्वारा पराजित होनेका मतलब है विजयी होना। अनुकरण करनेवाला आदमी गुलाम है। विचार करनेवाला स्वतन्त्र है।

हमें याद रखना चाहिये कि अधिकांश मनुष्य अपनी परिस्थितिसे शासित रहे हैं। तुर्किस्तानमें बहुतसे समझदार आदमी मुहम्मदके अनुयायी हैं। वे कुरानके झूलेमें झूले थे। उन्हें अपनी शक्ल-सूरतकी तरह अपनी धार्मिक सम्मतियाँ भी अपने माता-पितासे मिलीं। धर्मके सम्बन्धमें उनके मतका कोई विशेष मूल्य नहीं। अपने देशके ईसाइयोंके बारेमें भी यही कहा जा सकता है। उनके विश्वास, विचार और खोजके परिणाम न होकर परिस्थितिके परिणाम हैं।

सभी मज़हब अज्ञानके परिणाम हैं और असभ्यताकी अँधेरी रात्रिमें उनका बीजारोपण हुआ है।

जब रोम-साम्राज्यका पतन हो गया, जब सारा वैभव जाता रहा, जब व्यापार लगभग रुक गया, जब दुर्बल हाथ अधिकारके दण्डको सँभाल न सके, जब लोग कला और अपने पुरानी सामर्थ्यको भूल गये, तब ईसाई आये। उन्होंने मर्त्य-लोककी सभी चीज़ोंकी ओर घृणाकी दृष्टिसे देखकर अपने बन्धुओंको परलोककी बात बताई—बादलोंके उसपार अनन्त-सुखकी।

यदि विद्याका ह्रास न हो गया होता, यदि लोगोंको शिक्षा मिली होती, यदि उन्होंने यूनान और रोमके साहित्यको जाना होता, यदि उनका कलाकी चीज़ोंसे परिचय हुआ होता, यदि उन्होंने रोमका इतिहास पढ़ा होता, यदि उन्होंने तमाम शक्ति-शाली मृत विचारकोंके विचारोंका ज्ञान प्राप्त किया होता, तो ईसाई मिथ्याविश्वासके बीजोंको उगनेके लिये कहीं कोई ज़मीन न मिलती।

लेकिन आरम्भिक ईसाई कला, संगीत और आनन्द—सबसे घृणा करते थे। उन्होंने मानव-जातिको तिरस्कृत किया। उनका मत था कि यह जीवन केवल दूसरे जीवनकी तैयारीमें व्यतीत होना चाहिये और शिक्षा आदमीके दिमागमें व्यर्थके सन्देह भर देती है तथा विज्ञान आदमीकी आत्माको परमात्मासे दूर कर देता है।

९

दो रास्ते हैं। एक परमात्माके लिये जीनेका है। उसका अनेक बार अनुभव हो चुका है। परिणाम हर बार एक ही हुआ है। बहुत वर्ष पहले

इसका अनुभव फिलस्तीनमें किया गया। जिन लोगोंने ऐसा किया उनके परमात्माने उनकी रक्षा नहीं की। वे पराजित हुए, प्रताड़ित हुए और देशसे निकाल दिये गये। उनका देश उनके हाथसे जाता रहा और वे दुनियामें इधर उधर छितरा गये। अनेक शताब्दियों तक वे अपने परमात्मासे सहायताकी आशा लगाये बैठे रहे। उनका विश्वास था कि वे फिर इकट्ठे हो जायेंगे, उनके शहर, मन्दिर और वेदिकायें फिर बन जायेंगी और वे अपने परमात्माकी सहायतासे अपने शत्रुओंको फिर जीत लेंगे और संसारपर शासन करेंगे। ज्यों ज्यों शताब्दियाँ बीतती गई हैं, यह आशा दुर्बलतर होती गई है। अब तो समझदार लोग इसे एक मूर्खतापूर्ण स्वप्न ही समझने लग गये हैं।

परमात्माके लिये जीनेकी परीक्षा स्विटज़रलैण्डमें की गई। उसका परिणाम दासता और यातना हुआ। सुधार और उन्नतिका प्रत्येक मार्ग बन्द कर दिया गया। केवल अधिकारीगण ही अपने विचारोंको व्यक्त कर सकते थे। किसीने भी इस संसारमें लोगोंको सुखी बनानेका प्रयत्न नहीं किया। निर्दोष मनोरंजनको पाप कहा गया। हँसना मना था। तमाम स्वाभाविक प्रसन्नताओंसे दूर दूर रहना होता था। स्वयं प्रेम तकको पाप कहकर उसकी निन्दा की गई।

उनका मनोरंजन व्रत रखने और प्रार्थनायें करनेसे होता, प्रवचन सुननेसे होता, अनन्त-वेदनाकी चर्चा करनेसे होता, पुराने-प्रवचनकी वंशावलियाँ रटनेसे होता और होता कभी कभी अपने किसी साथीको जला डालनेसे।

परमात्माके लिये जीनेकी परीक्षा स्काटलैण्डमें हुई। लोग कर्कोंके गुलाम और दास बन गये। पुजारी छोटे मोटे अत्याचारी थे। उन्होंने जीवनके स्रोतमें ही विष मिला दिया। वे हर परिवारके कामोंमें दखल देते। हर घरका प्राइवेट-जीवन अरक्षित था। उन्होंने भय और मिथ्या-विश्वासके बीज बोये। उनका कहना था कि वे ईश्वरके संदेशवाहक हैं, और उनके अधिकारको अस्वीकार करना नास्तिकता है, और जो भी उनकी आज्ञाओंका पालन नहीं करेंगे, उन्हें अनन्त-वेदना सहन करनी होगी। उनके शासनमें स्काटलैण्ड दुःख और दर्दका देश बन गया था। सारे लोग गुलाम हो गये थे।

परमात्माके लिये जीनेकी परीक्षा नये-इंग्लैण्डमें हुई। पुराने प्रवचनके अनुसार एक सरकारकी स्थापना की गई। जो क़ानून बने वे अधिकांशमें तुच्छ थे,

बेहूदा थे। जिन दण्डोंकी व्यवस्था की गई वे अन्तिम दर्जेतक रक्त-रञ्जित थे। धार्मिक स्वतन्त्रता एक अपराध थी, परमात्माका अपमान। यदि कोई आदमी किसी अधिकारीसे भिन्न मत रखता था तो उसे यातना दी जाती थी, कोड़े लगाये जाते थे, अङ्ग भङ्ग कर दिये जाते थे और देश-निकाला दे दिया जाता था। सभी बातोंपर पादरी-पुरोहितोंका अधिकार था। उनके दिलमें न दया थी, न करुणा थी। वे अपने अन्तस्तलसे प्राकृतिकको घृणाकी दृष्टिसे देखते थे। वे परलोकके सुखोंका विश्वास दिलाते थे, किन्तु इस लोकमें जो सुख है उसे नष्ट करनेके लिये हर तरहसे प्रयत्नशील थे।

परमात्माके लिये जीनेकी परीक्षा अन्धकार-युगमें हो गई। हजारों बेड़ियाँ रक्तसे रंगी गईं, असंख्य तलवारें आदमियोंकी छातीमें भोंक दी गईं। मानवके मांसको चिताओंने भस्मीभूत कर दिया। जिन्होंने कुछ विचार करना चाहा उनके घर कारागारोंमें बने। परमात्माके नामपर हर अत्याचार हुआ, पृथ्वी परसे स्वतन्त्रताका लोप हो गया। हर जगहकी एक ही कहानी है। परमात्माके लिये जीवन व्यतीत करनेने संसारको रक्त और आगकी लपटोंसे भर दिया।

और दूसरा रास्ता है—हम आदमीके लिये जियें, इस संसारके लिये जियें। आओ, हम आदमीके मस्तिष्कको विकसित करें और हृदयको विशाल बनायें। हम पता लगायें कि किस तरह रहनेमें सुख मिलता है और उसी तरह रहें। हम अज्ञान, दरिद्रता और अपराधोंको नष्ट करनेके लिये जो भी कुछ कर सकते हों करें। हम शरीरकी आवश्यकताओंकी पूर्तिकी भरपूर चेष्टा करें, दिमागकी भूख मिटानेका भरपूर प्रयत्न करें। हम प्रकृतिके रहस्योंका पता लगायें ताकि प्रकृतिकी अदृश्य शक्तियाँ आदमीकी अथक सेवामें लग जायँ। हम समस्त संसारको सुखी घरोंसे भर दें, देवताओंको अपनी चिन्ता आप करने दें, हम आदमीके लिये जियें। हम इस बातको याद रखें कि जिन्होंने प्रकृतिके रहस्योंका पता लगानेकी चेष्टा की है उन्होंने अपने मानव-बन्धुओंको कभी कोई यन्त्रणा नहीं दी। गणित-ज्योतिषके ज्ञाताओंने तथा रसायन-शास्त्रज्ञोंने आदमियोंके लिये न कोई ज़ंजीर बनाई, न कारागार। भूगर्भ-वेत्ताओंने किसी नई यन्त्रणा-पद्धतिका आविष्कार नहीं किया। दार्शनिकोंने अपने पड़ौसियोंको आगकी बलि चढ़ाकर अपने कथनकी सचाईका प्रमाण नहीं दिया। महान् नास्तिक और चिन्तक सदा आदमीके कल्याणके लिये जिये।

सत्यकी खोज करना, मानसिक ईमानदारी, दूसरोंको सचाईके साथ अपनी बात कहना, अथवा ईमानदाराना शब्दोंमें अपने दिमाग़का सही चित्र उपस्थित करना — यह एक श्रेष्ठ कार्य है।

१०

दोनों रास्तोंमेंसे एक है—तंग रास्ता, जिसपर स्वार्थी लोग अकेले चलते हैं, जिसपर उनके बच्चे और पति-पत्नी भी साथ नहीं चल सकते। मिथ्या-विश्वासके रेगिस्तानकी यह तंग सड़क है। यदि इस रास्तेपर तुम्हें एक फूल दिखाई दे जाये, तो उसे न उठाओ। यह लोभ है। इसके पत्तोंमें एक साँप छिपा है। अपनी आँखें 'नये यरुशलम' की ओर रखो। स्त्री, बच्चों अथवा मित्रकी ओर पीछे मुड़कर न देखो। तुम केवल अपने आपको बचानेकी चिन्ता करो। भले ही जो लोग तुम्हें प्रेम करते हैं वे सभी नरकमें ही पड़े रहें, तुम स्वर्गमें प्रसन्न रह सकोगे। विश्वास रखो, श्रद्धा रखो और तुम पुरस्कृत होगे। न दाईं ओर देखो और न बाईं ओर। सीधे नाककी सीधमें चले चलो तो तुम अपनी निकम्मी, शुष्क, स्वार्थी आत्मा की रक्षा कर लोगे!

यह वह तंग सड़क है जो पृथ्वीसे ईसाइयोंके हृदयहीन स्वर्गकी ओर जाती है।

दूसरा रास्ता है—विशाल रास्ता। मुझे चौड़ा रास्ता दीजिये जो कमसे कम इतना चौड़ा अवश्य हो कि हम सब उसपर मिलकर चल सकें। चौड़ा रास्ता, जहाँ पक्षी गाते हों, जहाँ सूर्य्य चमकता हो और जहाँ पानीके झरने कल कल करते हों।

आओ, हम सारे संसारके साथ चौड़े रास्तेपर चलें, विज्ञान और कलाके साथ, संगीत और नाटकके साथ और उस सबके साथ जो प्रसन्न करता है, जो धड़कन पैदा करता है, जो संस्कृत बनाता है और जो शान्ति प्रदान करता है।

आओ हम पति-पत्नी, बच्चों और मित्रोंके साथ इस चौड़ी सड़कपर चलें

और उस तमाम आनन्द तथा प्रेमके साथ जो जीवनके उषा-काल और जीवनकी गोधूलि-बेलाके विचित्र दिनमें हमें प्राप्त हो सकता हैं।

यह संसार संगतरोंका एक महान् वृक्ष है, जो खिला है, जिसपर ऐसे फल लगे हैं जो पके हैं और पक रहे हैं। जहाँ झुकी हुई टहनियोंके नीचे पड़े हुए पत्ते शनैः शनैः धूलिमें मिल जाते हैं।

प्रत्येक संगतरा अपना जीवन है। हम इसको इतना निचोड़ लें और इसमें जितना भी रस है निकाल लें, ताकि मृत्युके समय हम कह सकें : हमने जीवन-रसका पान कर लिया और अब उसमें सूखे छिलकोंके अतिरिक्त कुछ शेष नहीं रहा।

हम चौड़े और प्राकृतिक रास्तेपर चलें। हम आदमीके लिये जियें।

संसारको मिथ्या-विश्वासके कारण, मज़हबके कारण, पशु, पत्थर और परमात्माकी पूजाके कारण जो यंत्रणा भुगतनी पड़ी है उसका विचार करनेसे ही आदमी पगला जा सकता है। अज्ञान और भयकी लम्बी रात्रिकी बात सोचो, अतीतके दुःख-दर्दकी बात सोचो, उन दिनोंकी जो अब लौटकर नहीं आयेंगे।

मैं देखता हूँ। मैं देखता हूँ, अँधेरी-गुफाओंमें गैंडुली मारे हुए साँपोंको जो अपने शिकारकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। मुझे दिखाई देते हैं उनके खुले हुए जबड़े, उनकी चंचल ज़बानें, उनकी चमकती हुई आँखें तथा उनके निर्दयी दाँत। मैं देखता हूँ कि किस प्रकार वे नाग-देवताको संतुष्ट करनेके लिये माता-पिता द्वारा दिये गये बच्चोंको डस डसकर मार डालते हैं।

मैं फिर देखता हूँ। मुझे दिखाई देते हैं पत्थरोंके वे मन्दिर जिनपर सोना जड़ा हुआ है। मुझे मानवी रक्तसे लाल वेदिकायें दिखाई देती हैं। मुझे वे पादरी-पुरोहित दिखाई देते हैं जो लड़कियोंकी छातीमें छुरे भोंक देते हैं।

मैं फिर देखता हूँ। मुझे दूसरे मन्दिर और दूसरी वेदिकायें दिखाई देती हैं, जहाँ बच्चोंका मांस और रक्त आगकी लपटोंकी भेंट चढ़ाया जाता है। मुझे और दूसरे मन्दिर, दूसरे पुरोहित और दूसरी वेदिकायें दिखाई देती हैं, जहाँ बैलों तथा भेड़ोंके बच्चोंका रक्त चूता है।

मैं फिर देखता हूँ। मैं दूसरे मन्दिर, दूसरे पादरी-पुरोहित, और दूसरी

वेदिकायें देखता हूँ, जिनपर आदमीकी स्वतन्त्रताका बलिदान होता है। मैं देखता हूँ। मैं देखता हूँ परमात्माके बड़े बड़े गिरजा-घर और किसानोंकी झोंपड़ियाँ। मैं देखता हूँ राजाओं और पण्डे-पुरोहितोंके ठाट-बाटके कपड़े और ईमानदार आदमियोंके चीथड़े।

मैं फिर देखता हूँ। परमात्माके प्रेमी आदमियोंके हत्यारे हैं। मैं देखता हूँ कि जो श्रेष्ठ हैं, वे कारागारोंमें पड़े हैं। मुझे दिखाई देते हैं वे लोग जिन्हें देश-निकाला दे दिया गया है, जो दर दर भटकते हैं, जिन्हें अछूत बना दिया गया है, जिन्हें शहीद कर दिया गया है, जिन्हें विधवा बना दिया गया है तथा जिन्हें अनाथ कर दिया गया है।

मै देखता हूँ कि पादरी-पुरोहितोंने सारे संसारको पद-दलित कर रखा है, स्वतन्त्रता बेड़ियोंमें जकड़ी पड़ी है, हर सद्गुण एक अपराध बना हुआ है, हर अपराध एक सद्गुण बना हुआ है, बुद्धिसे घृणा की जाती है, मूर्खताको पवित्रता-का पद दिया जाता है, ढोंगके सिरपर ताज है तथा सम्मानका श्वेत-मस्तक लज्जासे झुका हुआ है।

मैं फिर देखता हूँ। मुझे आशाकी पूर्व दिशाके मनोहर आकाशपर उषाकी सूचना देनेवाली पहली पीली-किरण दिखाई देती है। मैं देखता हूँ, और मुझे राखमेंसे, रक्तमेंसे तथा आँसुओंमेंसे वे वीर बाहर आते दिखाई देते हैं जो अतीतका बदला लेंगे और भविष्यको आशीर्वाद देंगे। मुझे एक भयानक युद्ध दिखाई देता है और उस भयानक युद्धमें सिंहासन डगमगाते, बेदिकायें गिरतीं, जंजीरें टूटतीं तथा मत-परिवर्तन होते दिखाई देते हैं। ऊँचेसे ऊँचे शिखरपर पवित्र प्रकाश पहुँच गया है। अरुणोदय हो गया है।

मैं फिर देखता हूँ। मैं देखता हूँ कि समुद्र-यात्री समुद्रोंको पार कर रहे हैं। मैं देखता हूँ कि आविष्कारक चतुराईसे प्रकृतिकी शक्तियोंको वशमें कर रहे हैं। मैं देखता हूँ कि बच्चोंके लिये स्कूल बन रहे हैं। शनैः शनैः पादरी-पुरो-हितोंका स्थान अध्यापक—प्रकृतिके व्याख्याता—ले रहे हैं। दार्शनिक पैदा हो रहे हैं। विचारक अपने मानसिक धनसे संसारको मालामाल कर रहे हैं। वाणी सत्य-भाषणसे धनी हो रही है।

मैं फिर देखता हूँ। किन्तु अब भविष्यकी ओर। पोप, पादरी-पुरोहित,

और राजा सब समाप्त हो गये हैं। वेदिकायें और सिंहासन धूलमें मिल गये हैं। पृथ्वी और आकाशके तानाशाह मिट गये हैं। देवता मर गये हैं।

मानवता एक नये धर्मको स्वीकार करने जा रही है। यह इस संसारका धर्म है। यह शरीर, दिल और दिमागका धर्म है---स्वास्थ्य और आनन्दका धर्म है।

मैं एक शान्त संसार देखता हूँ, जहाँ परिश्रमको उसका पूरा पुरस्कार मिलता है, जहाँ कारागार नहीं हैं, जहाँ दरिद्रोंको काम देनेवाले घर नहीं है, जहाँ पागलखाने नहीं हैं, जहाँ किसीको फाँसीपर नहीं लटकाया जाता, जहाँ गरीब ईमानदार लड़कीको पाप और मृत्युमेंसे कोई चुनाव नहीं करना पड़ता।

मैं एक संसार देखता हूँ जिसमें भिखमंगा अपना हाथ फैलाए हुए नहीं हैं, जहाँ कंजूस अपनी पथरीली आँखोंसे घूर नहीं सकता, जहाँ अभावकी दयनीय चीत्कार नहीं है, जहाँ अपराधीका मुर्झाया हुआ चेहरा नहीं हैं, जहाँ झूठ बोलनेवाले होंठ नहीं हैं, और नहीं हैं जहाँ निर्दय घृणापूर्ण आँखें।

मैं शरीर और दिमागके रोगोंसे मुक्त एक नसल देखता हूँ, सुन्दर और सुडौल। और जैसे जैसे मैं देखता हूँ मुझे जीवन लम्बा होता दिखाई देता है, भय नष्ट होता दिखाई देता है, आनन्द गहरा होता दिखाई देता है और प्रेम अधिक रंगीन। सारा संसार स्वतंत्र है।

यह होकर रहेगा।

प्रगति

मैं इस बातसे अवगत हूँ कि जो विषय मैंने चुना है, वह एक प्रकारसे अनन्त है, और अपने व्यापक अर्थमें यह आदमीकी बुद्धिकी सीमाके सर्वथा बाहर है।

मैं इससे भी परिचित हूँ कि सच्ची प्रगति क्या है, इस बारेमें अनेक सम्मतियाँ हैं। जिसे एक आदमी प्रगति समझता है, उसे ही दूसरा आदमी बर्बरता समझता है। अनेक लोग प्राचीनके लिये एक अद्भुत गौरवकी भावना रखते हैं, केवल इस लिये कि वह प्राचीन है। उन्हें किसी ऐसी चीज़में कोई सौन्दर्य नहीं दिखाई देता जिसपर युगोंसे पड़ी हुई धूलको प्रशंसाकी साँससे उड़ाना न पड़े।

उनका कहना है कि प्राचीन ऋषि-मुनियोंके सदृश कोई ऋषि-मुनि नहीं हुए, प्राचीन सरकारों जैसी सरकारें नहीं, व्याख्याता नहीं, कवि नहीं, राजनीतिज्ञ नहीं, जैसे वे थे जो पिछले दो हज़ार वर्षसे धूलि बने पड़े हैं। दूसरे प्राचीनता-से घृणा करते हैं और एकमात्र आधुनिकताके प्रशंसक हैं, एक मात्र इस लिये कि यह आधुनिकता है। उन्हें प्राचीनमें इतनी अधिक बातें निन्दनीय लगती हैं कि वे लोग लगभग सभी बातोंकी निन्दा करते हैं। मुझे आशा है कि मुझमें इतनी कृतज्ञताकी भावना अवश्य है कि मैं अतीतके महान् और वीर-चिन्तकोंके प्रति अपना आभार प्रदर्शित कर सकूँ, और मुझमें इतनी मनुष्यता भी है कि मैं किसी भी बातको केवल इस लिये स्वीकार न करूँ क्योंकि इसे उन्होंने कहा है; और मुझमें इतना नैतिक साहस भी अवश्य है कि मैं किसी विचारको यदि ठीक समझता हूँ तो उसे स्वीकार कर सकूँ, भले ही वह कितना ही आधुनिक क्यों न हो। सत्य न तरुण होता है, न वृद्ध; न आधुनिक होता है, न प्राचीन, किन्तु हर स्थान और समयके लिये एक ही रहता है। सतत प्रयत्नसे सत्यकी खोज होनी चाहिये, यह उत्सुकतापूर्वक स्वीकार किया जाना चाहिये, जीवनसे भी अधिक प्यार किया जाना चाहिये और कभी परित्यक्त नहीं होना चाहिये।

श्रमको तमाम ऐश्वर्यका आधार माननेके विचारके अनुसार और प्रसन्नताको एक दूसरा विचार अथवा सत्य माननेके अनुसार यदि श्रमिक और ससारको प्रसन्न बनाना हो तो श्रमिकको एक स्वतन्त्र आदमी होना चाहिये, विचारकको स्वतन्त्र होना चाहिये। इस विषयमें मैं जो कुछ कहना चाहता हूँ, उसके सिलसिलेमें मैं आपको प्राचीनतम कालकी ओर नहीं ले जाना चाहता। मेरा इस समयका काम मध्य-युगसे आरम्भ करनेसे भी चल जायगा। उन दिनों यूरोपमें किसी प्रकारकी स्वतन्त्रता न थी, न दिमाग़की और न शरीर-की। श्रमसे घृणा की जाती थी और श्रमिकको एक पशुसे कुछ थोड़ा ही ऊपर समझा जाता था। संसारपर अज्ञानका परदा पड़ा हुआ था और आदमीकी कल्पनाके साथ साथ अन्ध-विश्वास उड़ा उड़ा फिरता था। आकाश देवताओं और भूत-प्रेतोंसे भरा था। हर चीज़ एक चमत्कार बनी हुई थी। एक आद-मीको विशिष्ट व्यक्ति बननेके लिये या तो सैनिक बनना पड़ता था, या साधु। वह प्राणियोंकी हत्या करने और झूठ बोलनेमेंसे एक बात चुन सकता था। तुम्हें यह याद रखना चाहिये कि उन दिनों जातियोंका आपसी युद्ध अपनेमें एक सिद्धि था, मात्र साधन नहीं। युद्ध और धार्मिक सिद्धान्तोंका ज्ञान रखना—यही दो लोगोंके काम थे। कोई भी आदमी उद्योग-परायण होकर यश-का अर्जन तो क्या जीविका भी नहीं चला सकता था। सापेक्ष दृष्टिसे उस समय कहीं कोई व्यापार न था। परस्पर एक दूसरेसे खरीदने-बेचनेकी बजाय जातियाँ जो कुछ चाहती थीं ज़ोर-जबर्दस्ती छीन लेती थीं। हर ईसाई देशका यह मत था कि किसी मुसलमानकी सम्पत्ति छीन लेना डाका डालना नहीं था और उचित कारणके रहते न रहते सम्पत्तिके स्वामियोंको मार डालना हत्या करना नहीं था। उन दिनों पढ़ना लिखना बड़ी भयानक बात समझी जाती थी और यदि कोई सामान्य आदमी पढ़ना लिखना सीख लेता तो वह या तो नास्तिक समझा जाता था या जादू-टोना करनेवाला।

उस समयके अज्ञान, निर्दयता, मिथ्या विश्वास और दिमागी अन्धेपनकी कल्पना कर सकना हमारे लिए लगभग असम्भव है। उन अन्धकारपूर्ण तथा रक्त-रञ्जित वर्षोंका इतिहास पढ़ते समय मैं मानवताकी शरारत और मूर्खता-पर आश्चर्य करता हूँ। इतना सब होने पर भी सारी समस्याका सार इतना ही

है कि वे स्वतन्त्रतासे घृणा करते थे, वे मन और शरीरकी मुक्तिसे घृणा करते थे। उन्होंने कुछ लोगोंके लिये मिथ्या-विश्वासकी जंजीरें गढ़ीं, कुछ दूसरे लोगोंके लिये लोहेकी। उनपर तीन भयानक बातोंका राज्य था—पादरी-पुरोहितकी ऊँची टोपीका, तलवारका और ज़ंजीरोंका।

तुम तब तक उन दिनोंके बारेमें अपनी कोई ठीक सम्मति नहीं बना सकते जब तक उस समयके प्रामाणिक ग्रन्थोंको न पढ़ो, उस समय जो क़ानून लागू थे उनका ज्ञान प्राप्त न करो, उस समयके रीति-रिवाजोंको न जानो और उन विचारोंसे परिचित न होओ जो सामान्यतया ठीक समझे जाते थे। कोई यह विश्वास नहीं करता था कि ईमानदारीसे हुई गलती निर्दोष मानी जा सकती है; किसीको धार्मिक-स्वतन्त्रता जैसी किसी चीजका स्वप्न नहीं आता था। पन्द्रहवीं शताब्दीमें इंग्लैण्डमे नियमलिखित क़ानून जारी था:—

जो कोई अपनी मातृभाषामें धर्म-ग्रन्थ पढ़ेगा, उसकी ज़मीन, पशु, शरीर जीवन तथा उसके वंशजोंकी सब सम्पत्ति सदाके लिए ज़ब्त कर ली जायगी। ईश्वरके प्रति नास्तिक, राज्यके शत्रु और देशके भयानक द्रोही माने जायेंगे। क़ानून लागू होनेके अगले ही दिन इस क़ानूनका उल्लंघन करनेके अपराधमें उनतालीस आदमियोंको फाँसी दी गई और बादमें उनके शरीर जला दिये गये।

यूरोपके सभी भागोंमें इसी प्रकारके अन्यायपूर्ण, रक्तरंजित, और निर्दयता पूर्ण क़ानून प्रचलित थे। सोलहवीं शताब्दीमें फ्रांसमें एक आदमीको केवल इस लिये जीवित जला दिया गया क्योंकि उसने मैले कुचैले ईसाई साधुओंको घुटने टेककर नमस्कार करनेसे इनकार किया था। किसी ऐसे विषयमें जिसके बारेमें उभय पक्षमेंसे कोई कुछ नहीं जानता, मतभेद होने मात्रके कारण पुरुषों, स्त्रियों तथा छोटे बच्चोंपर होनेवाले हजारों भयानक अत्याचारोंके उदाहरण मैं आपको सुना सकता हूँ। लेकिन, आप सभी धार्मिक अत्याचारोंके इतिहाससे परिचित हैं।

एक चीज़ सचमुच बड़े आश्चर्यकी है। उस समयके वे सुधारक जो अपने समयके भयानक अत्याचारोंके विरुद्ध लड़े हाथमें शक्ति आते ही दूसरोंपर असीम अत्याचार करने लग गये। लूथर, संसारका एक महान् पुरुष था।

वीर पुरुष। उसका कथन है:-"हर किसीको स्वतंत्र रीतिसे पढ़नेका अधिकार है, ताकि आदमी अपने आपको जीवन और मृत्युके लिये तैयार कर सके।" यह सब होनेपर भी 'धार्मिक स्वतन्त्रता' से जो भाव हम ग्रहण करते हैं, उसका उसके लिये कोई अर्थ न था।

जान नास्क तभी तक धार्मिक स्वतन्त्रताका पक्षपाती था जब तक उसके साथ बहुमत नहीं था। जिनेवा, स्विट्जलैंण्डमें प्रो० कैस्टलियो पहला पादरी था जिसने ईमानदारीसे की जानेवाली ग़लतीको निर्दोष ठहराया और जिसने अपने आपको व्यापक सहनशीलताका पक्षपाती घोषित किया। इस आदमीका नाम अविस्मरणीय रहना चाहिये। उसके श्रेष्ठ विचारोंके कारण उससे उसका आचार्यत्व छीन लिया गया। यद्यपि वह उन्हींके मतका था, तो भी जान कालविन और उसके अनुयायियों द्वारा वह जिनेवासे खडेड़ दिया गया। लगभग उसी समय फ्रांसमें बोदिनस नामका एक वकील हुआ है। उसने भी आर्थिक-स्वतन्त्रता जैसी कुछ चीजका पक्ष लिया। जनता बुरी तरह उसके विरुद्ध थी। लोग हर समय इस बातके लिये तैयार थे कि आदमीमें जो यह घृणित नास्तिकताका प्रवेश हो गया है कि उसे अपने लिये स्वयं सोचनेका अधिकार है, उसे आग और ज़ंजीरोंकी सहायतासे निकाल बाहर करें। तुम्हें स्मरण रखना चाहिये कि उन दिनोंमें यदि सामान्य साधनोंद्वारा किसी आदमीका मत-परिवर्तित नहीं हो सकता था, तो वे उन सब नई नई यंत्रणाओंको काममें लाते थे, जिनका धार्मिक कट्टरता आविष्कार कर सकती थी। वे लोगोंके पैरोंको लोहेके जूतोंमें कसकर पीस डालते थे; वे उन्हें धीमी धीमी आगपर पकाते थे तथा वे उनके नाखून उखाड़ कर उनमें सुइयाँ घोंप देते थे। और यह सब किया जाता था, लोगोंको सत्यारूढ करनेके लिये! फ्रांसमें इस यन्त्रणाके विरुद्ध आवाज उठानेवाला पहला आदमी मौनतेन था। उसमें सामान्य-बुद्धि इतनी अधिक मात्रामें थी कि वह अपने समयका एक अत्यन्त असामान्य आदमी माना जायगा। किन्तु करोड़ों अज्ञ लोगोंकी आवाजके सम्मुख एक आदमीकी आवाजका क्या मूल्य था—अनन्त समुद्रमें डूबते हुए एक आदमीकी आवाज़का।

यह असम्भव है कि धार्मिक स्वतन्त्रताके लिये लड़ी गई लम्बी और निरर्थक प्रतीत होनेवाली लड़ाईका इतिहास पढ़ा जाय और आदमीका मन

भय तथा घृणासे न भर जाय। लाखों पुरुष, स्त्रियाँ तथा बच्चे; कमसे कम एक करोड़ आदमी धार्मिक कट्टरताकी बलिवेदीपर चढ़ा दिये गये। इन आदमियोंके दिल भी हमारी ही तरह आशा, प्रेम और महत्वाकांक्षाओंके केन्द्र थे। वे फांसीके तख्तोंपर झुला दिये गये। वे कारागारोंमें पड़े पड़े समाप्त हो गये। वे अकाल और तलवारके घाट उतर गये। वे रेगिस्तानोंमें भटक भटक कर मर गये। वे अँधेरी गुफाओंमें पड़े पड़े सड़ गये। आखिरकार एक दिन उनका रक्त बदलेके लिये चिल्ला उठा।

जिस सिद्धान्तके लिये उन्होंने यातनायें सहीं, वह सिद्धान्त उनकी दुर्बलतासे बलवान् हुआ, उनके रक्त और आगसे उसका पोषण हुआ, उनकी पीड़ासे वह और भी अधिक पवित्र हो गया, उनकी वीरतासे महान् तथा उनकी मृत्युसे अमर। अंतमें उस सिद्धान्तकी विजय हुई और आज वह समस्त सभ्य संसारद्वारा स्वीकार कर लिया गया है। इस सिद्धान्तकी कीमत बहुत देनी पड़ी है; किन्तु यह सिद्धान्त अपनेमें इतना मूल्य-वान् है कि इसकी हजार-गुणा कीमत भी दी जा सकती है। धर्ममें स्वतन्त्रता होनी चाहिये, क्योंकि बिना स्वतन्त्रताके धर्म हो ही नहीं सकता। जहाँ तक मेरी बात है, मुझे इस बातका अभिमान है कि सर्व प्रथम अमरीकाकी ही मुक्तिपर इस सिद्धान्तकी स्थापना हुई, और कि महान् देशोंमें संयुक्त राज्य अमरीका ही वह प्रथम देश है जहाँके विधानमें सर्वप्रथम धार्मिक सहनशील-ताको एक कानूनका दर्जा दिया गया; इतना ही नहीं कि यह कानून बन गया है; किन्तु इस कानूनको एक सजग जनताका बल भी प्राप्त है। स्वतन्त्रताके बिना धर्म नहीं, पूजा नहीं। आदमीकी आँखको प्रकाश चाहिये, फेफड़ोंको हवा चाहिये, हृदयको प्रेम चाहिये और आत्माको स्वतन्त्रता चाहिये।

जादू-टोना

दूसरी बात जिसकी ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ यह है कि मध्य-युगमें सभी लोग, विज्ञ और अज्ञ, स्वामी और सेवक, पादरी, वकील, डाक्टर तथा नीतिज्ञ—जादू-टोनेमें विश्वास करते थे, नज़र लगनेमें, प्रेत आत्माओंके किसीके शरीरमें प्रवेश कर सकनेमें, जानवरों तथा कीड़े-मकौड़ों तकके शरीरमें। और सभी लोग यह भी विश्वास करते थे कि

लोगोंके शरीरोंमेंसे प्रेतात्माओंको निकालना उनका पवित्र कर्तव्य है। इसके अनुसार वे किसी भी ऐसे आदमीको जो मानवताके शत्रुओंके साथ सम्बन्ध बनाये है, फाँसीपर लटकाने और जला डालनेके लिये सदा तैयार रहते थे। यदि तुम उनकी भूमिका स्वीकार कर लो, तो फिर उनके कार्य्योंको भी ठीक स्वीकार करना ही पड़ेगा। यदि ये लोग सचमुच अपने पड़ोसियोंको कष्ट पहुँचानेके लिये प्रेतात्माओंसे सम्बन्ध जोड़ लेते हैं, तो वे भी यदि इन्हें नष्ट कर डालनेका प्रयत्न करते हैं तो ठीक ही करते हैं। यह जादू-टोने करनेका अपराध यूरोपके प्रत्येक नगरकी अदालतोंमें सिद्ध हुआ है। हजारों आदमियोंने जिनपर यह दोषारोपण किया गया था कि उनका प्रेतात्माओंसे सम्बन्ध है, अपने अपराधको स्वीकार किया है।

यह बात हमारी समझमें आती है कि कोई आदमी किसी बातको ठीक समझता हो और उसके लिये जान देनेको तैयार हो जाय। वह जानता है कि जो वास्तवमें भले आदमी हैं, उनकी उससे सहानुभूति है। वह आशा करता है कि सुदूर भविष्यमें उसका नाम कृतज्ञतासे याद किया जायगा। इससे भी बढ़कर उसे न्यायी परमात्माके समर्थनका भरोसा है। लेकिन जो आदमी अपने आपको प्रेतात्माओंसे सम्बन्ध रखनेवाला स्वीकार करता है, वह तो जानता है कि उसकी स्मृतिको भी लोग शाप देंगे और उसकी आत्मा अनन्त-विनाशको प्राप्त होगी। तो इतने आदमी अपना अपराध क्यों स्वीकार कर लेते थे? विचित्र प्रतीत होने पर भी मेरा यह विश्वास है कि वे अपने आपको अपराधी ही समझते थे। वे अपने आपको सर्वथा असहाय अवस्थामें पाकर, अपना अपराध स्वीकार कर लेते थे और मर जाते थे। ये बातें इतनी पर्य्याप्त हैं कि आदमी सोचने लगता है कि कभी कभी दुनिया सचमुच पागल हो जाती है और यह पृथ्वी विना मालिकका एक पागल-खाना है। मैं फिर दोहराता हूँ कि मेरा यह विश्वास है कि जो आदमी अपनेको अपराधी स्वीकार करते थे, उनका विश्वास था कि वे वास्तवमें अपराधी हैं। पहली बात तो यह थी कि वे स्वयं जादू-टोने और शैतानके लोगोंके सिर आनेमें विश्वास रखते थे। जब उनपर यह दोषारोपण हो जाता तो भय और घबराहटसे वे एक प्रकारसे पागल जैसे हो जाते। जब उन गरीबोंपर एक ऐसा अपराध लगा दिया जाता जिसे

असिद्ध कर सकना सम्भव नहीं होता था, और जब उनके मित्र तक उन्हें छोड़ उनसे घृणा करने लग जाते थे, जब वे और उनके मिथ्याविश्वास तथा भय ही साथी रह जाते थे, तो बेचारे उस यंत्रणासे मुक्ति पानेकी आशासे मृत्युको वरदान समझने लगते थे। आज हम और आप उस यंत्रणाकी कल्पना नहीं कर सकते।. लोगोंपर सर्वथा असम्भव अपराध लगाये जाते थे। जेम्स प्रथमके समयमें एक आदमीपर यह अपराध लगाया गया कि उसने एक राजकीय परिवारकी नौकाको डुबा देनेके लिये समुद्रमें तूफान उठा दिया। इंग्लैण्डके एक बड़े विद्वान् और प्रसिद्ध वकील सर मैथ्यू हेलके सामने एक स्त्रीपर यह मुकद्दमा चलाया गया था कि वह छोटे बच्चोंके मुँहसे सुइयाँ उगलवाती है!

लोगोंको ग्रीष्म ऋतुमें पाला पैदा करनेके लिये जला दिया जाता था, पैदा-वारपर ओले गिरा देनेके लिये, गऊओंका दूध सुखा देनेके लिये और शरा-बको अधिक खट्टी बना देनेके लिये भी। किसी आदमीका जीवन सुरक्षित नहीं था। द्वेषी शत्रुको केवल इतना ही करना पड़ता था कि वह उस आदमी-पर जादू-टोनेका इलज़ाम लगा दे और विचित्र लगनेवाली दो चार बातोंको सिद्ध कर दे। बस, फिर उसके अप्रिय-भाजनकी मृत्यु निश्चित थी। यह जादू-टोनेमें विश्वास इतना गहरा था कि इसमें किसी प्रकारका सन्देह प्रकट करना अपने आपपर ही सन्देह पैदा करना था और प्रायः मौतके घाट उतरना। उस युगमें यह माना जाता था कि भूत-प्रेत पशुओं तक पर भी आ जाते हैं और यदि किसी प्रेतवाले पशुकी हत्या कर दी जाय तो उस प्रेतकी भी हत्या हो जाती है। इस लिये वे पशुओंपर भी दोषारोपण करके, उनके विरुद्ध मुकद्दमे चलाकर उनकी हत्या करते थे।

कभी कभी कानूनी अदालतोंमें पशुओंकी गवाही तक ली जाती थी।

यूरोपमें यह कानून था कि यदि सूर्यास्त और सूर्योदयके बीचमें कोई किसीके मकानमें आ घुसे और मालिक-मकान उस चोरको मार डाले तो ऐसी हत्या करनेवाला निर्दोष माना जाता था।

लेकिन यह भी सोचा गया कि कोई आदमी किसीको यों ही अपने घर बुला ले और उसकी हत्या करनेके बाद कह दे कि यह चोरी करने आया

था तो उसको अपराधी माना जाय, अथवा नहीं ? इसका निराकरण करनेके लिये यह नियम बनाया गया कि यदि कोई ऐसा आदमी जो अकेला रहता हो, किसी दूसरेकी हत्या कर दे तो जब तक उस घरमें रहनेवाला कोई कुत्ता या बिल्ली चोरके चोर होनेकी गवाही न दे दे तब तक वह आदमी निर्दोष न माना जाय। यह समझा जाता था कि यदि किसी निरपराधको दण्ड मिलता होगा तो भगवान किसी न किसी तरह उस पशुसे किसी न किसी चमत्कारी ढंगसे गवाही दिलवा देंगे।

आग और पानीसे भी मुकद्मोंका निर्णय होता था। लोगोंसे लाल तप्त लोहेको हाथ लगानेके लिये कहा जाता था। यदि उनके हाथ जल जाते, तो वे अपराधी निश्चित हो जाते। इसी प्रकार आदमियोंके हाथ पैर बाँधकर उन्हें पानीमें गिरा दिया जाता। यदि वे डूब जाते तो अपराधी ठहर जाते।

मैंने ये उदाहरण केवल यह दिखानेके लिये दिये हैं कि जिन देशोंमें अज्ञानकी प्रधानता रहती है और जिन देशोंमें लोग तर्कका आधार छोड़ देते हैं वहाँ क्या क्या हुआ है और भविष्यमें भी हो सकता है। और यह भी दिखानेके लिये कि आदमी कितना ही बड़ा हो, वह अपने आपको अपने युगके मिथ्या-विश्वासोंसे बड़ी ही कठिनाईसे मुक्त रख सकता है।

लूथरका विश्वास था कि उसने न केवल शैतानको देखा है, बल्कि उसकी उससे सिद्धान्तके विषयमें चर्चा भी हुई है। एक बार उत्तेजनामें उसने एक कलमदान ही राजाके सिरपर दे मारा। जहाँ लगकर वह कलमदान टूटा उस दीवारपर अब भी स्याहीके निशान लगे हैं। मैं समझता हूँ कि शैतान-को तनिक चोट नहीं लगी होगी; क्योंकि ज्यों ही उसे लूथरकी नीयतका पता लगा होगा, वह चम्पत हो गया होगा।

जर्मनीके बादशाह चारलैस पाँचवेंके समयमें स्टोएकर नामके एक प्रसिद्ध गणितज्ञ और ज्योतिषीने हिसाब लगाकर यह भविष्यद्वाणी कर दी कि संसार-में एक दूसरी बड़ी भारी बाढ़ आनेवाली है। न केवल साम्राज्यके किन्तु समस्त यूरोपके मुख्य आदमी इस भविष्यद्वाणीमें अक्षरशः विश्वास करते थे। चारलैस पाँचवेंके सेनापतिकी इच्छा थी कि योग्य आदमियोंद्वारा देशभरकी माप करके यह पता लगाया जाय कि कौन कौनसे स्थल ऊँचे हैं; किन्तु

बादमें यह विचार छोड़ दिया गया क्योंकि बाढ़के बारेमें यह ज्ञात न था कि पानी कितनी ऊँचाई तक आयेगा।

हजारों आदमियोंने जो दरियाओं तथा समुद्रके किनारेपर नीची-जमीनमें रहते थे अपने घर-बार छोड़ दिये और ऊँची जगहोंपर रहनेके लिये निकले। अनन्त कष्ट हुआ। कुछ हालतोंमें लोग बूढ़ों, रोगियों तथा निर्बलोंको असहाय अवस्थामें आनेवाली बाढ़की दयाको समर्पित करके चले गये। उन्हें अपनेको किसी न किसी सुरक्षित स्थानपर ले जानेकी इतनी अधिक चिन्ता थी।

फ्रांसमें तूलूस नामक जगहपर लोगोंने सचमुच एक बड़ा भारी भण्डार बनाया और उसे खाद्य-सामग्रीसे भर लिया। जिस दिन वह बाढ़ आनेको थी उस दिनके गुजर जानेके काफी बाद जाकर लोगोंको उनके मानसिक-भयसे मुक्ति मिली और वे अपने घरोंपर लौटकर आये।

ऐसी बातोंपर लोग कभी विश्वास न करते यदि उनका 'परा-प्राकृतिक' में विश्वास न होता। कोई बात यदि वह सामान्य होती तो किसीको कहनेके योग्य न समझी जाती थी। आदमीका दिमाग जंजीरोंसे जकड़ा हुआ था। उसे गुलामीने विकृत कर दिया था। उस सबका परिणाम था काँपता हुआ कायर-आदमी। दिमागसे जो कुछ भी निकलता था, सब विकृत। हर विचार भयानक शक्ल लिये हुए था। लगभग हर कानून अन्यायपूर्ण था। उनका मज़हब इतना ही था कि भयानक देव एक बड़े भयानक देवकी पूजा करते थे। ठीक कहा जाय तो विज्ञान उस युगमें जी ही नहीं सकता था। उनके इतिहास सफेद झूठके पुलंदे थे। सारा यूरोप भयानक बेहूदा बातोंका घर बन गया था। जितने इतिहास थे, लगभग सभी पादरी-पुरोहितोंद्वारा लिखे गये थे। वे जितने मिथ्या-विश्वासी थे, उतने ही बेईमान थे। जो कुछ भी उन्होंने किया वह सब पवित्र ठगी थी। उन्होंने ऐसे लिखा है मानो सब कुछ उनकी आँखोंके सामने हो रहा है। उन्होंने हर महत्त्वपूर्ण देशका इतिहास लिख मारा। उन्होंने अतीत, वर्तमान तथा भविष्य—सबके बारेमें सब कुछ लिखा। चौदहवीं शताब्दीके एक प्रसिद्ध इतिहासज्ञ पैरिसके मैथ्यूने संसारको निम्नलिखित अमूल्य जानकारी दी है—

"यह सभीको ज्ञात है कि मुहम्मद पहले पोपसे नीचे पदपर था। वह

चाहता था कि वह 'पोप' बन जाय। जब वह अपने इस उद्देश्यमें असफल रहा, तो नास्तिक बन गया।"

इन्हीं सज्जनका कहना है कि मुहम्मद साहबने अत्यधिक शराब पी ली थी। वे नशेमें चूर होकर सड़कके एक किनारे गिर पड़े। उस अवस्थामें उन्हें एक सूअरने मार डाला। यही कारण है कि मुहम्मद साहबके अनुयायी आज भी सूअरके मांससे इतनी घृणा करते हैं। उसी समयके एक दूसरे इतिहासज्ञका कहना है कि अनुचित आदमी द्वारा चूम लिये जानेके कारण 'पोप' ने अपना एक हाथ काट डाला। वह हाथ अब भी पिछले पाँच सौ वर्षसे रोममें सुरक्षित रखा हुआ है।*

दूसरा विषय जिसकी ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ मशीन-सम्बन्धी प्रगतिका है। पशु केवल प्रकृति-प्रदत्त हथियारोंको ही काममें लाते हैं—चोंच, पंजे तथा दाँत। असभ्य आदमी लाठी और पत्थरका प्रयोग करते हैं। ज्यों ज्यों आदमी प्रगति करता है, वह ऐसे औज़ार बनाने लगता है, जिनसे वह हथियार बना सके। वह उनकी रचनाके लिये सबसे अच्छा सामान ढूँढ़ निकालता है। वह आगे चलकर अपनी सहायताके लिये किसी शक्तिका आविष्कार कर लेता है—गिरते हुए पानीके बोझका, हवाकी गतिका। तब वह पानीको भापका रूप देकर एक नई-शक्ति उत्पन्न करता है। उस भापसे वह उन मशीनोंको चलाता है जो एक सोचनेका काम छोड़कर शेष लगभग सभी कुछ कर सकती हैं। आप देखेंगे कि सबसे पहले हथियारोंके निर्माणमें ही आदमीकी सूझ-बूझ प्रकट हुई है। जीवनको लम्बा करने अथवा उसे बनाये रखनेके साधनोंका आविष्कार होनेसे बहुत पहले संसार जीवनको नष्ट करने वाले आविष्कारोंसे भर गया था। हत्या करनेका विज्ञान सदासे उन्नतिपर है—चिकित्सा-शास्त्र अब भी वैसा विज्ञान नहीं बन पाया है। हत्या करनेवालोंका सदासे सम्मान होता रहा है। उपयोगी तो सदैव घृणित समझा

---

* एक ईसाई पादरी इस श्रद्धासे भारत आया था कि लोग ईसाइयतके 'चमत्कारों' को सुनकर ईसाई-धर्मपर ईमान लायेंगे। कुछ ही समय बाद उसने अपने देश पत्र भेजा कि यहाँ हमारे 'चमत्कारों' का कोई प्रभाव नहीं होता, क्योंकि यहाँ तो पहले ही बन्दर समुद्र लाँघते हैं—अनु०।

गया है। प्राचीन समयमें खेतीका काम दासोंको ही ज्ञात था। जो निचले दर्जेके लोग थे, जो अज्ञ थे और जो घृणाके पात्र थे, वे ही हल चलाते थे। काम करनेका मतलब था अपना दर्जा घटाना। कारीगरका दर्जा किसानसे कुछ ही ऊँचा था। संक्षेपमें कहना हो तो श्रम करना अपमानकी बात थी। निकम्मे पड़े रहना कुलीनताका चिह्न था। खेती जब ढँगसे न होती थी तो पैदावार भी ऐसी ही होती थी। कुछ ही प्रकारके धान्य उपजाये जाते थे। परिणाम यही होता था कि बार बार अकाल पड़ता था और लोग कष्ट भुगतते थे। आजकी तरह एक देशसे दूसरे देशको धान्य नहीं भेजा जा सकता था। सड़कोंकी दुर्दशा थी। इसके अतिरिक्त लगभग हर देशने हर दूसरे देशके साथ युद्ध छेड़ रखा था। कुछ ही वर्ष पहले तक यही अवस्था रही है।

जरा आप देखें कि अठारहवीं सदीके आरम्भमें इंग्लैण्डकी क्या अवस्था थी। उस समय यूरोप-भरमें लंडनकी ही जन-संख्या सबसे अधिक थी; तो भी वह गंदा था, बेढंगा बना था, उसमें किसी प्रकारकी सफाईकी व्यवस्था न थी। प्रतिवर्ष हर २३ आदमियोंमेंसे एक आदमी मर जाता था। अब उससे कहीं अधिक घनी आबादीवाले नगरोंमें भी हर चालीस आदमियोंमेंसे एक आदमी मरता है। देशका अधिकांश भाग उजाड़ और दलदल था। लंडनके पास ही लगभग २५ मीलका एक टुकड़ा था, जो एक प्रकारका जंगल ही था। उस सारे टुकड़ेमें केवल तीन घर थे। वर्षा ऋतुमें सड़कोंपरसे गुजर सकना एक प्रकारसे असम्भव था। कीचड़से भरी हुई गलियोंमें बैल गाड़ियाँ खींचते थे। बड़े बड़े नगरोंके बीचके रास्ते भी सुविदित न थे। सामान ढोनेका मुख्य साधन घोड़े ही थे। कभी कभी लोग भी अपने आपको सामानके बीचमें छिपाकर यात्रा कर लेते थे। ढुलाई प्रति टन प्रति मील ३० सैंट थी। इसके बाद उड़न-गाड़ियाँ आरम्भ हुईं। वे प्रति दिन तीससे पचास मील तक जा सकती थीं। डाकका थैला घोड़ेकी पीठपर ५ मील प्रति घंटेकी गतिसे जाता था।

जिस समय पार्लियामैण्टने यह निर्णय किया कि राजकीय संग्रहालयकी वे तमाम तस्वीरें जिनमें ईसा-मसीह अथवा कुमारी मरियमके चित्र हों, जला दी जायें, उसके कुछ ही वर्ष पहले ग्रीक-मूर्तियाँ शिल्पियोंको दी गई थीं कि वे

उन्हें छील-छालकर ठीक कर दें। लैविस मुगलेटनका कहना था कि वह सबसे बड़ा और अन्तिम पैग़म्बर है। वह जिसे चाहे उसे बचा सकता है और जिसे चाहे उसका नाश कर सकता है। उसने यह भी पता लगाया था कि परमात्मा केवल छह फुट ऊँचा है और सूर्य यहाँसे केवल चार मील दूर। चौतीस जिले ऐसे थे, जिनमेंसे किसी एकमें भी कोई छापाखाना न था। सामाजिक सदाचार अत्यन्त बुरी अवस्थामें था। उस्ताद शागिर्दको पीटता था, अध्यापक विद्यार्थीको और पति पत्नीको। मुझे यह स्वीकार करते लज्जा आती है कि अब भी हमारे स्कूलोंमेंसे बेंतकी सजा देनेका रिवाज उठा नहीं है। यह असभ्यताका सूचक है और एक क्षणके लिये भी सहन नहीं होना चाहिये। यह अत्याचार है, नीचता है, घृणित है। जो अध्यापक बेंतसे पीटता है उसकी अपेक्षा जो माता-पिता अपने बच्चोंको पिटने देते हैं वे कम दोषी नहीं हैं।

उन दिनों जितने भी सार्वजनिक दण्ड दिये जाते थे वे सब बर्बरताके द्योतक थे। पुरुषों और स्त्रियोंको हाथ पाँव बाँधके चौखटेसे बाँध दिया जाता था और तब लोग उनपर ईंटोंके टुकड़े, सड़े हुए अण्डे तथा मरी हुई बिल्लियाँ फेंकते थे।

देशमें लोगोंके घर फूसकी झोंपड़ियाँ-मात्र थे। यदि किसी आदमीको सप्ताहमें एक दिन ताजा मांस खानेको मिल जाता तो वह धनी आदमी समझा जाता था। छः छः वर्षकी आयुके बच्चोंको श्रम करना पड़ता था। बाज़ारोंमें लैम्प नहीं थे, किन्तु डाकुओं और चोरोंकी कमी न थी।

लोगोंका नैतिक जीवन, जैसा प्रायः होता है, वैसा ही था जैसी उनकी बाह्य परिस्थिति। कहा जाता है कि पादरियोंने लोगोंको सदाचारी बनानेके लिये जो कुछ वे कर सकते थे, किया। वे अधिक नहीं कर सके। आदमीको भूख लगी हो तो तुम उसके मतमें परिवर्तन नहीं कर सकते। अच्छे कपड़े मिलेंगे तो वह अच्छा सिद्धान्त भी ग्रहण कर लेगा। अधिक खाना मिलेगा तो वह अधिक श्रद्धावान् भी हो जायगा। इसके अतिरिक्त एक दूसरा कारण भी है। यों भी पादरी लोगोंका स्तर सामान्यसे कुछ नीचा था। महारानी एलिजाबेथने एक आज्ञा निकाली थी कि कोई पादरी किसी नौकर-लड़कीसे तब तक शादी करनेकी बात न सोचे जब तक उसे उसके घरवालोंकी आज्ञा न हो।

इसी समय न केवल फ्रान्स, किन्तु सारे यूरोपकी हालत इँग्लैण्डसे भी खराब थी। दूसरी बातसे अधिक वह कौन-सी बात है जिसने इँग्लैण्डकी अवस्था बदल दी? उसके मशीन-निर्माताओंके आविष्कारोंने। पुराना सदाचारी बनानेका तरीका सदासे असफल रहा है और असफल रहेगा। यदि तुम किसीके सदाचारके स्तरको ऊँचा उठाना चाहते हो तो उसकी बाह्य परिस्थितिको अच्छा बनाओ। अठारहवीं शताब्दीके अन्तमें इँग्लैण्डके मशीन-निर्माता-ओंने तरह तरहकी मशीनोंका आविष्कार किया और इँग्लैण्डको इस योग्य बना दिया कि वह संसार भरके बाज़ारोंपर एकाधिकार कर सके। शीघ्र ही उसकी मशीन तीस करोड़ आदमियोंकी शक्तिका मुकाबला करने लगी। कुछ ही वर्षोंमें इँग्लैण्डकी जन-संख्या दुगुनी हो गई और सम्पत्ति चौगुनी। इँग्लैण्ड संसारके देशोंमें प्रथम हो गया। इसका सारा श्रेय उसके अविष्कारकोंको था, व्यापारियोंको था तथा मशीन-निर्माताओंको था। इँग्लैण्डने सारे संसारके लिये कातना आरम्भ किया। सभी लोग रुईके कपड़े पहनने लगे। लोगोंके बदनपर सफेद कमीजें दिखाई देने लगीं। हिन्दुस्तानके जो बहुत होशियार कातनेवाले होते थे वे आध सेर रूईसे सौ मील लम्बा तार खींच सकते थे। इँग्लैण्डकी मशीनोंने उतनी ही रूईसे एक हजार मील लम्बा तार खींच कर दिखा दिया।

थोड़े ही समयमें स्टीफैंसनने रेलका आविष्कार किया—रेलकी सड़कें बनने लगीं। फोल्टनने संसारको अगन-बोट दी और समुद्री-व्यापार हवाओंकी परा-धीनतासे मुक्त हो गया। संयुक्त-राज्यमें अभी ही इतनी सड़कें बन गई हैं कि उनसे सारे संसारको दो बार घेरा जा सकता है। आदमीकी पहुँच बड़ी दूर तक हो गई है। वह हर देशमें पहुँचता है और जो चाहता है ले लेता है। अब कहीं कोई अकाल नहीं पड़ सकता। यदि एक देशमें अनाज न हो तो नौकाओं तथा मोटर-गाड़ियोंसे दूसरे देशोंसे लाया जा सकता है।

हम हर देशके जल-वायुका मजा ले सकते हैं। इस समय अधिकांश लोग पुराने राजाओंसे अच्छा जीवन व्यतीत करते हैं। सुलेमान बादशाहके पास हजारों रानियाँ थीं, किन्तु गलीचे नहीं थे; बड़े बड़े महल थे, किन्तु उनमें गैस-की रोशनी नहीं थी। हजारों स्त्रियाँ, किन्तु घरमें एक पिन नहीं, स्टोव नहीं,

आलू नहीं। बिना आलूके रात्रि-भोजन। साफ कपड़े नहीं, बढ़िया संगीत नहीं। बर्फका पानी नहीं, बर्फपर चलनेवाली गाड़ियाँ नहीं। उसके राज्यमें कोई अच्छी सड़कें नहीं थीं, कि उनपर ही गाड़ियाँ चल सकतीं। धर्म-कथा अपरिमित; किन्तु तम्बाकू नहीं, पुस्तकें नहीं, तस्वीरें नहीं। सारे फिलस्तीनमें एक चित्र नहीं। न चाय, न काफी। उसने कभी कोई मनोरञ्जनकी जगह नहीं देखी न कभी किसी थियेटरमें गया और न सरकसमें।

अपनी सारी पण्डिताईके बावजूद वह बिलियर्ड खेलना तक नहीं जानता था, उसे स्त्रियोंके अधिकारों अथवा अन्य पुरुषोंके मताधिकारकी कल्पना तक न थी। वह अपने जीवनमें एक दिनके लिये भी स्कूल नहीं गया।

आविष्कारक, मजदूर, विचारक, सर्जन तथा दार्शनिक—यही सब आधुनिक सभ्यताके भवनके खम्भे हैं।

भाषायें

यह दिखानेके लिये कि उनके ज्ञान अथवा अज्ञानको अत्यन्त बेहूदा मिथ्या-विश्वासोंने दबा रखा था, मैं आपको उनके कुछ भाषाओं सम्बन्धी विचारोंसे परिचित कराना चाहता हूँ। सभीका यह विश्वास था कि सभी भाषाओंका मूल स्रोत हिब्रूमें है, अर्थात्, हिब्रू ही मूल-भाषा है। कोई भी बात जो इस मान्यताके प्रतिकूल पड़ती, त्याज्य थी। इस विश्वासके रहते भाषा-विज्ञान-सम्बन्धी खोजके सभी प्रयत्न निष्फल थे। कुछ समयके बाद जब हिब्रू-विचार ठण्डा पड़ गया तो दूसरी भाषायें अपने अपने अधिकारकी बात लेकर क्षेत्रमें आईं।

आन्द्रे कोम्पेने सन् १५६९ में स्वर्गकी भाषाके सम्बन्धमें एक ग्रन्थ प्रकाशित किया। उसमें उसने लिखा कि परमात्माने जब आदमसे बातचीत की, तो वह स्वीडनकी भाषा थी और आदमने डैनमार्ककी भाषामें उसका उत्तर दिया। एसेने मैड्रिडसे एक पुस्तक प्रकाशित की जिसमें लिखा है कि आदमके उद्यानमें बास्क (?) भाषा बोली गई थी। १५८० में गोरोपियस्ने एंटवर्पसे अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ प्रकाशित किया। उसने यह लिख कर कि वह भाषा हालैण्डकी डच भाषा थी, इस विवादको कुछ शान्त किया। वर्तमान भाषा-विज्ञानका सच्चा संस्थापक जर्मनीका लाइबनिज था—सर आइजक न्यूटनका समकालीन। उसने सभी भाषाओंकी किसी एक ही भाषासे निकलनेकी

बातको छोड़ दिया और यह स्वीकार किया कि भाषाओंका एक अपना स्वाभाविक विकास होता है। वास्तविक अनुभवने हमें सिखाया है कि यही बात सत्य है। संज्ञाओंको छोड़कर, प्राचीन मिश्रके लोगोंकी शब्द-संख्या कुल छह सौ पचासी थी। अँग्रेजी-भाषामें कमसे कम एक लाख शब्द होंगे।

भू-वृत्त

छठी शताब्दीमें कॉस्मस नामके एक ईसाई साधुने भूगोल और ज्योतिषको मिला-जुलाकर एक पुस्तक लिखी। उसका दावा था कि यह सब बाइबलके अनुसार है। उसके अनुसार यह संसार एक गोल किन्तु चपटी भूमि है। इस चपटी भूमिके टुकड़ेके चारों ओर पानी ही पानी है। यही समुद्र है। पानीकी इस धारीके बाद फिर एक स्थलका घेरा है। उसका विश्वास था कि बाढ़के आगमनसे पहलेका सारा प्राचीन संसार इसी बाह्य-पृथ्वीपर रहता था। नूहने यही पानीकी धारी पार की और इस केन्द्रीय-स्थलपर जहाँ हम सब इस समय हैं वह आ पहुँचे। बाह्य-पृथ्वीपर एक ऊँचा पर्वत है, जिसके चारों ओर सूर्य्य और चन्द्रमा घूमते हैं। जब सूर्य उस पर्वतके पीछे रहता है तो रात हो जाती है और जब हमारे सामनेकी ओर, तो दिन होता है। उसने यह भी बताया कि बाह्य आकाश एक उल्टे बरतनकी तरह उलटा रखा हुआ है और वह बाह्य-पृथ्वीके बाहरके किनारोंके साथ बँधा हुआ है। और यह घोषणा की गई थी कि जो कोई उस पुस्तकमें लिखेसे कम या अधिक मानेगा वह नास्तिक समझा जायेगा और उसे पृथ्वीपरसे मिटा दिया जायगा। जब तक कोलम्बसने अमरीकाका पता नहीं लगाया तब तक यही एक पुस्तक प्रमाण मानी जाती थी।

मैं आपको यह निश्चित करा देना चाहता हूँ कि हर ग़लती एक प्रकारका जहरीला-साँप है और जो भी कोई उसे अपने हृदयमें स्थान देगा वह उसे कभी न कभी अपने जहरीले फनका डंक मारेगी ही।

तुम पूछोगे कि इधर इन सौ वर्षोंमें ही यह अद्भुत परिवर्तन कैसे हो गया? तुम्हें याद होगा कि उन दिनों यह कहा जाता था कि सूर्योदय होनेपर तमाम भूत-प्रेत भाग जाते हैं। १४४४ में प्रेसका आविष्कार हुआ। अगली ही शताब्दीमें प्रेस एक शक्ति बन गया। तबसे आज तक यह संसारमें प्रकाशकी किरणें फैला रहा है।

जब लोग पढ़ते हैं तो वे तर्क करते हैं; जब तर्क करते हैं तो प्रगति करते

हैं। तुम्हें यह नहीं समझना चाहिये कि प्रगतिके शत्रुओंने लोगोंको जब तक वे रोक सके तब तक पुस्तकें प्रकाशित करने और पढ़नेसे नहीं रोका। मज़हब और सरकारकी सारी शक्ति अज्ञानके पक्षमें थी। जिस किसीके पास कोई पुस्तक दिखाई दे जाती, उसकी प्रायः हत्या ही कर दी जाती थी। पुस्तक छापना, पुस्तक पढ़ना, पुस्तक लिखना सभी अपराध थे। यह प्रकाशके विरुद्ध अन्धकारकी, स्वतन्त्रताके विरुद्ध गुलामीकी, तर्कके विरुद्ध मिथ्या विश्वासकी लड़ाई थी। किन्तु पादरी-पुरोहितोंके बावजूद, राजाओंके बावजूद, वेदिकाओंके बावजूद, सिंहासनोंके बावजूद पुस्तकें प्रकाशित हुईं और पुस्तकें पढ़ीं गईं। प्रकाशकी एक एक किरण अन्धकारको बींधने लगी। स्वतन्त्रताका उदय हो गया। अन्तिम-पराजयके भयसे पगलाये हुए प्रकाशके शत्रु क्रुद्ध होकर दूना अत्याचार करने लगे।

पृथ्वी गोल है, यह कहनेके लिये लोगोंको मार दिया गया। सूर्य नक्षत्रोंमें एक मध्य नक्षत्र है, कहनेके लिये लोगोंको जला दिया गया। एक स्त्रीकी इस लिये हत्या कर दी गई कि वह जाकर किसी ज्वर-ग्रस्त रोगीके ज्वरकी पीड़ाको कम करना चाहती थी। विचारक शब्द ही दण्डनीय बन गया। मामूलीसे मामूली अपराधपर मृत्यु-दण्ड दे दिया जाता था। सोलहवीं शताब्दी-के आरम्भमें प्रेगके लूथर और जेरोमने जर्मनीमें महान् सुधारकी लहर उठाई, हंगरीमें जिस्काने और स्विट्जर्लैण्डमें ज्विग ल्यूने। डैनमार्क, स्वीडन और इँग्लैण्डमें यह महान् कार्य प्रगति-पथपर था। यह सब १५३४ में ही हो गया। उन्होंने भ्रष्टाचारकी पोल खोली और मज़हबके अत्याचारोंका मुकाबला किया।

उत्साहके साथ, बहादुरीके साथ, शक्तिके साथ, निश्चयके साथ, दृढताके साथ सुधारकोंकी इस पुनीत मण्डलीने आक्रमण किया। एक दुर्गके बाद दूसरा दुर्ग विजय किया गया और थोड़ेसे किन्तु भयानक वर्षोंमें सुधारकी पताका सन्त पीटरकी रक्तरंजित पताकाके स्थानपर फहराने लगी। हजार वर्षसे सोई हुई चेतना जाग उठी। दास तर्क करना आरम्भ करते हैं, तभी दासता मरती है। बारूदके आविष्कारने लाखों-करोड़ों आदमियोंको सेनाओंसे मुक्त कर दिया और वे शान्तिकी कलाओंके विकासमें लग गये। उद्योग-धन्धोंसे अधिक आय होने लगी और वे सम्माननीय भी हो गये।

विज्ञानने अपने पर खोलने आरम्भ किये जो अन्तमें मनुष्यको स्वर्ग ले जा सकते हैं। दैस्कार्टने इस अनुपम सिद्धान्तकी घोषणा की कि संसार नियमसे शासित है।

व्यापारने भी अपने पर खोलने आरम्भ किये। भिन्न भिन्न देशोंके लोग परस्पर सम्पर्कमें आने लगे। ईसाई यह बात समझने लगे कि मुसलमानोंका सिद्धान्त भिन्न होनेके कारण उनका स्वर्ण कम मूल्यवान् नहीं है। दूर-वीक्षण-यन्त्रका मुँह सितारोंकी ओर कर दिया गया। विश्वका आकार बढ़ने लगा, पृथ्वी छोटी लगने लगी। यह समझमें आने लगा कि आदमीके स्वस्थ रहनेके लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह कैथालिक-धर्मका अनुयायी हो। अन्धकारको दूर भगानेके अनेक साधन अस्तित्वमें आ गये। अनैतिकता परित्यक्त होने लगी और आदमीने भौतिक प्रश्नोंकी भौतिक व्याख्या आरम्भ की। और दूसरे आविष्कार भी शीघ्र ही पीछे पीछे आये। वाट और फुल्टनने संसारको भापकी शक्तिका अद्भुत आविष्कार दिया। स्टीफन्सनने रेलका एंजिन दिया और फ्रैंकलिन तथा मोर्सने तार भेजनेका आविष्कार। जहाजकी द्रुत-गतिने, रेलके एंजिनकी चीखने और बिजलीके प्रकाशने अज्ञानरूपी सभी भूत-प्रेतोंको भगा दिया। सच्चा धर्म अपने मनोवेगोंको बुद्धिके अधीन करनेमें है। लेकिन जब धर्म सुख-प्राप्तिका एक साधन न समझा जाकर अपनेमें स्वयं एक साध्य ही समझा जाने लगा तो वह बन गया मानवताका हत्यारा। वह एक हज़ार सिरवाला भयानक सर्प बन गया—एक ऐसा साँप जो स्वर्गसे कुंडली मारता हुआ नीचेकी ओर बढ़ता है और अपने हज़ारों जहरीले दाँत आदमियोंके रक्त-रंजित, काँपते हुए हृदयोंमें घुसेड़ देता है।

दासता

अभी तक मैंने जो कुछ कहा है उसका उद्देश्य यही रहा है कि आप यह देख सकें कि आदमीके दिमागको गुलाम बनानेके क्या क्या दुष्परिणाम हुए हैं। मैं अब आपका ध्यान इसी विषयके एक दूसरे भयानक पहलूकी ओर आकर्षित करना चाहता हूँ—शरीरकी दासताकी ओर। दास-प्रथा एक बड़ी प्राचीन प्रथा है; उतनी ही प्राचीन जितनी प्राचीन डकैती, चोरी और हत्या है; और ये ही सब इसके आधार हैं।

जिस स्रोतसे इस सिद्धान्तने जन्म लिया है कि आदमी अपनी आत्माका स्वामी नहीं है उसी स्रोतसे इस सिद्धान्तने भी जन्म लिया है कि आदमी अपने शरीरका मालिक नहीं है। दोनों सिद्धान्त प्रायः साथ साथ चलते हैं। दोनोंका आधार लगभग वे ही तर्क हैं। दोनोंके साथ पापी-अत्याचार समान रूपसे जुड़ा हुआ है। प्राचीनतम समयसे अभी कल तक सभी देशोंमें और सभी प्रकारके लोगोंमें दास-प्रथा रही है। पूफेण्डोर्क नामक विद्वानका कथन है कि आरम्भमें दास-प्रथा दो पार्टियोंके बीच हुए एक समझौतेका परिणाम थी। वाल्टेयरने उत्तर दिया कि मुझे वह मूल-कागज दिखाओ 'जिसपर गुलाम बननेवालोंके भी हस्ताक्षर हों, तो मैं तुम्हारी बात मान लूँ। आप इस बातको ध्यानमें रखेंगे कि जिस दासताकी मैं इस समय चर्चा करने जा रहा हूँ, वह श्वेत-दासता है।

यूनानके लोग जिन्हें युद्धमें पकड़ पाते उन्हें भी दास बनाते थे और आपसम एक दूसरेको भी।

जूलियस सीज़रने सबसे अधिक बोली बोलनेवालोंको तिरेपन हजार युद्ध-बन्दी नीलाम किये। ये सभी श्वेत थे। हैनिबालने एक समय तीस हजार बन्दियोंकी विक्री की। ये सभी रोमन नागरिक थे। रोममें अपना कर्ज चुकानेके लिये आदमी दास हो जाते थे। जर्मनीमें प्रायः लोग अपनी स्वतन्त्रताको जुआ खेलते समय दावपर भी लगा देते थे। बारबरी रियासतोंमें इस उन्नीसवीं शताब्दीमें भी श्वेत ईसाई दास थे। १५७४ तक इग्लैण्डमें भी श्वेत दास थे। अठारहवीं शताब्दीके अन्त तक स्काटलैण्डमें श्वेत दास थे।

ये स्काटलैण्डके दास कोयले और नमककी खानोंमें काम करनेवाले थे। जिस समय एक खान किसी एक मालिकसे दूसरे मालिकके पास जाती थी, उस समय ये दास भी विक्री-पत्रके अनुसार विधिवत् बिक जाते थे।

नियम यह भी था कि कोई खानमें काम करनेवाला जिस खानका वह होता था उसे छोड़ किसी दूसरी खानमें काम नहीं कर सकता था। नियम यह भी था कि उनकी संतान भी माता-पिताका पेशा छोड़कर कोई दूसरा पेशा नहीं कर सकती थी। स्काटलैण्डमें यह दासता शानदार उन्नीसवीं शतीके आरम्भतक रही।

कुछ रोमके सरदार बीस बीस हजार दासोंके मालिक थे।

फ्रांसके सामान्य-जन चौदह सौ वर्ष तक दास रहे। वे ज़मीनके साथ बिक जाते थे और बहुधा स्त्रियोंको पशुओंके साथ मिलकर हलमें जुतना पड़ता था। यह सब होने पर भी कुछ लोग निर्लज्जता-पूर्वक यह कहते हैं कि काले आदमियोंको दास बनानेमें कुछ अनौचित्य नहीं, क्योंकि काले लोग अपने देशमें सदा ही दास रहे हैं। मेरा उत्तर है कि अभी कल तक श्वेत-लोग भी तो दास रहे हैं।

कोई यात्री जब प्राचीन नगरों तथा साम्राज्योंके ध्वंसावशेषोंको देखता है, जब वह चारों ओर गिरे हुए खम्भे तथा नीचे पड़ी हुई दीवारें देखता है, तो पूछ बैठता है कि ये नगर क्यों नष्ट हो गये? ये साम्राज्य क्यों लड़खड़ा गये? अतीतको भूत और युगोंकी बुद्धि उत्तर देती है: - ये मन्दिर, ये महल, ये नगर, जिनके ध्वंसावशेषोंपर आप खड़े हैं, अन्याय और अत्याचार द्वारा बनाये गये थे। जिन हाथोंने इन्हें बनाया उन्हें उचित मज़दूरी नहीं मिली थी। जिन पीठोंने ये पत्थर ढोये उनपर चाबुकोंके निशान भी बने हुए हैं। चोरों तथा डाकुओंके अभिमान और महत्त्वाकांक्षाकी संतुष्टिके लिये इन्हें दासोंने बनाया था। इन्हीं कारणोंसे वे आज धूलमें मिल गये हैं।

उनकी सभ्यता एक झूठ थी। उनके कानून डाके और चोरीको नियमित ठहरा देने भरके लिये थे। उन्होंने आदमियोंके शरीर और आत्माओंको खरीदा और बेचा। कोई जाति, जिसके मूलमें शरीर और आत्माकी दासता है, कभी जीती नही रह सकती।

यह सब होनेपर भी आज हजारों लाखों लोग ऐसे हैं जो पुराने ढंगपर ही मन्दिरों तथा शहरोंका निर्माण करना चाहते हैं और शासन-चक्र चलाना चाहते हैं।

जो दिमाग़की मुक्तिके कारण हुए, ठीक वही शरीरकी मुक्तिके भी कारण थे। आदमीके दिमागको मुक्त कर दो, उसे पुस्तकें पढ़ने-लिखने तथा छापनेका अवसर दो तो उसके बन्धन एक एक करके टूटकर धूलमें मिल जायेंगे। यह सत्य हमेशा ज्ञात था। इसी लिये दासोंको कभी पढ़नेकी छूट नहीं रही है। किसी दासको पढ़ाना सदासे एक अपराध रहा है। समझदार लोग गुलामीसे

मृत्युको श्रेयस्कर समझते हैं। शिक्षा संसारमें सबसे बड़ी दासताविरोधी है। किसीको वर्णमाला सिखा देनेका मतलब है एक क्रान्तिको जन्म देना। एक स्कूल बनानेका मतलब है एक किला बनाना; और हर पुस्तकालय एक तोपखाना है।

यह न सोचिए कि श्वेत-दासताको नष्ट करनेके लिये संघर्ष नहीं करना पड़ा। जिन आदमियोंने श्वेत-दासताका विरोध किया, उनका मज़ाक उड़ाया गया, उन्हें घरोंसे निकाल दिया गया, उन्हें फाँसीपर लटकाया गया और जला दिया गया। जिन आदमियोंके पास कोई एक भी विचार नहीं था, वे यह कहकर उनकी निन्दा करते थे कि उनके पास केवल एक ही विचार है। जो आदमी इतने पागल थे कि किसी एक तुच्छ राजाके बनाये हुए नियमोंको विश्वके नियमोंसे भी ऊँचा समझते थे, वे उन्हें कट्टर कहकर निन्दा करते थे। अपराध नैतिकताको मुँह चिढ़ाता था और ईमानदारी अछूत बनी हुई थी। लूट और डाकों द्वारा स्थापित, यंत्रणा और अनन्त अत्याचार द्वारा संवर्धित श्वेत-दासताको अन्त तक बचानेका प्रयत्न किया गया।

अब मैं आपको बताना चाहता हूँ कि यूरोपसे श्वेत-दासताके उठ जानेका निकट-तम कारण क्या था? मध्य-युगके लोग तीन बड़े वर्गोंमें विभक्त थे— जनसाधारण, पादरी-पुरोहित और सरदार। ये सारे ही लोग दो वर्गोंमें भी विभक्त हो सकते थे—लुटेरे और लूटे जानेवाले।

सरदारोंको राजाओंसे ईर्षा थी और राजा सरदारोंसे डरते थे। पादरी-सदैव शक्तिशालीका पक्ष लेते थे। जन साधारणको काम करना पड़ता और टैक्स देने पड़ते। सरदारोंकी सम्पत्ति कानून द्वारा करोंसे मुक्त थी। परिणाम यह था कि जब कभी सरदारों और राजामें युद्ध होता तो दोनों पक्ष किसानोंको अपनी ओर मिलानेका प्रयत्न करते। पादरी-पुरोहित जब राजाके पक्षमें होते तो वे जन-साधारण और सरदारोंमें यह कहकर कि सरदार अत्याचारी हैं, भेद उत्पन्न कर देते। जब वे सरदारोंकी ओर होते तो कहते कि राजा बड़ा अत्याचारी है। अंतमें लोगोंको विश्वास हो जाता कि दोनों अत्याचारी हैं। पुरानी कहावत है कि जब चोर लड़ते हैं तब ईमानदार आदमी नफेमें रहते हैं।

यूरोपसे दासताको समाप्त करनेमें ये युद्ध ही कारण हुए। एक तरहसे कहा जाय तो इतिहासके महानतम पृष्ठोंमेंसे एक पृष्ठ फ्रांसीसी राज्य-क्रान्तिने श्वेत-दासताको समाप्त किया। जो लोग चौदह सौ वर्षोंसे गुलामीका जुआ अपने कँधोंपर ढो रहे थे, वे ही लोग उन भयानक दिनोंमें धूलि झाड़कर उठ खड़े हुए। उन्होंने अपने बंधन तोड डाले और दिल खोलकर अत्याचारोंका बदला लिया। उन्होंने अपने मालिकोंके रक्तसे पृथ्वीको लाल कर दिया। उन्होंने मन्दिरों और सिंहासनोंको ध्वंसावशेष बना दिया और अपने रक्त-रंजित हाथोंसे उस वेदीके टुकड़े टुकड़े कर दिये जिसपर उनके अधिकारोंकी बलि चढ़ाई गई थी। उन्हें न केवल अतीतके मिथ्या विश्वासोंसे घृणा हो गई किन्तु अतीतसे ही घृणा हो गई। फ्रांसकी राज्यक्रान्ति एक नये युगका आरम्भ थी। जिस समय यूरोपमें श्वेत-दासताका ह्रास होने लगा, जब सोलहवीं शताब्दीके मध्यमें श्वेत-दासोंकी अवस्था कुछ सुधरने लगी, उसी समय पुर्तगालके अलोंज़ो गोंज़लेने अपने देशके निवासियोंको एक दूसरा रास्ता सुझाया आदमियोंके व्यापारका एक दूसरा बाजार। थोड़े ही समयमें अपनी तमाम भयानकता लिये हुए अफरीकाके दास-व्यापारका श्रीगणेश हो गया।

यह व्यापार आधुनिक युगका एक महान् अपराध सिद्ध हुआ है। यह कल्पना कर सकना लगभग असम्भव है कि जो जातियाँ अपनेको ईसाई मानती थीं, या कुछ हद तक सभ्य भी मानती थीं, वे यह पाप-पूर्ण व्यापार कैसे करती रही होंगी। यह सब होनेपर भी यूरोपकी लगभग सभी जातियाँ इस दासोंके व्यापारमें पड़ीं, इसे कानूनी बनाया, इसकी रक्षा की, इसे जोर-जबर्दस्तीसे चालू किया और आपसमें वे एक दूसरेसे ऐसे काम करनेमें बाजी मारने लगीं, जिनके वर्णन मात्रसे आदमीका दिल पथरा जा सकता है।

यह हिसाब लगाया गया है कि वर्षोंतक कमसे कम चार-लाख अफरीका-निवासी प्रतिवर्ष या तो मौतके घाट उतार दिये जाते थे या उन्हें गुलाम बना लिया जाता था। वे इन अभागोंसे अपने जहाजोंको इतना अधिक ठूस ठूसकर भर लेते थे कि सामान्यतः दस प्रतिशत तो इनमेंसे रास्तेमें ही मर जाते थे। उनके साथ जंगली पशुओंका-सा बर्ताव किया जाता था। खतरेके समय उन्हें समुद्रमें फेंक दिया जाता था। यह बात याद रखने योग्य है कि सोलहवीं शताब्दीमें आरम्भ हुआ यह भयानक व्यापार उन जातियों द्वारा किया जाता

था जो अपने आपको ईसाई सभ्यताका ठेकेदार समझती थीं। और आप क्या समझते हैं कि बड़े देशोंमेंसे कुछने इसे कब बन्द किया? इँग्लैण्डमें विल्बर-फोर्स और क्लार्कसनने दासोंके क्रय-विक्रयको बन्द करनेके प्रयत्नमें अपना जीवन खपा दिया। उनसे लोग घृणा करते थे, उनपर थूकते थे। वे बीस वर्षतक लगे रहे। २५ मार्च १८०८ में कहीं जाकर इँग्लैण्डने इस मानवी-मांसके व्यापारको गैरकानूनी घोषित किया। जब यह पता लगा कि अमरीकामें भी ऐसी ही घोषणा हुई है तो इँग्लैण्डमें दुगुनी प्रसन्नता हुई। कुछ समय बाद इस व्यापारमें लगे हुए लोगोंको समुद्री-डाकू घोषित किया गया।

२८ अगस्त, १८३३ को इँग्लैण्डने अपने सब उपनिवेशोंसे दास-प्रथाको समाप्त कर दिया। इस प्रकार उसने कमसे कम दस लाख दासोंको मुक्त किया।

उस समय सभ्य संसारमें संयुक्त-राज्य ही सबसे बड़ा दासोंका स्वामी देश था।

हम सभी इस देशके दासताके इतिहाससे परिचित हैं। हम जानते हैं कि इसने हमारे लोगोंको भ्रष्ट किया, इसने हमारे देशकी भूमिको भाई भाईके रक्तसे लाल किया, इसके कारण हम अपने तीन-लाख वीरतम पुत्रोंको गँवाकर विलाप करनेपर मजबूर हुए, यह हमें संसारके सबसे अधिक अन्धकारपूर्ण युगमें ले गई तथा इसने हमें एकदम विनाशके तटपर ले जाकर खड़ा कर दिया।

लेकिन अन्तमें स्वतन्त्रताने अपना सिर उठाया और १८६३ की पहली जनवरीको—इस देशके महानतम नूतन वर्षके दिन—वीर उत्तर-अमरीकाकी इच्छाके अनुसार उस एक महान् विभूतिकी कलमसे—जिसका नाम भविष्य-के लिये अमर है—इतने दिनोंसे जो न्याय न हो सका था, वह न्याय हो गया। अब्राहम लिंकनने दासताको समाप्त कर दिया। चार लाख दास बंधन-मुक्त हो गये।

स्वतन्त्रताकी विजय

स्वतन्त्रता यह वह पवित्र शब्द है, जिसके बिना और सारे शब्द व्यर्थ हैं, जिसके बिना जीवन मृत्युसे भी बुरा है और आदमी पशु बन जाते हैं। यह वह शब्द है, जिसका उच्चारण कर देवता भी धन्य होते हैं। क्या

आप इसका अनुभव कर सकते हैं कि कुछ ही वर्ष पहले दासताकी दिल दहला देनेवाली प्रथा हमारे देशमें विद्यमान थी। हमको और आपको—सभीको इस देशका कानून एक आदमी और उसकी स्वतन्त्रताके बीच बाधक बनाकर खड़ा किये हुए था। हम कानूनसे मजबूर थे कि आदमीको चाबुकों और जंजीरोंके सुपुर्द कर दें। हमारे कानून द्वारा बच्चोंको उनकी माताओंसे और पत्नियोंको उनके पतियोंसे पृथक् कर बेच दिया जाता था।

और यह सब होता था स्वतन्त्रताके पवित्र नामपर, एक प्रजातन्त्र सरकार-द्वारा, जो सभी आदमियोंकी समानताके सिद्धान्तपर स्थापित थी। यह सब मुझे एक भयानक स्वप्न मालूम दे रहा है। इतना सब होनेपर भी हमें इतिहासके कठघरेमें खड़े होकर अत्यन्त संकोच और लज्जाके साथ अपना अपराध स्वीकार करना पड़ रहा है।

यह सत्य है कि एक बड़ी हद तक हमने इस जातीय अपराधका प्रायश्चित्त कर दिया है। हमने अपने वीर-तम तथा श्रेष्ठतम पुत्रोंका बलिदान दिया है। हमने भयानक रक्त-रंजित युद्धका भार वहन किया है। नेक और सच्चे आदमियोंने हमारा साथ दिया है। उत्तरी-अमरीकाकी देवियाँ तो अमर हो गई हैं। उन्होंने युद्धकी आधी भयानकताको समाप्त कर दिया। नेताके माथे-पर विजयका सेहरा बाँधने मात्रसे सन्तुष्ट न रहकर उन्होंने सैनिकोंके जख्मोंपर पट्टियाँ बाँधी हैं, उन्होंने जीवितोंको साहस दिया है, उन्होंने मरनेवालोंको सान्त्वना दी है और उन्होंने इस महान् विजयपर प्रसन्नताके आँसू बहाये हैं।

लेकिन, अभी बहुत कुछ शेष है। दासता समाप्त हो गई है, किन्तु प्रगतिके लिये अभी बहुत कुछ आवश्यक है। हमसे आशा की जाती है कि स्वतन्त्र शब्दके व्यापकतम अर्थोंमें अपनी सरकारको एक स्वतन्त्र सरकार बनायें, अर्थात् सभी स्वतंत्र हों। हम समस्त इतिहासके सम्मुख उत्तरदायी हैं। हमारे सामने मानवताका सारा अनुभव है। हम जानते हैं कि पृथ्वी असंख्य निर्दयतापूर्ण असफलताओंका घर है। हमसे आगे गये हुए शहीद और वीर-पुरुष हमरे अपील कर रहे हैं। अनगिनत कबरोंकी पवित्र धूलि हमसे अपील कर रही है। हमारे श्रेष्ठ हुतात्माओंकी याद हमसे अपील कर रही है। हमारे

भूत-कालके कष्ट और हमारी भूत-कालकी आशायें हमसे अपील कर रही हैं। इन सबकी ओरसे मैं अमरीकाके लोगोंसे अत्यन्त विनम्रतापूर्वक प्रार्थना करता हूँ, दरख्वास्त करता हूँ कि वे सदाकालिक न्यायके सिद्धान्तोंपर अपनी सरकारको स्थापित करें। मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वे व्यापक मानवी स्वतन्त्रताके सिद्धान्तपर ही अपनी सरकारके भवनका शिला-न्यास करें—यह वह सिद्धान्त है जिसे आज तक सभी जातियोंने ठुकराया है। तभी उनकी सरकार स्थिर रह सकेगी और उसके भवनका गगनचुम्बी शिखर तारागणोंको स्पर्श करेगा।

इस प्रकार मैंने दासताके कुछ कुपरिणामोंकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करनेका प्रयत्न किया है। मैंने यह सिद्ध करना चाहा है कि स्वतन्त्रताकी ओर उठने वाला क़दम ही प्रगतिकी ओर उठ सकता है। मैंने मन और शरीरकी दासताकी समाप्तिके कुछ कारण बतानेका प्रयत्न किया है। एक सत्य है जो आपको याद रखना ही चाहिये और वह यह कि हर बुराईके नाशका बीज भी उस बुराईमें ही छिपा रहता है। मैं मानता हूँ कि और दूसरी सभी बातें मिलकर भी मानवताका उतना उद्धार नहीं कर सकीं, जितना अकेले ज्ञानप्रसारद्वारा हुआ है। जब वाणीकी स्वतन्त्रता नहीं थी और छापेखाने नहीं थे तो प्रत्येक विचार जिस मस्तिष्कमें जन्म ग्रहण करता था, उसीमें मर जाता था। एक आदमी दूसरेके विचारसे लाभ नहीं उठा सकता था। भूतकालका अनुभव बहुत करके अज्ञात ही रहता था। किन्तु छापेखानेके आविष्कारके बाद विचार फैलने लगे और वे वास्तविक घटनाओंके छोटे छोटे स्रोतों तथा दूसरी जानकारीरूपी बड़े बड़े दरियाओंके साथ मिलकर मानवी-ज्ञानरूपी समुद्रका हिस्सा बनने लगे।

हम एक अनन्त समुद्रके तटपर खड़े हैं, जिसकी असंख्य लहरें साहसी कदमोंका स्वागत करनेके लिये उत्सुक हैं। आज मानव-जाति प्रगति-पथपर है।

हे प्रगतिके सैनिको, बढ़े चलो जब तक न्याय कानून नहीं बन जाता; बढ़े चलो जब तक अज्ञान नष्ट नहीं हो जाता; बढ़े चलो जब तक कहीं कोई आकाशका अथवा ज़मीनका राज्य-सिंहासन शेष है; बढ़े चलो जब तक मिथ्या विश्वास एक भूला हुआ स्वप्न नहीं बन जाते; बढ़े चलो जब तक संसार स्वतंत्र नहीं हो जाता और बढ़े चलो जब तक मानवी-बुद्धिको अधिकारारूढ़ करके राजाओंका राजा स्वीकार नहीं कर लिया जाता।

मज़हब क्या है ?

यह ज़ोर देकर कहा जाता है कि एक अनन्त परमात्माने सभी चीज़ोंको उत्पन्न किया है, वही सभी चीज़ोंपर शासन करता है और इस लिये उसकी सन्तानको उसका आज्ञाकारी तथा उसके प्रति कृतज्ञ होना चाहिये। हमारा रचयिता हमसे कुछ खास बातोंकी माँग करता है। जो आदमी उन खास बातोंको पूरा करता है, वह मज़हबी है। कम या अधिक इसी प्रकारका मज़हब सर्वव्यापक रहा है।

अनेक शताब्दियों तक बहुतसे लोगोंका यह विश्वास रहा कि उस परमात्माको बलिदानोंकी अपेक्षा रहती है; और उसे तब प्रसन्नता होती थी जब माता पिता अपने बच्चोंके खूनसे अपने हाथ रँगते थे। बादमें यह माना जाने लगा कि उसे बैलों, भेड़ों और घुग्घुओंके रक्तसे प्रसन्नता होती है और मानों हमें बलिदानोंके कारण अथवा इनके बदलेमें वह परमात्मा वर्षा धूप और खेती देता है। यह भी विश्वास किया जाता था कि यदि ये बलिदान न दिये जायँ तो वह परमात्मा महामारी, अकाल, बाढ़ तथा भूकम्प भेज देता है।

ईसाई मान्यताओंके अनुसार इस सिद्धान्तका अन्तिम रूप यह था कि परमात्माने अपने पुत्रके रक्तको स्वीकार कर लिया और उसके अपने पुत्रकी हत्या हो चुकनेके बाद वह सन्तुष्ट हो गया। अब उसे किसीका रक्त नहीं चाहिये।

इन सारे वर्षोंमें इन सभी लोगोंका यह विश्वास रहा है कि वह परमात्मा प्रार्थनायें सुनता था और उन्हें पूरा करता था, वह पापोंको क्षमा करता था और सच्चे विश्वासियोंको पार उतारता था। सामान्य रूपसे यही मज़हबकी परिभाषा है।

अब प्रश्न होते हैं—क्या मज़हबका आधार कोई भी एक ज्ञात घटना है ? क्या कोई परमात्मा वास्तवमें है ? क्या उसने आपको और मुझे पैदा किया है ? क्या कभी किसीकी कोई भी प्रार्थना सुनी गई है ? क्या कभी किसी बच्चे या बैलके बलिदानसे वह परमात्मा प्रसन्न हुआ है ?

प्रथम—क्या एक अनन्त परमात्माने आदमियोंकी सन्तानको जन्म दिया ?

उसने मन्द बुद्धिवालोंको क्यों जन्म दिया ?

उसने विकृताङ्ग और असहायोंको क्यों जन्म दिया ?

उसने अपराधियों, जड़-भरतों तथा पागलोंको क्यों जन्म दिया ?

क्या अनन्त ज्ञान और शक्तिके पास इस प्रकारकी रचनाका कोई उत्तर है ?

क्या इस प्रकारकी सृष्टिको अपने रचयिताके प्रति कृतज्ञ होनेकी आवश्यकता है ?

द्वितीय—क्या एक अनन्त परमात्मा इस संसारका शासक है ?

क्या तमाम सरदारों, राजाओं, महाराजाओं और उनकी रानियोंके लिये वह जिम्मेदार है ?

क्या तमाम युद्धों और उनमें जितना रक्त बहा है उसके लिये वह ज़िम्मेदार है ?

क्या शताब्दियोंकी दासताके लिये, उन पीठोंके लिये जिनपर कोड़े पड़े हैं, उन दूध-पीते बच्चोंके लिये जिन्हें अपनी माताओंकी छातियोंसे पृथक् कर बेच दिया गया है तथा उन परिवारोंके लिये जिन्हें पृथक् कर दिया गया और नष्ट कर दिया गया, वह जिम्मेदार है ?

क्या वह परमात्मा यंत्रणाके सभी आविष्कारोंके लिये जिम्मेदार है ?

क्या उस परमात्माने जो वीर और सदाचारी थे उन्हें दुष्टों तथा अत्याचारियोंके हाथ नष्ट हो जाने दिया ? क्या उसने आततायियोंको देशभक्तोंका रक्त बहाने दिया ?

क्या उसने अपने मित्रोंको अपने शत्रुओंके हाथ यन्त्रणा भोगने और आगमें जल जाने दिया ?

तो ऐसे परमात्माका क्या मूल्य है ?

क्या कोई भी भला आदमी सामर्थ्य रहते अपने मित्रोंको अपने शत्रुओंके हाथों यन्त्रणा भोगने तथा जल जाने देगा ?

क्या हम इससे अधिक नीच किसी शैतानकी कल्पना कर सकते हैं जो अपने शत्रुओंको अपने मित्रोंपर तरजीह दे ?

यदि एक भला और अनन्त शक्तिशाली परमात्मा इस दुनियापर राज्य

करता है तो हमारे पास इन आँधियों, इन भूकम्पों, इन महामारियों और इन अकालोंकी क्या व्याख्या है ?

हमारे पास उन हजारों बीमारियोंकी क्या व्याख्या है जो बच्चोंको ही हो जाती हैं ?

उन जंगली जन्तुओंकी जो आदमियोंको खा जाते हैं और उन जहरीले साँपोंकी जिनका काटना ही मृत्यु है, हमारे पास क्या व्याख्या है ?

इस संसारकी जिसमें जीव जीवको खा रहा है, हमारे पास क्या व्याख्या है ?

क्या अनन्त करुणाने ही इन चोंचों, इन पंजों, इन दाँतों तथा इन जहरीले डंकोंको जन्म दिया है ?

क्या अनन्त करुणाने ही इन शिकारी दरिन्दोंको जन्म दिया है कि वे कमज़ोर और असहाय जन्तुओंको अपना शिकार बना लिया करें ?

क्या अनन्त करुणाने ही इन असंख्य छोटे छोटे कीटाणुओंको जन्म दिया कि ये अपनेसे बड़े प्राणियोंका मांस खा-खाकर जीवित रहें ?

क्या अनन्त बुद्धिने जान बूझकर ही उन छोटे कीटाणुओंको जन्म दिया जो कि आदमीकी चक्षु इन्द्रियकी नसको ही खाकर जीवित रहते हैं ?

एक क्षुद्र कीटाणुकी भूखको संतुष्ट करनेके लिये एक आदमीको अन्धा बना देनेकी बातपर विचार किया जाय !

जीव जीवको खा रहा है। अत्याचारकी चट्टानपर रक्तका 'न्यागरा-प्रपात' गिर रहा है।

इन बातोंको दृष्टिमें रखते हुए प्रश्न पैदा होता है कि आखिर मज़हब है क्या ?

यह भयके सिवा कुछ नहीं।

भय वेदिकाका निर्माण करता है और बलिदान चढ़ाता है।

भय मन्दिर बनाता है और आदमीके सिरको पूजामें झुकाता है।

भय घुटने टिकवाता है और प्रार्थनायें करवाता है।

भय प्रेम करनेके बहाने बनाता है।

मज़हब दास-गुणोंकी शिक्षा देता है—आज्ञाकारिता, नम्रता, अहंकार-शून्यता, क्षमा तथा अप्रतिरोध।

धर्म और भयसे काँपते हुए होंठ दोहराते हैं—चाहे वह मुझे मार ही डाले, तो भी मैं उसका विश्वास करूँगा। यह पतनकी सीमा है।

मज़हब आत्म-निर्भरता नहीं सिखाता, स्वतंत्रता नहीं सिखाता, मनुष्यत्व नहीं सिखाता, साहस नहीं सिखाता तथा आत्म-रक्षा करना नहीं सिखाता।

मज़हब परमात्माको मालिक और आदमीको उसका गुलाम बनाता है। मालिक चाहे कितना ही बड़ा हो, उसके कारण दासतामें माधुर्य्य नहीं आ जाता।

२

यदि परमात्मा है, तो हम यह कैसे जानते हैं कि वह नेक है? हम यह कैसे सिद्ध कर सकते हैं कि वह दयालु है, और आदमीकी सन्तानपर दया करता है? यदि वह परमात्मा है तो उसने अपने लाखों बच्चोंको अनेक बार खेत जोतते, बीज बोते देखा है, और जब उसने देखा है तो वह जानता है कि इनका जीवन इसी खेतीपर निर्भर करता है। तो भी उस नेक परमात्माने, उस दयालु परमात्माने वर्षा नहीं होने दी। उसने सूर्य्यको आकाशमें चढ़ाया, जिसने जमीनकी सारी नमी सोख ली; किन्तु पानी नहीं बरसाया। उसने देखा कि आदमीके लगाया हुए बीज नष्ट हो गये, किन्तु वर्षा नहीं हुई। उसने देखा कि लोग दुःखी आँखोंसे सूखी पृथ्वीको निहार रहे हैं, किन्तु उसने वर्षा नहीं भेजी। उसने देखा कि शनैः शनैः जो कुछ थोड़ा बहुत उनके पास था वे सब उसे खा गये, उसने उन्हें भूखके दिनोंमें देखा—उन्हें धीरे धीरे घुलते देखा, उनकी भूखी, अन्दर धँसी हुई आँखें देखीं, उनकी प्रार्थनायें सुनीं, उसने उन्हें पशुओंको मार मारकर खा जाते देखा, उसने भूखसे पागल हुए माता-पिताको अपने बच्चोंको मार मारकर खा जाते देखा, यह सब होते हुए भी उनके ऊपरका आकाश और उनके नीचेकी धरती वैसी ही लोहा बनी रही; उसने वर्षा नहीं भेजी। क्या हम कह सकते हैं कि उस परमात्माके हृदयमें करुणाका पुष्प पुष्पित है? क्या हम कह सकते हैं कि उसे आदमीकी सन्तानकी चिन्ता है? क्या हम कह सकते हैं कि उसकी दया सदाके लिये है? क्या हम यह कहकर परमात्माकी नेकी सिद्ध करते हैं कि वह बड़े बड़े तूफान भेजता है, और गाँवको उजाड़कर खेतोंको माता-पिता तथा बच्चोंके खण्डित शरीरोंसे पाट देता है? क्या हम उसकी

नेकी यह कहकर सिद्ध करते हैं कि वह पृथ्वीका मुँह खोलकर हजारों असहाय बच्चोंको निगल गया है, या ज्वालामुखी पर्वतोंसे उनपर आगका दरिया ही बहा दिया है ? क्या जो बातें हम जानते हैं, उनसे परमात्माकी नेकी प्रमाणित होती है ?

यदि ये विपत्तियाँ न आतीं, तब भी क्या हम इस बातमें सन्देह करते कि परमात्मा आदमियोंकी चिन्ता करता है ? यदि अकाल न होते, महामारियाँ न होतीं, तूफ़ान न होते और भूकम्प न होते, तब भी क्या हम सोचते कि परमात्मा नेक नहीं है ?

सिद्धान्तियोंके अनुसार परमात्माने सब आदमियोंको बराबर नहीं बनाया। उसने जातियोंको बुद्धि, कद और रंगकी भिन्नता दी। क्या इसमें कोई बुद्धिमानी है ?

क्या जो श्रेष्ठ जातियाँ हैं उन्हें परमात्माका इसलिये धन्यवाद करना चाहिये कि वे निकृष्ट नहीं हैं ? यदि हम 'हाँ' कहें तो मेरा दूसरा प्रश्न है कि क्या निकृष्ट जातियोंको इसलिये परमात्माको धन्यवाद देना चाहिये कि वे श्रेष्ठ नहीं हैं अथवा उन्हें इसलिये धन्यवाद देना चाहिये कि वे पशु नहीं हैं ?

जब परमात्माने इन भिन्न भिन्न नसलोंको बनाया तो वह जानता था कि जो श्रेष्ठ हैं वे इतरोंको अपना गुलाम बना लेंगी, जानता था कि जो इतर हैं वे जीत ली जायेंगी और अन्तमें नष्ट कर दी जायेंगी।

यदि परमात्माने यह किया और वह जानता था कि कितना रक्त बहेगा, कितनी यंत्रणायें सहनी पड़ेंगी, उसने असंख्य खेत देखे जो लाशोंसे अटे पड़े हैं, उसने गुलामोंकी रक्तसे लहू-लहान पीठें देखीं, उसने माताओंके टूटे हुए दिलोंको देखा—जिनसे उनके बच्चे छीन लिये गये थे – यदि उसने यह सब देखा और वह यह सब जानता था तो क्या उससे बढ़कर किसी भयानक शैतानकी कल्पना की जा सकती है ?

तो हमें यह क्यों कहना चाहिये कि परमात्मा नेक है ?

३

वह ताकत जो आदमीको पाप करनेसे रोकती है

अधिकांश लोग परा-प्राकृतिकसे चिमटते हैं। यदि वे एक परमात्माको

छोड़ते हैं तो वह दूसरेकी कल्पना कर लेते हैं। ईश्वरसे मुक्त होते हैं तो वे उस शक्तिकी बात करने लगते हैं, जो पापसे रोकती है।

यह शक्ति क्या है ?

अनुभवके द्वारा आदमी प्रगति करता है और अवश्य प्रगति करता है। एक आदमी किसी एक निश्चित स्थानपर जाना चाहता है। वह ऐसी जगह पहुँचता है, जहाँसे दो रास्ते फट जाते हैं। वह यह मानकर कि यह सही रास्ता है, बाईं ओर जाता है। वह चलता रहता है जब तक कि उसे यह पता नहीं लग जाता कि यह रास्ता सही नहीं है। वह पीछे लौटता है और दायें रास्तेको पकड़ जिस जगह वह पहुँचना चाहता है, पहुँच जाता है। अगली बार जब उसे उसी स्थानपर पहुँचना होता है तो वह बाईं सड़क नहीं लेता। उसने उस सड़कपर चलकर देख लिया है। वह जानता है कि यह ग़लत रास्ता है। वह ठीक रास्ता ग्रहण करता है। इसपर ये सिद्धान्ती कहते हैं—एक शक्ति है जो आदमीको पापसे बचाती है।

बच्चेको दीपककी लौ सुन्दर लगती है। वह उसे हाथसे पकड़ लेता है। हाथ जल जाता है। उसके बादसे बच्चा आगसे दूर रहता है। जो शक्ति पापसे बचाती है उसने बच्चेको एक शिक्षा दे दी है।

संसारका संग्रहीत अनुभव एक शक्ति है, एक ताकत है, जो पापसे बचाती है। इस शक्तिमें चेतना नहीं है, बुद्धि नहीं है। इस शक्तिकी कोई इच्छा नहीं है, उद्देश्य नहीं है। यह तो एक परिणाम-मात्र है।

इस प्रकार हजारों लोगोंने यह कह कर कि हममें एक नैतिक-इन्द्रिय है, एक अन्तरात्मा है, एक कांशंस है, परमात्माको स्थापित करनेका प्रयत्न किया है।

इन सिद्धान्तियों और बहुतसे तथाकथित दार्शनिकोंका यह आग्रह है कि यह नैतिक-इन्द्रिय, यह कर्तव्य-बुद्धि आदमीमें बाहरसे बाहर आई है। कांशंस एक बाह्य-वस्तु है। यह मान कर कि इसकी उत्पत्ति यहाँ नहीं हुई, इसे आदमीने पैदा नहीं किया, वे एक परमात्माकी कल्पना करने लगते हैं, जिसने इसे पैदा किया।

आदमी सामाजिक प्राणी है। हम परिवारोंमें रहते हैं, कबीलोंमें रहते हैं और जातियोंमें रहते हैं।

जो लोग परिवार, कबीला और जातिके सुखमें वृद्धि करते हैं वे अच्छे समझे जाते हैं। उनकी प्रशंसा की जाती है, उनका यशोगान होता है, उनका आदर होता है और वे अच्छे माने जाते हैं अर्थात् नैतिक।

जो लोग परिवार, कबीला और जातिके दुःखमें वृद्धि करते हैं वे बुरे समझे जाते हैं। उन्हें दोषी ठहराया जाता है, उनसे घृणा की जाती है तथा उन्हें दण्ड दिया जाता है। उन्हें अनैतिक समझा जाता है।

परिवार, क़बीला तथा जाति ही आचरणका—सदाचरणका—माप-दण्ड स्थापित करनेवाली है। इसमें कुछ भी परा-प्राकृतिक नहीं है।

मनुष्योंमें श्रेष्ठतमका कहना है : कांशंस प्रेमकी पुत्री है।

कृतज्ञताकी भावना, कर्तव्यकी भावना प्राकृतिक हैं।

असभ्य आदमियोंमें कार्योंके निकटके परिणामपर दृष्टि रहती है। ज्यों ही लोग प्रगति करते हैं दूर दूरके परिणामोंपर ध्यान जाने लगता है। आचरणका माप-दण्ड ऊँचा हो जाता है। कल्पनाशक्ति विकसित होती है। आदमी अपने आपको दूसरेकी स्थितिमें रखकर विचार करना सीखता है। कर्तव्यकी भावना दृढ़तर हो जाती है। आदमी स्वयं अपना न्यायाधीश बनता है।

वह प्रेम करने लगता है। प्रेम सर्वश्रेष्ठ गुणोंका प्रारम्भ है, आधार है। वह अपने प्रेम-पात्रको हानि पहुँचा देता है। तब अफसोस होता है, पश्चात्ताप होता है, दुःख होता है और अन्तरात्माकी फटकार होती है। इसमें कहीं कुछ भी प्रकृतिसे बाहरकी बात नहीं है।

आदमीने आत्म-वञ्चना की है। प्रकृति एक ऐसा दर्पण है, जिसमें आदमीको अपनी ही छाया दिखाई देती है। जितने परा-प्राकृतिक धर्म हैं उन सबका आधार यह असत्य है कि दर्पणके पीछे जो छाया दिखाई देती है वह पकड़ ली गई है।

प्लेटो से स्वेडनवर्ग तक जितने अध्यात्म-वादी दार्शनिक हुए हैं उन सबने अपनी 'यथार्थ बातें' स्वयं घड़ी हैं। सभी धर्मोंके संस्थापकोंने यही किया है।

थोड़ी देरके लिये मान लो कि एक अनन्त परमात्मा है। तो हम उसके लिये कर ही क्या सकते हैं ? यदि वह अनन्त है तो वह उत्पन्न नहीं, यदि वह उत्पन्न नहीं तो उसे न लाभ ही पहुँचाया जा सकता है और न हानि।

उस आदमीकी अहम्मन्यताका विचार कीजिये जो यह सोचता है कि अनन्त परमात्माको उसकी स्तुतिकी अपेक्षा है !

४

हमारे मज़हबने क्या किया है ? ईसाई यह स्वीकार करते हैं कि ईसाइयतके अतिरिक्त शेष सारे धर्म झूठे हैं। इस लिये हमें केवल अपनी ईसाइयतकी ही परीक्षा करनी चाहिये।

क्या ईसाइयतने कुछ भी भला किया है ? क्या इसने आदमियोंको अधिक अच्छा, अधिक ईमानदार बनाया है ? जब ईसाइयत अधिकारारूढ़ थी उस समय क्या आदमी अधिक अच्छे और अधिक सुखी थे ?

इटली, स्पेन, पुर्तगाल और आयरलैण्डमें ईसाइयतका क्या परिणाम हुआ है ?

हंगरी अथवा आस्ट्रियाके लिये ही मज़हबने क्या किया है ? स्विट्ज़रलैण्ड इंग्लैण्ड और अमरिकामें ही ईसाइयतका क्या परिणाम हुआ है ? हमें ईमानदार होना चाहिये। यदि मज़हब न होता तो क्या इन देशोंकी दशा और भी ख़राब हो सकती थी ? यदि ईसाइयतके अतिरिक्त और कोई मज़हब होता तो भी क्या इन देशोंकी दशा और ख़राब हो सकती थी ?

कालविन यदि दक्षिण समुद्रके द्वीपके लोगोंके मज़हबको मानता होता तो क्या वह इससे भी अधिक रक्त-पिपासु हो सकता था ? डच लोग यदि पिता, पुत्र और पवित्र-आत्माके त्रैतवादमें विश्वास न करके मांसके शोरबे, शराब और पनीरके त्रैतवादमें विश्वास करते तो क्या वे अधिक बुद्धू होते ? यदि जॉन नाक्सने ईसाका परित्याग कर दिया होता और वह कान्फ्युशसका अनुयायी हो गया होता, तो क्या वह इससे भी अधिक ख़राब होता ?

अपने प्रिय, दयालु, पवित्रताभिमानी पूर्वजोंकी बात लो। ईसाइयतने उनके लिये क्या किया ? वे सुखसे घृणा करते थे। उन्होंने जीवनके द्वारपर मृत्युकी मूर्ति लटका रक्खी थी।

पवित्रताभिमानीका मज़हब शुद्ध अभिशाप था। पवित्रताभिमानीका विश्वास था कि बाइबल भगवद्वचन है; और जिस किसीका कभी यह विश्वास रहा है वह सदैव अत्याचारी और दुष्ट हुआ है। यदि इन पवित्रताभिमानियोंने उत्तरी अमरीकाके इण्डियन लोगोंका मज़हब अपना लिया होता, तो क्या इनकी हालत इससे और अधिक ख़राब होती?

बाइबलमें विश्वास रखनेका लोगोंपर क्या प्रभाव पड़ता है, उसका एक ही उदाहरण सुनिये —

महारानी एलिज़ाबेथके सिंहासनारूढ़ होनेके दिन उसे एक वृद्ध आदमीके द्वारा एक बाइबल भेंट की गई। महारानीने बाइबल ली। उसे चूमा और प्रतिज्ञा की कि वह उसे ध्यानपूर्वक पढ़ेगी। उस बाइबलके समर्पणमें उससे प्रार्थना की गई थी कि वह तमाम रोमन कैथलिकोंको तलवारके घाट उतार दे।

इस घटनामें हमें बाइबलके प्रोटैस्टैण्ट-प्रेमियोंकी यथार्थ भावनाके दर्शन होते हैं। दूसरे शब्दोंमें वह वैसी ही शैतानी और पाप-पूर्ण थी जैसी कैथालिकोंकी भावना।

क्या बाइबलने जार्जियाके लोगोंको दयालु तथा करुणामय बनाया? दूसरोंको जीवित जला देनेवाले लोग यदि लकड़ी और पत्थरके देवताओंके पूजनेवाले होते तो क्या वे इससे कुछ अधिक भयानक होते?

५

बिना मज़हबके मानव-जाति कैसे सुधर सकती है?

मज़हबकी परीक्षा हो चुकी। यह सभी देशोंमें, सभी जातियोंमें और हर समय असफल रहा है।

मज़हबने आदमीको कभी दयालु नहीं बनाया।

मज़हबका दास-प्रथापर क्या प्रभाव पड़ा?

मज़हब सदैव विज्ञान, खोज और विचारका शत्रु रहा है।

मज़हबने आदमीको कभी स्वतन्त्र नहीं बनाया।

इसने कभी आदमीको नैतिक नहीं बनाया, संयमी नहीं बनाया, परिश्रमशील नहीं बनाया, ईमानदार नहीं बनाया।

क्या ईसाई लोग असभ्य लोगोंकी अपेक्षा अधिक संयमी, अधिक नैतिक तथा अधिक ईमानदार हैं ?

और क्या हम यह नहीं देखते कि असभ्य लोगोंमें जो दुर्गुण देखे जाते हैं, जो निर्दयतापूर्ण कृत्य देखे जाते हैं, वे सब उनके मिथ्या-विश्वासोंके परिणाम हैं ?

जो लोग प्रकृतिकी एकरूपतामें विश्वास करते हैं उनके लिये मज़हब असम्भव है।

क्या हम प्रकृति और भिन्न भिन्न पदार्थोंके गुणोंमें प्रार्थनाद्वारा कोई परिवर्तन ला सकते हैं ? क्या हम पूजाद्वारा समुद्रकी लहरोंको समयसे पूर्व बुला सकते हैं अथवा उन्हें देरसे आनेके लिये मजबूर कर सकते हैं ? क्या हम बलिदानोंद्वारा हवाओंकी दिशा बदल दे सकते हैं ? क्या घुटने टेकनेसे हम धनी हो जायेंगे ? क्या नम्रतापूर्वक प्रार्थना करनेसे हमारा रोग भाग सकता है ? क्या हम भिन्न भिन्न संस्कारोंद्वारा अपने ज्ञानमें वृद्धि कर सकते हैं ? क्या हमें गुण या सम्मान दानमें मिल सकते हैं ?

क्या मानसिक संसारकी बातें भी उतनी ही ठोस और वैसे ही उत्पन्न नहीं होतीं जैसे भौतिक संसारकी बातें ? क्या जिसे हम दिमाग़ कहते हैं वह वैसा ही प्राकृतिक नहीं है, जैसा कि जिसे हम शरीर कहते हैं ?

मज़हबका आधार यह विचार है कि प्रकृतिका एक स्वामी है। यह स्वामी प्रार्थनायें सुनता है। यह स्वामी दण्ड देता है और पुरस्कृत करता है। उसे स्तुति और खुशामद अच्छी लगती है। वह बहादुर और स्वतन्त्र प्रकृतिवालोंसे घृणा करता है।

क्या आदमीको भगवानसे कभी कोई सहायता मिलती है ?

६

यदि हमारा कोई सिद्धान्त है, तो उसका कुछ आधार होना चाहिये। हमारे पास चारों कोनोंपर रखनेके लिये चार पत्थर होने चाहिये। हमें अनुमानों,

कल्पनाओं और उपमाओंको लेकर भवन नहीं खड़ा करना चाहिये। भवनकी नींव होनी चाहिये। यदि हमें निर्माण करना है तो वह निराधार नहीं होना चाहिये।

मेरा एक सिद्धान्त है, और उसके चारों कोनोंपर रखनेके लिये मेरे पास चार पत्थर हैं।

पहला शिला-न्यास है कि पदार्थ—रूप—नष्ट नहीं हो सकता, अभावको प्राप्त नहीं हो सकता।

दूसरा शिला-न्यास है कि गति—शक्ति—का विनाश नहीं हो सकता, वह अभावको प्राप्त नहीं हो सकती।

तीसरा शिला-न्यास है कि पदार्थ और गति पृथक् पृथक् नहीं रह सकती— बिना 'गति' के पदार्थ नहीं और बिना 'पदार्थ' के गति नहीं।

चौथा शिला-न्यास है कि जिसका नाश नहीं वह कभी पैदा भी नहीं हुआ होगा; जो अविनाशी है वह अनुत्पन्न है।

यदि ये चारों बातें यथार्थ हैं तो उनका यह परिणाम अवश्य निकलता है कि पदार्थ और गति सदासे हैं और सदा रहेंगे। वे न बढ़ सकते हैं और न घट सकते हैं।

इससे यह भी परिणाम निकलता है कि न कोई चीज़ कभी उत्पन्न हुई है और न उत्पन्न हो सकती है; और न कभी कोई रचयिता हुआ है और न हो सकता है।

इससे यह भी परिणाम निकलता है कि पदार्थ और गतिके पीछे न कोई योजना हो सकती थी और न कोई बुद्धि।

बिना गतिके बुद्धि नहीं हो सकती। बिना पदार्थके गति नहीं हो सकती। इस लिये पदार्थसे पहले किसी भी तरह किसी बुद्धिकी, किसी गतिकी सम्भावना हो ही नहीं सकती।

इससे यह परिणाम निकलता है कि प्रकृतिसे परे न कुछ है और न हो सकता है। यदि ये चारों शिला-न्यास यथार्थ बातें हैं तो प्रकृतिका कोई स्वामी नहीं। यदि पदार्थ और गति अनादि कालसे अनन्त काल तक हैं तो यह अनिवार्य परिणाम निकलता है कि कोई परमात्मा नहीं है।

न किसी परमात्माने विश्वको रचा और न कोई इसपर शासन करता है। ऐसा कोई परमात्मा नहीं है जो प्रार्थनायें सुनता हो। दूसरे शब्दोंमें इससे यह सिद्ध होता है कि आदमीको भगवानसे कभी कोई सहायता नहीं मिली, तमाम प्रार्थनायें अनन्त आकाशमें यों ही विलीन हो गईं। मैं जानकार होनेका दावा नहीं करता। मैं वही कहता हूँ जो सोचता हूँ।

यदि पदार्थ और गति सदासे चली आई है तो इसका यह मतलब है कि जो सम्भव था वह हुआ है, जो सम्भव है वह हो रहा है और जो सम्भव होगा वही होगा।

विश्वमें कोई भी बात यों ही अचानक नहीं होती। हर घटना जनित होती है।

जो नहीं हुआ है, वह हो ही नहीं सकता था। वर्तमान तमाम भूतका अवश्यम्भावी परिणाम है और भविष्यका अवश्य-भावी कारण।

इस अनन्त शृङ्खलामें न कोई टूटी कड़ी है और न हो ही सकती है। हर तारेका स्वरूप और गति, सभी लोकोंका जल-वायु, तमाम वनस्पति, तमाम पशु-जीवन, तमाम सूझ-समझ और अन्तरात्मा, तमाम स्वीकृतियाँ तथा अस्वीकृतियाँ, तमाम पाप और पुण्य, तमाम विचार और स्वप्न तथा तमाम आशायें और भय—सभी कुछ अवश्यम्भावी हैं। विश्वमें इन असंख्य चीज़ोंमेंसे कोई एक भी जैसे घटी हैं उससे भिन्न नहीं हो सकती थीं।

७

यदि पदार्थ और गति सदासे हैं तो हम कह सकते हैं कि आदमीका कभी कोई चैतन्य रचयिता नहीं हुआ है, आदमी किसीकी विशेष रचना नहीं है।

यदि हम कुछ जानते हैं, तो यह जानते हैं कि उस दैवी कुम्हारने, उस ब्रह्माने कभी मिट्टी और पानी मिलाकर पुरुषों तथा स्त्रियोंकी रचना नहीं की और उनमें कभी जान नहीं फूँकी।

हम अब जानते हैं कि हमारे प्रथम माता-पिता किसी दूसरे लोकसे नहीं आये थे। हम जानते है कि वे इसी संसारके प्राणी थे, यहीं उत्पन्न हुए, और उनका जीवन किसी देवताकी साँससे नहीं फूँका गया था। यदि हम कुछ

जानते हैं, तो यह जानते हैं कि विश्व प्राकृतिक है, और पुरुषों तथा स्त्रियोंकी उत्पत्ति प्राकृतिक ढंगसे हुई है। अब हम अपने पूर्वजोंको जानते हैं, अपनी वंश-परम्पराको। हमारे पास अपनी वंशावली है।

हमारे पास ज़ंजीरकी सभी कड़ियाँ हैं, छब्बीस कड़ियाँ, आरम्भसे आदमी बनने तक।

हमें यह जानकरी इलहामी-किताबोंसे नहीं मिली है। हमारे पास पौधों तथा पशुओंके जड़ी-भूत रूप हैं और जीवित संस्थान।

सरलतम प्राणीसे, एक अन्धी वेदनासे, एक संस्थानसे, एक धुँधली इच्छासे, एक केन्द्रस्थित पेशी, उससे तरल पदार्थसे भरी एक खोखली गेंद, उससे दो दीवारोंवाली एक कटोरी, उससे एक कीड़ा, उससे कुछ चीज़ जो साँस लेना आरम्भ करती है, उससे एक सुषुम्नाकाण्डयुक्त संस्थान; उससे एक ऐसी कड़ी जो अमेरुदण्ड और मेरुदण्डयुक्तमें सम्बन्ध जोड़ती है, उससे खोपड़ी-युक्तको—जिसमें दिमाग़के लिये घर है—उससे मछलीकेसे हाथोंवालेको; उससे और आगे मछलीकेसे अगले और पिछले हाथोंवालेको; उससे रेंगनेवाले स्तनपोषी; उससे थैलीवाले जन्तु; उससे लीमरवंशी, वृक्षोंपर रहनेवाले; उससे वनमानुष; उससे वन-मानुषसे भी और आगेकी अवस्था और अन्तमें आदमी।

हम जानते हैं किन रास्तोंपर होकर जीवन यहाँ तक पहुँचा है। हम प्रगतिके पद-चिह्नोंसे परिचित हैं। उनका पता लगा लिया गया है। अंतिम कड़ी जान ली गई है। इसके लिये हम और सभी दूसरोंकी अपेक्षा सबसे बड़े जीव-शास्त्रज्ञ एरनस्ट हैकलके कृतज्ञ हैं।

अब हम विश्वास करते हैं कि विश्व प्राकृतिक है, और हम परा-प्राकृतिकके अस्तित्वसे इनकार करते हैं।

८

सुधार

हज़ारों वर्षोंसे आदमी संसारका सुधार करनेके प्रयत्नमें लगे हुए हैं। उन्होंने देवता बनाये, शैतान बनाये, स्वर्ग और नरक बनाये, पवित्र धर्म-ग्रन्थ

लिखे, चमत्कार दिखाये, तथा मन्दिर और जेलख़ाने बनाये। उन्होंने राजाओं और रानियोंके सिरपर ताज रखे और उतारे। उन्होंने लोगोंको यन्त्रणायें दीं और जेलोंमें डाल कर रखा। उन्होंने लोगोंकी चमड़ी उतारी और उन्हें जीता जलाया। उन्होंने उपदेश दिये और प्रार्थनायें कीं। उन्होंने लालच दिखाये और धमकियाँ दीं। इस प्रकार असंख्य तरीकोंसे उन्होंने लोगोंको ईमानदार, संयमी, परिश्रमशील और सदाचारी बनानेका प्रयत्न किया। उन्होंने अस्पताल और विश्रामगृह बनाये, विश्वविद्यालय और स्कूल खोले, और ऐसा लगता है कि मानवताको श्रेष्ठ और सुखी बनानेका जितना अधिकसे अधिक प्रयत्न वे कर सकते थे उन्होंने किया। यह सब होनेपर भी वे सफल नहीं हुए।

ये सुधारक क्यों असफल रहे ? मैं इसका कारण बताता हूँ।

अज्ञान, दरिद्रता और दुराचार संसारमें वृद्धिपर हैं। गंदी-नालियाँ बच्चोंके प्रसूति-गृह हैं। ऐसे लोग जो अपना पालन-पोषण नहीं कर सकते वे घरोंको, झोंपड़ियोंको और गन्दे निवासस्थानोंको बच्चोंसे भर देते हैं। वे भगवान्, भाग्य और दानपर निर्भर रहते हैं। उनमें इतनी बुद्धि नहीं है कि वे परिणामपर विचार कर सकें अथवा अपनी जिम्मेदारीका अनुभव कर सकें। इसके साथ ही वे बच्चोंको चाहते भी नहीं हैं, क्यों कि एक एक बच्चा उनके और अपने दोनोंके लिये अभिशाप है। बच्चेका स्वागत नहीं है, क्योंकि वह भारस्वरूप है। ये अवाञ्छित बच्चे ही जेल जाते हैं, अस्पतालोंमें मरते हैं और फाँसीपर लटकते हैं। कुछ दान-दयाके कारण बच निकलते हैं, किन्तु अधिकांश तो असफल ही रहते हैं। वे दुराचारी और खून-खराबीसे जीविका चलाते हैं और अपनी सन्तानको अपनी विरासत दे जाते हैं।

दुराचारकी इस बाढ़के सामने सुधारकी शक्तियाँ असहाय हैं। दान स्वयं दुराचारका पोषक बन जाता है।

असफलता प्रकृतिका लक्षण मालूम देती है। क्यों ? प्रकृतिकी कहीं कोई योजना नहीं, प्रकृतिमें कोई विचार-सामर्थ्य नहीं। प्रकृति निरुद्देश्य पैदा करती है, विना किसी ख़ास मतलबके पालन करती है और बिना किसी विचारके नष्ट कर डालती है। आदमीमें कुछ बुद्धि है। उसे उसका उप-

योग करना चाहिये। बुद्धि ही एक ऐसा यंत्र है जो मानवताको ऊपर उठा सकता है।

वास्तविक प्रश्न यह है कि क्या हम जो अज्ञानी हैं, जो दरिद्र हैं, जो दुराचारी हैं उन्हें संसारमें अपने बच्चे पैदा करनेसे रोक सकते हैं ?

क्या संसारको सदा अंधी कामेच्छाका शिकार रहना पड़ेगा ? क्या संसार कभी इतना सभ्य हो जायगा कि सभी लोग परिणामकी चिन्ता करना सीख जायँ ?

जिन बच्चोंका पालन-पोषण नहीं हो सकता, जो बच्चे भार-स्वरूप हैं, जो अभिशाप हैं, उनके माता-पिता उन्हें जन्म ही क्यों देते हैं ? आखिर क्यों ? क्योंकि उनमें उतनी समझ नहीं है, जितनी कामेच्छा। बुद्धिकी अपेक्षा कामाग्नि अधिक है।

आप इन लोगोंको पुस्तिकाओं और व्याख्यानोंद्वारा नहीं सुधार सकते। आप इन लोगोंमें उपदेशोंद्वारा परिवर्तन नहीं ला सकते। कामाग्नि सदासे बहरी रही है और है। सुधारके ये हथियार एकदम बेकार हैं। अपराधी, आवारे, भिखमंगे और जीवनमें असफल लोग प्रति दिन वृद्धिपर हैं। मज़हब मुँह ताक रहा है। कानून दण्ड दे सकता है, किन्तु न वह अपराधियोंका सुधार कर सकता है और न अपराधोंको रोक सकता है। दुराचारकी लहर ज़ोरोंपर है। जिस प्रकार जुगनू रातके अन्धकारको दूर नहीं कर सकते उसी प्रकार बुराइयोंके विरुद्ध लड़ी जानेवाली यह लड़ाई भी व्यर्थ है।

एक ही आशा है। अज्ञान, दरिद्रता और दुराचारको संसार-वृद्धिके कामसे विरत रहना है। यह नैतिक उपदेशोंसे नहीं हो सकता। यह दूसरोंके सामने उदाहरण उपस्थित करनेसे भी नहीं हो सकता। यह न धर्मसे हो सकता है, न क़ानूनसे हो सकता है। न पुरोहित कर सकता है और न फाँसीपर लटका देनेवाला ही कर सकता है। यह ज़ोर लगानेसे नहीं हो सकता—भले ही शारीरिक हो, भले ही नैतिक हो।

इसका केवल एक ही रास्ता है। विज्ञान स्त्रीको अपना स्वामी बना दे, अपने शरीरकी मालिक। एकमात्र विज्ञानहीसे मानव मुक्तिकी आशा लगा

सकता है। विज्ञान स्त्रीको इस बातका निर्णायक बना दे कि वह माता बनेगी अथवा नहीं ?

यही सारी समस्याका हल है। यह स्त्रीको मुक्त करता है। तब जो भी बच्चे पैदा होंगे उनका स्वागत होगा। उनको प्रसन्नतापूर्वक दोनों हाथोंसे छातीसे लगाया जायगा। वे घरोंको प्रकाश और आनन्दसे भर देंगे। ऐसे मर्द और औरतें, जिनका विश्वास है कि स्वतन्त्र आदमियोंकी अपेक्षा गुलाम अधिक पवित्र तथा सच्चे होते हैं; ज्ञानकी अपेक्षा भयको अपना मार्ग-दर्शक बनाना श्रेयस्कर है; जो दूसरोंकी आज्ञाओंका पालन करते हैं वे ही एक मात्र अच्छे हैं; अज्ञानकी भूमिमें ही सदाचारका फूल खिलता है; लज्जाके मारे दोनों हाथोंसे अपना मुँह ढँक लेंगे।

ऐसे स्त्री-पुरुष, जो प्रकाशको शीलका शत्रु समझते हैं, जिनकी समझमें पवित्रता अन्धकारमें रहती है, जिनके विचारके अनुसार अपने आपको तथा प्रकृतिकी उन बातोंको जानना जिनपर उनका कल्याण निर्भर करता है खतरनाक है, वे यह देख कर डर जायेंगे कि कामेच्छाको बुद्धिके अधीन किया जा रहा है।

लेकिन मैं उस समयकी ओर देख रहा हूँ जब परिणामोंका विचार कर स्त्री-पुरुष ज्ञान-जनित सदाचारकी भावनाके कारण रोग और दुःख-दर्दकी वृद्धि करनेसे इनकार कर देंगे और संसारको जीवनमें असफल होने-वाले बच्चोंसे भरनेसे बाज़ आयेंगे।

जब वह समय आयेगा तो जेलखानोंकी दीवारें गिर जायेंगी, कारागारोंकी अन्धेरी कोठरियोंमें प्रकाश पहुँच जायगा और पृथ्वीसे फाँसीके तख्तेकी छायाका अभिशाप उठ जायगा। दरिद्र और अपराधी निस्संतान रहेंगे। अभाव भीखके लिये हाथ पसारता हुआ नहीं दिखाई देगा। सारा संसार समझदार, सदाचारी और स्वतंत्र हो जायगा।

९

मज़हब कभी मानवताका सुधार नहीं कर सकता; क्योंकि मज़हब तो दासता है।

स्वतन्त्र होना, भयकी चार-दीवारीसे बाहर आना, सीधे खड़े होना और भविष्यकी ओर मुस्कराहटके साथ देखना कहीं अच्छा है।

कभी कभी अपनेको लापरवाह बने रहने देना, संसारकी अन्धी शक्ति और लहरोंके साथ बहने देना, सोचना और स्वप्न लेते रहना, जीवनके बन्धनों और मर्य्यादाओंको भूल जाना, लक्ष्य और उद्देश्यको भूल जाना, मानसिक चित्रोंके कला-भवनमें घूमते रहना, अतीतके थपेड़ों और चुम्बनोंका नये सिरेसे अनुभव करना, जीवनके उषा-कालकी यादको ताजा कर लेना, जो संसारसे विदा हो गये उनके चेहरों और आकार-प्रकारको फिर स्मृतिकी आँखोंसे देखना, भविष्यके सुन्दर सुन्दर चित्र बनाना, तमाम देवताओंको और उनसे लगाई हुई आशाओं तथा उनकी धमकियोंको भूल जाना, अपनी नसोंमें जीवनके लहलहाते स्रोतका अनुभव करना और अपने भय-मुक्त हृदयके सैनिक वाद्य तथा ताल-सुरयुक्त धड़कनोंको सुनना बहुत अच्छा है।

और तब एक बारगी ही तमाम उपयोगी काम करनेके लिये उठ खड़े होना, विचार और कार्यसे अपने आदर्श तक पहुँचनेका प्रयत्न करना, अपनी कल्पनाओंको साकार बनानेका प्रयत्न करना, सधी हुई आँखोंसे लगातार यथार्थ बातोंकी खोज करनेका प्रयत्न करना, भूतको वर्तमानसे जोड़नेवाले सूक्ष्म धागोंका पता लगाना, ज्ञानमें वृद्धि करना, निर्बलोंके कन्धोंसे उनका भार ले लेना, दिमाग़को विकसित करना, सच्चोंका पक्ष ग्रहण करना और अपने अन्तरात्माके लिये एक महल बनाना।

यही सच्चा मज़हब है। यही सच्ची पूजा है।